

ਹੰਡਿਥਾਨ

Business

ਕੁਮੈਨ



ਸੁਸਨ ਵਾਜਪੇਹੀ

इंडियन Business पूर्मान



सुमन बाजपेयी

इंडियन BUSINESS वूमेन

सुमन वाजपेयी

विद्या विहार, नई दिल्ली

मेरी यह पुस्तक समर्पित है उस जुङ्गारू नारी शक्ति को, जिसने अपनी दृढ़ता से कुछ करने की ठानी और अनेक सफलताएँ पाती चली गईं। ऐसी सभी महिलाओं की हर पीढ़ी को मेरा सलाम।

विषय-क्रम

प्रस्तावना

1. अखिला श्रीनावसन
2. अनु आगा
3. डॉ. अमृता पटेल
4. इंदिरा नूर्द
5. इंदु जैन
6. एकता कपूर
7. कल्पना मोरपारिया
8. किरण मजूमदार शॉ
9. चंदा कोचर
10. जरीना मेहता
11. जिया मोदी
12. ज्योति नाइक
13. तर्जनी वकील
14. नीलम धवन
15. नैना लाल किंदवई
16. पिया सिंह
17. प्रिया पॉल
18. प्रीथा रेहडी
19. फालगुनी नायर

20. मल्लिका श्रीनिवासन
21. मीरा सान्याल
22. मेहर पझजी
23. रंजना कुमार
24. राजश्री पैथी
25. रितु कुमार
26. रेणुका रामनाथ
27. रेणु सूद कर्नाड
28. ललिता डी. गुप्ते
29. वंदना लूथरा
30. विनीता बाली
31. डॉ. शिखा शर्मा
32. शिखा शर्मा
33. शोभना भरतिया
34. सिमोन टाटा
35. सुधा नारायण मूर्ति
36. सुलज्जा फिरोदिया मोटवाणी
37. स्वाति पिरामल

भविष्य की 20 Business वूमैन

प्रस्तावना



भा रत का कोना-कोना महिलाओं की सफलता की कहानियों से भरा पड़ा है।

चाहे ये कहानियाँ आजादी की लड़ाई में हिस्सा लेकर इतिहास में दर्ज हुई हों या फिर बीसवीं सदी की उन महिलाओं की हों, जिन्होंने न सिर्फ अपनी आर्थिक आजादी पाई है, बल्कि यह भी साबित कर दिया है कि वे भी हर स्थिति का सामना करने के लिए तैयार हैं, चाहे वह किसी कंपनी की सी.ई.ओ. बनकर हो या मैनेजिंग डायरेक्टर या फिर घर और कार्यक्षेत्र के बीच संतुलन करने में हो, वे आज पूर्णतया तैयार हैं।

ये वे महिलाएँ हैं, जो भीड़ से अलग अपने-अपने क्षेत्रों में एक विशिष्ट पहचान बना अपनी उपलब्धियों का ऐसा परचम लहरा रही हैं, जो आनेवाली पीढ़ी को न केवल प्रेरणा देता है, बल्कि वर्तमान पीढ़ी के लिए गर्व की बात भी है। ये शिखर पर पहुँची महिलाएँ मेहनती और सहनशील तो हैं ही, साथ ही चुनौतियाँ उठाने को भी हमेशा तत्पर रहती हैं। अपने कठिन परिश्रम और कटिबद्धता की वजह से वे प्रतियोगिता की पैनी धार पर चलकर कामयाबी के शिखर पर पहुँचने में सफल हो पाई हैं।

जटिल-से-जटिल चीजों की क्षमता, समस्यायों को सुलझाने की खुली व स्पष्ट शैली, काम के दौरान पारदर्शिता, नेतृत्व करने का गुण, अर्थशास्त्र की गुथियों को सुलझाने की योग्यता, वैज्ञानिक अनुसंधान एवं गणित के समीकरणों को नए सिरे से परिभाषित करने की काबिलियत और किस तरह से हार-जीत का सामना शालीनता व सहनशीलता से किया जा सकता है, इसकी समझ ही महिला उद्यमियों की उपस्थिति न केवल राष्ट्रीय बल्कि अंतरराष्ट्रीय फलक पर भी दर्ज कराती है।

एक सर्वेक्षण से यह बात सामने आई है कि दुनिया के अन्य किसी भी हिस्से की तुलना में भारतीय महिला उद्यमी ज्यादा धन अर्जित कर रही हैं। सबसे खास बात तो यह है कि धन के माध्यम से कभी भी उन्होंने अपने लक्ष्यों या पहचान को परिभाषित नहीं किया है, बल्कि इन महिलाओं ने काम में अपने जीवन के उद्देश्य को ढूँढ़ा है।

ग्लास सीलिंग टूटकर बिखर चुकी है और महिलाएँ आज बिजनेस के हर क्षेत्र में, फिर चाहे पापड़ हो या पावर केबल्स, अपनी काबिलियत के परचम लहरा चुकी हैं। वे क्षेत्र जिन पर

आज तक केवल पुरुषों का आधिपत्य था या माना जाता था कि महिलाएँ उन क्षेत्रों में काम करने के योग्य नहीं हैं, वहाँ भी अपनी योग्यता व सक्षमता का परिचय दे, महिलाओं ने ग्लास सीलिंग को तोड़ यह साबित कर दिया है कि वे चाहें तो कुछ भी काम कर सकती हैं। वे चाहें तो किसी भी तरह की चुनौती या कठिनाइयों का सामना कर सकती हैं।

डिजिटल युग की महिलाओं को जो चुनौतियाँ व अवसर प्रदान किए गए हैं, वे इतनी तेजी से बढ़ रहे हैं कि आज नौकरी ढूँढ़नेवाले नौकरी देनेवाले बन रहे हैं। ये महिलाएँ फैशन डिजाइनर, इंटीरियर डेकोरेटर, नियांतक, प्रकाशक, कपड़ा निर्माता तो बन ही रही हैं, साथ ही आई.टी. सेक्टर में भी अपनी जगह बना चुकी हैं। देशी-विदेशी कंपनियों की सी.ई.ओ. और मैनेजिंग डायरेक्टर बनने का गौरव हासिल कर चुकी ये महिलाएँ देश की आर्थिक प्रगति में सहयोग देने के लिए निरंतर नए क्षेत्रों की तलाश कर रही हैं।

उद्यम जगत् में अपना वर्चस्व कायम कर चुकी कुछ महिलाओं की निजी व प्रोफेशनल जिंदगी में हमने इस किताब के माध्यम से झाँकने की कोशिश की है। उन महिलाओं का जीवन, सोच और मेहनत किसी बहुत बड़े प्रेरणास्रोत से कम नहीं है। उनके सामने आई चुनौतियाँ और उनका सामना करने के लिए धैर्य व सूझ-बूझ का परिचय किसी और महिला के जीवन को बदल सकता है।



अखिला श्रीनावसन



अर्थशास्त्र के गूढ़ तथ्यों की विश्लेषक

मैनेजिंग डायरेक्टर, श्रीराम लाइफ इंश्योरेंस, श्रीराम ग्रुप

“जीवन की वास्तविक चुनौतियों को पाए करने हुए आनेवाली विपत्तियों का सामना करने हुए अपने धीर्घ को बनाए रखना ही वास्तव में सफल होने की निशानी है। भौतिक सुख-सुविधाएँ सफलता का पैमाना नहीं होती हैं। हम समाज को कितना योगदान दे पा सकते हैं। समाज का जिसमें भला हो, ऐसे उच्चे लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सतत प्रयास जरूरी हैं; परं सफलता को पा हना अभिभूत नहीं हो जाना चाहिए कि फिर आगे बढ़ने की संभावनाएँ ही अवश्य हो जाएँ।”

पुरुषों के अधिकार-क्षेत्र में संचालित होनेवाली कंपनी में पहली महिला मैनेजिंग डायरेक्टर बनकर अखिला श्रीनावसन ने न सिर्फ अपनी काबिलियत का परचम लहराया,

वरन् यह भी दिखा दिया कि अगर सही दिशा में दृढ़ विश्वास व ईमानदारी के साथ कदम रखे जाएँ तो मंजिल तक पहुँचना असंभव नहीं होता है। सीढ़ी-दर-सीढ़ी चढ़ते हुए आज वे जिस मुकाम पर पहुँची हैं, उससे नई पीढ़ी के लिए एक आदर्श व मिसाल बन गई हैं।

बचपन से ही परफेक्शन को जीवन का मूलमंत्र माननेवाली आज 5,000 करोड़ के श्रीराम ग्रुप की श्रीराम लाइफ इंश्योरेंस कंपनी में मैनेजिंग डायरेक्टर के पद पर आसीन अखिला श्रीनावसन ने अपने सफर की शुरुआत सन् 1986 में एक मैनेजमेंट ट्रेनी की तरह की थी। लेकिन जब वह एक नन्ही बालिका थीं, तभी से यह बात जान गई थी कि किसी शॉर्टकट का सहारा न लेते हुए अगर सधे हुए कदमों से चला जाए तो कामयाबी निश्चित तौर पर मिलकर ही रहती है।

थामा दृढ़ता को

तिरुचिरापल्ली में जनमी 50 वर्षीया अखिला बचपन से ही हर काम को गंभीरता व लगन से करने में यकीन रखती थीं। चाहे पढ़ाई हो या खेल या अन्य गतिविधियाँ, उन्होंने हर जगह अपना सर्वोच्च स्थान बनाकर यह सिद्ध कर दिया कि अगर इनसान चाहे तो कुछ भी नामुमकिन नहीं है, बस हारने पर भी एक बार फिर से पहले से भी अधिक दृढ़ता के साथ आगे बढ़ने को तैयार हो जाना चाहिए। मध्यम वर्ग की सीधी-सादी जिंदगी जीनेवाली अखिला की सोच और जीवन पर उनकी माँ का गहरा प्रभाव पड़ा। वह कहती हैं, “एक साधारण सी गृहिणी होने के बावजूद मेरी माँ ने मुझे धैर्य की महत्ता का पाठ पढ़ाया। उन्होंने अपनी सारी आशाएँ व विश्वास मुझसे जोड़ ली थीं और इसी कोशिश में वह लगी रहती थीं कि मुझे हर चीज के बारे में सही जानकारी प्राप्त हो सके।” उनके पिता पी.डब्ल्यू.डी. में एजीक्यूटिव इंजीनियर के पद पर काम करते थे और वह विख्यात राजाजी, जो संस्कृत के महान् ज्ञाता थे, के समकालीन हाई कोर्ट के जज दीवान के.एस. रामास्वामी के पोते हैं।

त्रिची में ही उनकी आरंभिक शिक्षा हुई और माध्यमिक शिक्षा मद्रास में हुई। “दुबारा मैं अपनी हायर सेकेंडरी की शिक्षा के लिए त्रिची गई, जहाँ मैंने आर.एस.के. हायर सेकेंडरी स्कूल में प्रवेश लिया। उस जैसे प्रतिष्ठित स्कूल में पढ़ना मेरे लिए सौभाग्य की बात थी।” स्कूल में भी अर्थशास्त्र उनका प्रिय विषय था, जिसमें उन्होंने त्रिची के ही सीथालक्ष्मी रामास्वामी कॉलेज से ग्रेजुएशन व पोस्ट-ग्रेजुएशन किया और दोनों ही बार उन्होंने ‘बेस्ट स्टूडेंट अवार्ड’ जीता। पढ़ने की अदम्य लालसा उन्हें और कुछ करने को उकसाती रहती थी, इसलिए मद्रास यूनिवर्सिटी से उन्होंने अर्थशास्त्र में ही एम.फिल. की और फिर माइक्रो-क्रेडिट में पी-एच.डी.।

ऊँची उड़ान

यह सच है कि अधिकांश पारंपरिक तमिल ब्राह्मण लड़कियों की तरह अखिला ने यह नहीं सोचा था कि वह जटिल व उलझन भरी वित्त की दुनिया में न सिर्फ अपना कॅरियर बनाएँगी, वरन् वहाँ अपनी एक ऐसी जगह बना लेंगी कि देश-विदेश में उनके नाम का परचम लहराएगा। भारतीय प्रशासनिक सेवा (आई.ए.एस.) को जॉड्न करने का अखिला का सपना बचपन में ही उनकी आँखों में पलने लगा था; लेकिन कभी-कभी इच्छाओं की उड़ान को भी परिस्थितियों की वजह से बीच में ही रोक लगानी पड़ती है। जिस समय वह एम.ए. कर रही थीं, उसी दौरान उनका विवाह मद्रास में रहनेवाले एक चार्टर्ड एकाउंटेंट हरिहरन श्रीनावसन से हो गया। विवाह के बाद जीवन में बदलाव आना स्वाभाविक ही होता है और ऐसा अखिला के साथ भी हुआ। एम.फिल. करने के बाद उन्होंने एक पुत्र को जन्म दिया और लगातार ढाई वर्ष तक वह उसका पालन-पोषण करने के लिए घर में ही रहीं। पर माँ की भूमिका निभाते हुए भी वह आई.ए.एस. की आरंभिक परीक्षा की तैयारी करती रहीं।

बढ़ते दायित्वों के बीच जब उन्हें लगा कि इस तरह वह अपने बेटे पर पूरा ध्यान नहीं दे पा रही हैं, उन्होंने परीक्षा देने का विचार त्याग दिया। लेकिन वह यों ही निष्क्रिय बैठनेवालों में से नहीं थीं, इसलिए उन्होंने पी-एच.डी. करके अध्यापन को अपना प्रोफेशन बनाने का निर्णय लिया।

विवाह व पुत्र-जन्म के बाद जीवन अबाध गति से चल रहा था कि अचानक सन् 1986 में सुबह अखबार पढ़ते हुए अखिला की नजर एक अलग तरह के विज्ञापन पर पड़ी। वह विज्ञापन श्रीराम ग्रुप का था, जिन्होंने एग्जीक्यूटिव ट्रेनीज के लिए आवेदन-पत्रों की माँग की थी। अखिला हालाँकि अध्यापन को अपना प्रोफेशन बनाने का मन बना चुकी थीं, फिर भी उन्होंने कुछ अलग हटकर करने के ख्याल से अप्लाई कर दिया।

वह कहती हैं, “उन्हें ऐसे एग्जीक्यूटिव ट्रेनीज की तलाश थी जिनकी शैक्षिक पृष्ठभूमि अच्छी हो, अन्य गतिविधियों में अच्छा हो, बेशक वह एम.बी.ए. न हो। मैं न तो एम.बी.ए. थी, न ही चार्टर्ड एकाउंटेंट, जो इस तरह के कॉरपोरेट सेक्टर के लिए उपयुक्त मानी जाती। लेकिन फिर भी मैंने सोचा, अप्लाई करने में बुराई क्या है? हजारों आवेदनों में से चयन प्रक्रिया व लिखित परीक्षा, मौखिक साक्षात्कार व समूह विचार-विमर्श के द्वारा 12 लोगों का चयन किया गया था, जिसमें से एक मैं भी थी। उसके बाद तो मेरे कॅरियर की उड़ान को जैसे पंख ही लग गए।” उस समय ग्रुप में गिनी-चुनी ही महिला ट्रेनीज थीं, इसलिए अखिला का वहाँ काम करना किसी चुनौती से कम न था।

सीढ़ी-दर-सीढ़ी रखा कदम

उस ग्रुप के साथ जुड़ने पर उन्हें एहसास हुआ कि यह एक ऐसा संगठन है, जहाँ हर किसी को पर्याप्त अवसर दिए जाते हैं, जहाँ स्त्री-पुरुष में कोई अंतर नहीं किया जाता, जहाँ किसी की योग्यता के आधार पर उसके साथ व्यवहार किया जाता है और काबिलियत की खुले मन से प्रशंसा की जाती है। परफेक्शनिस्ट अखिला को अपने काम, चीजों को ग्रहण करने की क्षमता व काबिलियत को प्रूव करने में वहाँ अधिक समय नहीं लगा। वह यह समझ गई थीं कि यहीं वह जगह है जहाँ वह अपने सपनों को पूरा करने के साथ-साथ उपलब्धियों के शिखर को भी छू सकती हैं। सन् 1987 में मार्केटिंग मैनेजर बनने से उन्हें देश के कोने-कोने में जाने का अवसर मिला। उन्होंने अपने बेहतरीन वक्ता होने के गुण का इस्तेमाल कंपनी की कार्यशैलियों व नीतियों के बारे में लोगों को अवगत कराने के लिए किया। इससे कंपनी की छवि पर एक सकारात्मक प्रभाव पड़ा। उनकी मेहनत और जज्बा रंग लाया। सन् 1993 में उन्हें जनरल मैनेजर मार्केटिंग नियुक्त किया गया और सन् 1994 में प्रेसीडेंट। वर्ष 2000 में मैनेजिंग डायरेक्टर के पद पर उनका आसीन होना उनके सहयोगियों व कंपनी के अधिकारियों को कोई हैरानी में डालने की बात नहीं थी, क्योंकि सभी जानते थे कि अखिला में बेजोड़ क्षमताएँ हैं और वह इस पद की अधिकारिणी हैं। चेहरे पर भरपूर आत्मविश्वास, होंठों पर मुसकान और आँखों में चमक लिये अखिला ने उस समय कहा था, “कंपनी और समाज के विकास में योगदान देना मेरे लिए सबसे बड़ी संतुष्टि की बात है।”

एग्जीक्यूटिव ट्रेनी के रूप में नियुक्त होते समय बेशक अखिला ने यह नहीं सोचा होगा कि एक दिन वह इतने बड़े स्थान को हासिल कर लेंगी; पर वह यह जानती थीं कि काम चाहे जो हो, 100 प्रतिशत मेहनत के साथ करना चाहिए और तुरंत मिलनेवाले लाभ या प्रशंसा को अपना लक्ष्य कभी नहीं बनाना चाहिए। “केवल एक पहचान बनाने या कुछ कर दिखाने की खातिर अपने काम को नहीं करना चाहिए। श्रेष्ठता व उत्कृष्टता से संतुष्टि प्राप्त करने के लिए प्रयास व मेहनत करनी चाहिए।”

बना लिया लक्ष्य

उन्हें इस ग्रुप का वातावरण व कार्यशैली बहुत अधिक पसंद आई। सन् 1986 में बिजनेस के हिसाब से वह बहुत बड़ा नहीं था, पर उस समय उनके चेयरमैन ने इस तरह से उन लोगों के सामने आनेवाले दस-बीस वर्षों का खाका खींचा कि उनके मन में उस संगठन को एक विस्तृत आकार देने की बात और निष्ठा से उसके प्रति समर्पित होने की बात इस तरह बैठी कि फिर उन्होंने न पीछे मुड़कर देखा, न ही किसी और राह को अपनी मंजिल बनाने की बात सोची। सारा ध्यान संगठन के विकास पर केंद्रित हो गया। अखिला कहती हैं, “एक

तरह के आदर्शवाद की भावना दिल में बस गई थी। जब आपका ध्यान लक्ष्य की ओर केंद्रित हो जाता है तो बाकी चीजें अपने आप सम्मिलित हो जाती हैं। आप अपने कॅरियर, अपने पद में तरक्की पाते हैं, ये सब बातें आपके काम करने के तरीके पर निर्भर करती हैं। लक्ष्य निजी संतुष्टि पाना नहीं होना चाहिए। संगठन के विकास में मैं अपना योगदान कितने बेहतर ढंग से दे सकती हूँ, बस यही सोचा करती थी।”

अपनी कंपनी के वैश्विक होने के सपने को सच करते हुए अखिला ने श्रीराम इन्वेस्टमेंट लिमिटेड को एक छोटे से कॉर्पोरेट से एक विशाल साम्राज्य में बदल दिया है। लगातार तीन वर्षों तक उन्हें ‘बेस्ट एजीक्यूटिव’ की उपाधि से सुशोभित किया गया। जब सन् 1998-99 में भारत में आर्थिक संकट उभरा तो हर फाइनेंस कंपनी के बाहर पैसा डूब जाने की बात को लेकर परेशान लोगों की भीड़ जमा हो गई और इस संकटपूर्ण स्थिति में लोगों के विश्वास को बनाए रखते हुए बिजनेस को न सिर्फ सँभालना वरन् उसका विस्तार करना अखिला की प्रोफेशनल जिंदगी की सबसे बड़ी चुनौती थी; लेकिन जब निवेशकों ने अखिला का साथ दिया तो उन्हें भी एहसास हुआ कि कंपनी की नींव कितनी पुख्ता है, जो इस उथल-पुथल और अविश्वसनीयता के समय में भी हिल नहीं पाई।

किया विश्वव्यापी गठबंधन निर्मित

अखिला कंपनी की मार्केटिंग, पब्लिक रिलेशन और टीम-बिल्डिंग के पहलुओं को भी देखती हैं। कंपनी का विस्तार करने के लिए वह भारत के बाहर जाकर भी अन्य कंपनियों के साथ सहयोग स्थापित करने के अनवरत प्रयास करती रहती हैं। लगातार किए जानेवाले प्रयासों और भरोसा अर्जित करने के बाद वह विदेश की कंपनियों के साथ गठबंधन करने में सफल हो गई। वह अपने ग्रुप में एकमात्र ऐसी महिला एजीक्यूटिव हैं, जो अपनी कंपनियों के समूह के लिए विश्वव्यापी गठबंधन निर्मित करने में सफल हो पाई। इसमें मलेशिया का मेलावाड़ ग्रुप, सिंगापुर का सेमबावांग ग्रुप और दक्षिण अफ्रीका का सनलाम ग्रुप भी हैं।

चार साल पहले लाइफ इंश्योरेंस बिजनेस को सँभालना उनके लिए किसी चुनौती से कम नहीं था, क्योंकि बहुत देर में कंपनी के इस क्षेत्र में प्रवेश करने से उसे बहुत मजबूत प्रतिद्वंद्वियों का सामना करना पड़ा। वह कहती हैं कि एक नए बिजनेस को सँभालने की अपनी तरह की चुनौतियाँ होती हैं। फिर भी, पहले वर्ष में कंपनी 85,000 पॉलिसियाँ बेचकर 114 करोड़ का व्यवसाय करने में सफल हो गई।

समाज-सेवा करने का प्रण

कॉरपोरेट लोकोपकार व सामाजिक कार्यों में पूरी तरह से स्वयं को सम्मिलित करने की अखिला की इच्छा ने उन्हें सन् 1993 में श्रीराम सोशल वेलफेयर ट्रस्ट स्थापित करने के लिए प्रेरित किया। श्रीराम ग्रुप के मुनाफे का एक अंश जरूरतमंद औरतों व बच्चों पर खर्च किया जाता है। तब से अब तक औरतों व बच्चों के जीवन में सुधार लाने तथा उन्हें अधिकतम सुविधाएँ उपलब्ध कराने के लिए श्रीराम ग्रुप कॉरपोरेट सामाजिक दायित्व के एक अभिन्न अंग के रूप में अनगिनत कार्यक्रमों का आयोजन कर चुका है। उनका कहना है, “यह एक तरह का राष्ट्रीय आंदोलन है, जिसमें हम हमारी ऐसी सोच रखनेवाले कॉरपोरेट्स को साथ जोड़ने का प्रयास कर रहे हैं, ताकि बच्चों को शिक्षित कर उनके जीवन की एक पुख्ता नींव डाली जा सके।”

अखिला के दिशा-निर्देशन में फिलहाल कंपनी गाँवों में कई स्कूल चला रही है जिसका लक्ष्य गाँव के गरीब बच्चों को प्राथमिक शिक्षा दिलाना है। यह उन्हींकी कोशिशों का फल है कि आज गरीबी रेखा से नीचे की अनेक महिलाओं को सेल्फ हेल्प ग्रुप तंत्र स्थापित करने की प्रेरणा मिली है। वे औरतें न सिर्फ आज आर्थिक रूप से सक्षम हो गई हैं, बल्कि आत्मनिर्भरता ने उन्हें एक विश्वास से भर दिया है और इसी आत्मविश्वास ने उनकी जिंदगी को सकारात्मक रुख दे दिया है। अखिला को अपना आदर्श माननेवाली ये महिलाएँ उनके इस प्रयास को और गाँवों तक पहुँचाने के लिए कदम-से-कदम मिलाकर चलने को तत्पर हैं। अपनी स्पष्टवादिता से अपने सहयोगियों व अधिकारियों को अभिभूत करनेवाली अखिला जब गाँव-गाँव समाज-सेवा करने के अपने प्रण को लिये पहुँचती हैं तो उनकी कही बातों का पालन करने तथा विचारों को सुनने के लिए भीड़ उमड़ पड़ती है।

निष्पक्ष दृष्टिकोण

पुरुषों के क्षेत्र में पुरुषों के बीच रहकर काम करने में कभी महिला होना उनके आड़े नहीं आया, क्योंकि उन्हें लगता है कि औरत को इन सबसे ऊपर उठकर एक ‘व्यक्ति’ की तरह काम करना चाहिए। स्त्री और पुरुष तो केवल उस सोच की उपज हैं, जो समाज के कुछ लोगों ने अपने फायदे के लिए गढ़ी है। “मैं चाहती हूँ कि मुझे एक ‘व्यक्ति’ की तरह देखा जाए। काम करते समय मेरे दिमाग में यह बात नहीं रहती कि मैं एक औरत हूँ और न ही मेरी कंपनी में मुझे कभी इस बात का एहसास ही दिलाया गया है।”

अखिला की कामयाबी के पीछे कहीं-न-कहीं यहबात भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है कि उनकी एप्रोच पूर्णतया प्रोफेशनल है। उनके अधिकारियों व सहयोगियों के अनुसार, वह लोगों से व्यवहार करते समय बिलकुल निष्पक्ष रहती हैं। टीम को साथ लेकर काम करनेवाली अखिला उपयुक्त लोगों को नियुक्त कर उन्हें बढ़ावा देने की क्षमता रखती हैं।

अपने सहकर्मियों को काम करने की पूर्ण स्वतंत्रता देती हैं, ताकि उनकी रचनात्मकता निखरकर सामने आए। इस तरह समान अवसर प्रदान कर कंपनी के विकास में तो वह भरपूर योगदान देती ही हैं, साथ ही उनके साथ काम करनेवाले लोग भी उनका सहयोग पाकर पूरी ईमानदारी व प्रतिबद्धता से काम करने को तत्पर रहते हैं। वह हर किसी को परफेक्शन के साथ काम करने के लिए प्रेरित करती हैं और ऊँचे लक्ष्य व मानक निर्धारित करने के कारण उन्हें बड़ा सोचने और कामयाबी की बुलंदियों को छूने की ऊर्जा से भर देती हैं।

अगर कोई व्यक्ति अपने काम में पारंगत होने के साथ-साथ सहृदय, विनम्र और निजी स्वार्थ से ऊपर उठकर सोचनेवाला होता है तो उसके प्रोफेशनल स्तर पर भी ऐसे आत्मीय संबंध पनप जाते हैं, जो उसके ही नहीं, उसके साथ जुड़नेवाले व्यक्ति के व्यक्तित्व को भी एक गरिमा प्रदान करते हैं। अखिला का व्यक्तित्व गरिमामयी है, लेकिन उनमें अहंकार की भावना नहीं है। वह कामयाब हैं, पर सफल होने का दंभ उन्हें छूता तक नहीं है।

सामंजस्य करने में निपुण

अक्सर देखा व माना जाता है कि प्रोफेशनल स्तर पर परफेक्ट होनेवाली महिलाएँ जाने-अनजाने अपने पारिवारिक जीवन की उपेक्षा करने लगती हैं। वजह होती है दोनों के बीच ठीक ढंग से संतुलन न बना पाना या परिवार को कम समय दे पाना। पर अखिला एक पत्नी व माँ होने की भूमिका को भी उतने ही बेहतर ढंग से निभाती हैं, जितनी कि एक मैनेजिंग डायरेक्टर होने की। काम अगर उनके लिए महत्वपूर्ण है तो परिवार भी उतना ही महत्वपूर्ण है। अपने परिवार के प्रति समर्पित अखिला अपने निजी व प्रोफेशनल जीवन के बीच एक संतुलन कायम रखती हैं; लेकिन कामयाबी के शिखर को छूने के बावजूद आज भी उनका परिवार ही उनकी प्राथमिकता है। वह कहती हैं, “जब मैं दूर पर होती थी और बच्चे अगर बीमार पड़ जाते थे तो मैं दूर कैसिल कर बीच में ही लौट आती थीं। आज मुझे इस बात को लेकर कोई गिल्ट फीलिंग नहीं है कि मैंने अपने बच्चों की उपेक्षा की या उनकी परवारिश में कोई कमी रह गई। मुझे इस बात की तसल्ली है कि जब मेरे बच्चों को मेरी जरूरत थी तो मैं उनके पास थी। जरूरी नहीं है कि हर समय बच्चों के साथ रहा जाए; पर मैं ‘क्वालिटी टाइम’ में यकीन रखती हूँ। कुछ पल साथ रहकर भी उसे किस तरह बिताया गया, यह ज्यादा मायने रखता है।” अपने बेटा-बेटी दोनों बच्चों में उन्होंने संस्कार के साथ चीजों का सही ढंग से विश्लेषण करने की समझ भी रोपी है। अपने पति हरिहरन का उन्हें कदम-कदम पर सहयोग व मार्गदर्शन मिला। खुले विचारों और पत्नी के काम व सम्मान दोनों की कद्र करनेवाले उनके पति मानते हैं कि प्रत्येक औरत को अपनी योग्यताओं व क्षमताओं का इस्तेमाल अधिक-से-अधिक करने का अवसर मिलना चाहिए।

हैं एक आदर्श

एक औरत के लिए जितना अपनी बुद्धिमत्ता को रचनात्मक कार्यों में लगाना आवश्यक है उतना ही अनिवार्य है अपनी गरिमा व नारीत्व को कायम रखना, तभी सम्मान अर्जित किया जा सकता है। अखिला को आदर्श मानने के पीछे यह वजह बहुत अहम भूमिका निभाती है। ईश्वर पर अटूट आस्था रखनेवाली अखिला का कहना है, “जीवन की वास्तविक चुनौतियों को पार करते हुए आनेवाली विपत्तियों का सामना करते हुए अपने धीरज को बनाए रखना ही वास्तव में सफल होने की निशानी है। भौतिक सुख-सुविधाएँ सफलता का पैमाना नहीं होती हैं, व्यावसायिक व निजी सफलता इस बात से निर्धारित होती है कि हमारे साथ के लोगों के साथ किस तरह के संबंध हैं, हम समाज को कितना योगदान दे पा रहे हैं। समाज का जिसमें भला हो, ऐसे ऊँचे लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सतत प्रयास जरूरी हैं; पर सफलता को पाकर इतना अभिभूत नहीं हो जाना चाहिए कि फिर आगे बढ़ने की संभावनाएँ ही अवरुद्ध हो जाएँ।”

सम्मान

केवल काम करने में यकीन रखनेवाली अखिला बेशक मुख्यधारा से हटकर रहना पसंद करती हैं, किसी तरह के प्रचार से वह दूरी बनाए रखती हैं; पर सम्मान व पुरस्कार उनसे दूर नहीं रहते। समाज-कल्याण व ग्रामीण विकास के क्षेत्र में उनके असाधारण योगदान ने उन्हें कॉम्प्रेक कांटेस्ट में तीन पुरस्कार विजेताओं में से एक की श्रेणी में ला खड़ा किया, जिसमें 70 सर्वोत्तम कॉरपोरेट हस्तियों ने हिस्सा लिया था। सन् 1999 में एफ.आई.सी.सी.आई., दिल्ली के तत्त्वावधान में बिजनेस वर्ल्ड द्वारा स्थापित सोशल रेस्पोंसिवनेस अवार्ड का उन्हें विजेता घोषित किया गया। सन् 2000-01 में अखिला ने फिक्की लेडीज ऑर्गनाइजेशन द्वारा स्थापित आउटस्टैंडिंग वूमन प्रोफेशनल अवार्ड जीता, मई 2002 में उन्होंने दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित से अवार्ड प्राप्त किया।

अखिला का मानना है कि “ये अवार्ड कंपनी की प्रतिष्ठा बढ़ानेवाले तंत्र की तरह काम करते हैं। अपनी कंपनी की साख की वजह से ही मैं आज इस मुकाम तक पहुँच पाई हूँ। कोई भी अवार्ड, जो किसी की विशिष्टता या समाज में उसके योगदान की सराहना करता है, उसका महत्व बहुत ज्यादा होता है। यही नहीं, किसी भी क्षेत्र में मिलनेवाली सफलता या पहचान दूसरे लोगों को आगे बढ़ने तथा अपने काम के द्वारा पहचान बनाने की प्रेरणा देती है।”

बहुमुखी प्रतिभा

अर्थशास्त्र के गूढ़ तथ्यों का विश्लेषण व सामाजिक व्यवस्था में उन्हें किस तरह लागू किया जाना चाहिए, इसकी विवेचना करने के साथ-साथ अखिला सुर-ताल के रिद्ध से भी बखूबी परिचित हैं। शास्त्रीय संगीत में उनकी रुचि उनके जीवन के एक अन्य पहलू को उजागर करती है। अनेक संगीत प्रतियोगिताओं में पुरस्कार जीतने के अलावा वह स्वयं भी संगीत के अनगिनत कार्यक्रम प्रस्तुत कर चुकी हैं। अपनी बहुमुखी प्रतिभा के कारण ही स्कूल में उनकी गणना असाधारण छात्रा के रूप में होती थी।

कॉलेज के समय से वह सक्रिय रूप से वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में हिस्सा लिया करती थीं और उनकी यही विशेषता आज भी उनकी निष्पक्षता व व्यवहार-कुशलता से परिलक्षित होती है। उनका निष्पक्ष ढंग से हर चीज के बारे में निर्णय लेना, दूरदृष्टि तथा सीखने की इच्छा उन्हें विशिष्ट व्यक्तित्व प्रदान करती है। उनकी सफलता का मंत्र है टीम की शक्ति व विजेता टीम को निर्मित करने में यकीन रखना। लोगों को आगे बढ़ने का मौका देना उन्हें प्रेरित करता है।

शालीन व्यक्तित्व की स्वामिनी अखिला फिटनेस के प्रति भी बहुत सर्वक हैं। वह एक्सरसाइज करने के साथ-साथ योगा व मेडिटेशन भी करती हैं। आर्ट ऑफ लिविंग का कोर्स भी उन्होंने किया है। शास्त्रीय संगीत सुनने और दक्षिण भारतीय भोजन को पसंद करनेवाली अखिला एक बेहतरीन कुक भी हैं और पायसम की अलग-अलग किस्में बहुत शौक से बनाती हैं। उनके निजी संग्रह में पारंपरिक कलात्मक वस्तुएँ व चित्र मिल जाएँगे।



अनु आगा



चुनौतियों को परास्त करने का जज्बा

पूर्व चेयरपर्सन, थर्मेक्स

“अपनी निजी शुश्चियों की कीमत पर सफलता पाना अर्थहीन है। सही संतुलन पाना बहुत आवश्यक है।”

“**अ**पनी निजी जिंदगी में मन के बहुत ही भीतरी हिस्सों तक मैंने मृत्यु को इतने करीब से जान लिया है कि आज मैं मृत्यु का सामना बहुत धैर्य से कर सकती हूँ।” इस एक पूरे वाक्य में सिमटा हुआ है थर्मेक्स की पूर्व चेयरपर्सन ‘अर्नवाज’, अनु आगा का जीवन-दर्शन। एक निश्चिंत और सुखद जीवन जीते-जीते जब राह पथरीली और कँटीली हो जाए तो मन यकायक उलझने लगता है कि वह कहाँ जाएँ, क्या करें हर तरफ अँधेरा छाने लगे तो रोशनी की क्षीण सी किरण के लिए छटपटाता मन व्याकुल हो कई बार ऐसे मार्ग पर कदम रख देता है, जो भटकाव की राह पर ले जाता है। ऐसे में केवल एक ही चीज काम आती है और वह होती है इनसान की हिम्मत, पथरीले-कँटीले रास्तों को सुगम बना पार करने की हिम्मत।

अनु आगा इसी हिम्मत की मिसाल हैं, जिसकी वजह से आज उनका नाम भारत की ऐसी महिला उद्यमियों की तरह लिया जाता है, जो चुनौतियों को परास्त कर निरंतर आगे बढ़ती गई और आज भी उनके प्रयास थमे नहीं हैं। वह आज भी निरंतर किसी-न-किसी काम में जुटी रहती हैं।

3 अगस्त, 1942 को उच्च-मध्यम वर्गीय पारसी परिवार में बंबई में जन्मी अनु ने सेंट जेवियर कॉलेज से इकोनॉमिक्स में ग्रेजुएशन करने के बाद टाटा इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल साइंस से सोशल वर्क में पोस्ट ग्रेजुएशन किया। अमेरिका में 4 महीने के लिए सोशल वर्क्स का अध्ययन करने के लिए उन्हें फुलब्राइट स्कॉलरशिप के लिए चयनित किया गया।

नियति का खेल

देश की विश्व-विख्यात एनर्जी, एनवायरमेंटल इक्यूपमेंट्स (ऊर्जा व पर्यावरणीय उपकरण) एवं सॉल्यूशन कंपनी थर्मेक्स की पूर्व चेयरपर्सन अनु आगा ने संघर्षों को चुनौती देकर यह सिद्ध कर दिया कि किसी भी काम को महिला या पुरुष होने के आधार पर वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है, कि कामयाबी महिला या पुरुष होने के आधार पर नहीं मिलती है। कामयाब होने के लिए तो केवल सहनशीलता, मुश्किलों से लड़ने और आत्मविश्वास की आवश्यकता होती है, फिर धारा अपने आप ही आपके बनाए रास्तों की ओर मुड़ जाती है। उनके पिता श्री बाथेना ने बॉयलर्स बेचने व बनाने के लिए ‘वानसन’ नामक कंपनी की शुरुआत की थी और जब अनु ने रोहिंटन आगा से विवाह किया तो श्री बाथेना ने अपने दामाद के हाथों में उस कंपनी की बागडोर दे दी, जिसे रोहिंटन ने नया नाम दिया—थर्मेक्स।

अनु आगा ने अपने पति रोहिंटन धनजी शा आगा के साथ एक खुशनुमा जिंदगी की शुरुआत की थी और अपने दो प्यारे बच्चों—मेहर और कुरुष—को जन्म दिया था। रोहिंटन थर्मेक्स में अपने पारिवारिक व्यवसाय को सँभालते थे और वह पिता और पति की कंपनी से जुड़ने के बजाय घर-परिवार के उत्तरदायित्वों को निभाने में आनंदित थीं; पर सन् 1982 में उनके पति को हार्ट अटैक आया और वह पति का साथ देने के लिए कंपनी के मानव संसाधन विभाग में बतौर एग्जीक्यूटिव कार्य करने लगीं। वह अपनी इस जिंदगी में खुश थीं और कुछ अधिक पाने की चाह उन्हें थी भी नहीं। पर शायद नियति इनसान की चाहत से नहीं, अपने हिसाब से उसे चलाना चाहती है।

अचानक उनकी जिंदगी में बदलाव आ गया, जिसने उनकी दिशा और दशा ही बदल दी। अपनी कोमलता पर उन्हें जमीनी हकीकत की कठोरता का आवरण चढ़ाना पड़ा और घर की देहरी को पार कर ऐसे क्षेत्र में कदम रखना पड़ा, जिसमें अपनी पहचान बनाने के लिए

संघर्ष करना ही जैसे नियति ने उनकी किस्मत में लिख दिया था। लेकिन वह हारीं नहीं और हर बार मिलनेवाली पीड़ा व दुःख से अपने को और मजबूत करती गई। अपनी लगन, मेहनत और दृढ़ता से उन्होंने यह साबित कर दिया कि औरत अगर ठान ले तो मुसीबतों के पहाड़ भी उसका रास्ता नहीं रोक सकते हैं।

कठिन डगर

सन् 1996 में उनके पति की मृत्यु हो गई। अनु अपने को सँभाल पातीं, उससे पहले ही कंपनी के बोर्ड ने फैसला लिया कि उन्हें चेयरपर्सन बनाया जाए। वह कहती हैं, “बोर्ड ने मेरे पति की मृत्यु के दो दिन के अंदर यह फैसला कर दिया कि मुझे चेयरपर्सन बनाया जाएगा; पर न तो मैं उस समय इस स्थिति में थी कि अपने पति की मौत को भुलाकर उस पद पर बैठूँ, न ही मुझे लगता था कि मैं उसके लायक हूँ। मुझे लगता था कि मेरी योग्यता के कारण नहीं, बल्कि उन 62 प्रतिशत शेयरों की वजह से मुझे यह पद सौंपा जा रहा है।”

लेकिन कोई विकल्प नहीं था; पर उन्हें उम्मीद थी कि जल्दी ही उनका बेटा इंग्लैंड से पढ़ाई पूरी कर जब वापस आएगा तो वह इस दायित्व को अपने ऊपर ले लेगा। उनकी बेटी विवाह करने के बाद इंग्लैंड में रह रही थी। उस वक्त और कोई नहीं था, जिसके हाथों में कंपनी की बागडोर सौंपी जाती, इसलिए अनु को ऐसी परिस्थितियों में कमान सँभालनी पड़ी, जो दुःखद होने के साथ-साथ बहुत कठिन भी थीं। लेकिन जैसे नियति का खेल उनकी और परीक्षा लेने को आतुर था। अगले ही वर्ष उनके 25 वर्षीय पुत्र कुरुष की भी एक सड़क दुर्घटना में मृत्यु हो गई। अनु बिलकुल टूट गई थीं और समझ नहीं पा रही थीं कि अपने दर्द को कैसे समेटें, फिर दुःख को बरदाश्त करने की शक्ति उन्हें विपश्य सीखने से मिली। एक बार उन्होंने कहा था, “मैं हमेशा से ही यह करना चाहती थी, पर इसके लिए लगातार दस दिनों तक चुप रहना पड़ता है और पूरा दिन सख्ती से नियमों का पालन करना पड़ता है। मेरे पति हमेशा मुझे छेड़ते हुए कहते थे कि मैं कभी भी दस दिनों तक मुँह खोले बिना नहीं रह सकती हूँ। जीवन में घटी दुःखद घटनाओं को झेलने के बाद बेशक आज मुझे मौत से डर नहीं लगता, उसका सामना करने को मैं तैयार हूँ; पर जख्म अभी भी टीसते हैं।”

पीछे नहीं हटीं

मेडिटेशन करने से उनके मन को तो शांति मिली और स्थितियों का सामना करने की ताकत भी, लेकिन बिना किसी अनुभव के जटिल इंजीनियरिंग कंपनी को सँभालना आसान काम नहीं था और इसलिए उन्हें लगातार नुकसान का सामना करना पड़ा और शेयर होल्डरों पर अपने विश्वास को बनाए रखने के लिए उन्हें यह साबित भी करके दिखाना था कि वह भी

सक्षम हैं और उन्हें किसी तरह का घाटा नहीं उठाना पड़ेगा। महिला होने की वजह से एक के बाद एक चुनौतियाँ उन्हें सामने खड़ी मिलती रहीं। लोगों ने तब यहाँ तक कहा कि इसे सँभालना उनके बूते का काम नहीं और जल्दी ही वह अपने शेयर बेचकर इंग्लैंड चली जाएँगी, जहाँ उनकी बेटी रहती है। तब उन्होंने पूरी दृढ़ता के साथ विनम्र रहते हुए कहा था कि “थर्मेक्स मेरे पिता व पति की कर्मभूमि है। मेरे पास इसके सबसे ज्यादा शेयर हैं, इसलिए न सिर्फ अपने लिए बल्कि शेयरधारकों के लिए भी इसे चलाना मेरा दायित्व है। मैं पीछे नहीं हटूँगी।”

एक बार एक शेयर होल्डर का उन्हें पत्र मिला, जिसमें लिखा था कि या तो आपके पास काफी धन है या आपको पैसे की परवाह नहीं है; पर आपने अपने शेयर- धारकों को नीचा दिखा दिया है। यह पढ़कर उन्हें एहसास हुआ कि बिजनेस की बारीकियों से वह कितनी अनजान हैं। पब्लिक लिमिटेड कंपनी होने के बावजूद उन्हें लगा कि जो आम निवेशक हैं, उनके प्रति भी उनकी जिम्मेदारी बनती है। वह कहती हैं, “मैं उस रात सो नहीं सकी, क्योंकि मैं और मेरे पति हमेशा चाहते थे कि निवेशकों का विश्वास हम पर बना रहे।” उसके बाद से तो वह पूरे पैमाने पर सुधार करने में जुट गई। उन्हें एहसास हुआ कि थर्मेक्स की पुरानी साख को वापस लाने के लिए जिस चीज की इस वक्त उन्हें सबसे ज्यादा आवश्यकता है, वह है साहस। चूँकि बिक्री लगातार घट रही थी, इसलिए अनु ने बोस्टन कंसल्टिंग फर्म की सहायता ली और कंपनी को पहलेवाली स्थिति में लाने के प्रयासों में जुट गई। इस फर्म की सलाह पर भारतीय कॉरपोरेट वर्ल्ड के इतिहास में पहली बार थर्मेक्स के पूरे नियंत्रक मंडल ने एक साथ त्यागपत्र दिया। इसमें उनकी पुत्री मेहर पदमजी के अलावा उनके दामाद पी.एन. पदमजी भी शामिल थे।

नए बोर्ड का गठन करने के साथ-साथ जो सबसे महत्वपूर्ण कदम अनु ने उठाया, वह था थर्मेक्स को उन व्यवसायों से अलग करना, जो घाटे में चल रहे थे। वर्ष 1996 से 2004 के बीच थर्मेक्स ने सॉफ्टवेयर से लेकर पीने के पानी व माइक्रो टरबाइंस तक में जो निवेश किया हुआ था, उनसे अपने को अलग किया। इसके लिए तीन हजार कर्मचारियों को हटाने के लिए उन्हें स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति की योजना लागू करनी पड़ी और इसके तहत दुर्दिनों व घाटे के दिनों में थर्मेक्स को 17 करोड़ का घाटा और झेलना पड़ा। शेयर के मूल्य भी लगातार गिर रहे थे; पर अनु ने तब भी लाभांश वितरणकम नहीं किया।

बेटी को सौंपी कमान

अपनी मेहनत, आत्मविश्वास और दिन-रात एक करके अनु ने फिर से कंपनी को ऊँचाइयों पर पहुँचाया। उनकी नीतियाँ हमेशा स्पष्ट रहीं और कंपनी में कार्यरत लोगों के विश्वास को

कायम रखते हुए उन्होंने फिर पीछे मुड़कर नहीं देखा। जिस समय उन्होंने कंपनी सँभाली थी, उस समय उसका टर्नओवर 650 करोड़ रुपए था और सन् 2004 में जब उन्होंने वह कंपनी अपनी बेटी को सौंपी तो उसका टर्नओवर 1,281 करोड़ रुपए का हो चुका था। वह कहती हैं, “मैं नहीं चाहती थी कि मेरे मरने के बाद मेरी बेटी के हाथों में कंपनी की बागड़ेर सौंपी जाए। इसलिए उसकी योग्यता को देखते हुए मुझे यही समय सही लगा। वैसे भी जब यकायक कोई चीज मिलती है तो उसे सँभालना मुश्किल होता है और मैं नहीं चाहती कि मेरी बेटी ऐसी स्थितियों से गुजरे।” मेरहर पदमजी ने भी उनके विश्वास को कायम रखा और नतीजतन सन् 2005 में ‘इंडिया टुडे’ ने उन्हें भारत की 30 सफलतम महिलाओं में से एक के रूप में घोषित किया।

सामाजिक उत्थान बनाया लक्ष्य

ठिगने कद की, आँखों में आत्मविश्वास व चेहरे पर मुसकान छाए रहने के बावजूद पहली बार उनसे मिलने पर लोगों को यही महसूस होता है कि वह कठोर स्वभाववाली महिला हैं, जिन्होंने ऐसे नीरस बिजनेस को खड़ा करने में जीवन लगा दिया, जो पुरुषों को तो लुभा सकता है, पर स्त्रियों को नहीं। लेकिन जैसे ही उनके साथ संवाद का सिलसिला कायम होता है, हिचकिचाहट के सारे धागे टूट जाते हैं और सामने आ खड़ी होती है ऐसी संवेदनशील महिला, जो दर्द के सागर में गोते खाने के बावजूद पतवार को थामे खड़ी है। वह अपनी कंपनी के छोटे-से-छोटे कर्मचारी का हाल पूछने से चूकती नहीं थीं। उन्हें जाननेवालों का कहना है कि जब वह बोलती हैं तो दुनिया उन्हें सुनती है, क्योंकि वह दिल से बोलती हैं। अपने को कठोर बनाने के बावजूद संवेदनशीलता उनके व्यक्तित्व के हर पहलू से झलकती है।

वह मानती हैं कि बड़े-बड़े कॉरपोरेट हाउस और विभिन्न उद्योगों से जुड़े लोग सामाजिक तौर पर एक व्यापक भूमिका निभा सकते हैं। चूँकि इन समूहों के पास वित्तीय ताकत एवं प्रबंधकीय योग्यता होती है और एक साथ मिलकर जब ये कार्य करते हैं तो कोई भी सरकार उन्हें नजरअंदाज करने की हिम्मत नहीं कर सकती है। यही सोचकर अनु ने सन् 2002 में निर्णय लिया कि वह कंपनी के लाभ का 1 प्रतिशत सोशल सेक्टर में देंगी। वह मानती हैं कि कॉरपोरेट कंपनी में समाज भी समान रूप से महत्वपूर्ण शेयरधारक है। सामाजिक उत्थान के लिए कार्य करना सदा ही उनके दिल का एक अटूट हिस्सा रहा है। वह आज ‘आकांक्षा’ नामक एन.जी.ओ. की चेयरपर्सन हैं, जो मुंबई व पुणे के 36 केंद्रों में कमजोर वर्ग के लगभग 1,600 बच्चों को शिक्षा की सुविधाएँ मुहैया कराती है। उनके बेटे का सपना था कि भारत में सबको शिक्षा प्राप्त हो, इसलिए शिक्षा प्रदान करना उनकी प्राथमिकता बन गया है। सन् 2008 में उन्होंने पुणे की नगरपालिका से एक सरकारी स्कूल को अपनाने की

अनुमति माँगी। इसके अंतर्गत कंपनी दसवीं कक्षा तक बच्चों की मदद करेगी। यह थर्मेक्स फाउंडेशन का एक प्रयास है। अनु ने ‘टीच फॉर इंडिया’ प्रोग्राम की भी अवधारणा रखी।

रिटायरमेंट लेने के बाद से वह औरतों व बच्चों से जुड़े मुद्दों, सांप्रदायिक एकता व मानव अधिकार से संबंधित सामाजिक कार्यों में जुटी हुई हैं। वह मुंबई के वुमेंस इंडिया ट्रस्ट तथा दिल्ली के कॉमनवेल्थ ह्यूमन राइट्स इनीशिएटिव की सदस्य भी हैं। थर्मेक्स में ही बतौर डायरेक्टर काम करने के साथ-साथ ‘तहलका’ अखबार की भी डायरेक्टर हैं। अनु कॉन्फेडरेशन ऑफ इंडियन इंडस्ट्रीज (सी.आई.आई.) के पश्चिमी क्षेत्र की पहली महिला चेयरपर्सन भी थीं। उन्होंने महिला सशक्तीकरण, कॉरपोरेट प्रशासन व सामूहिक सामाजिक दायित्व पर काफी कुछ लिखा व बोला भी है। उन्हें जाननेवालों का कहना है कि अनु को निर्णय लेने में ज्यादा देर नहीं लगती है।

सन् 2008 में अनु आगा को फोब्स मैगजीन ने 1.1 अरब डॉलर की संपत्ति की मालिकन होने की वजह से अमीर महिलाओं की श्रेणी में वर्गीकृत किया। पी.आई.बी. व बॉम्बे मैनेजमेंट एसोसिएशन की पूर्व वरिष्ठ पदाधिकारी व सक्रिय सदस्या अनु आगा गुजरात के दंगों पर सी.आई.आई. द्वारा एक बैठक में बेहद भावुक हो गई थीं; पर वह इतना खुलकर बोलींकि राजनेताओं व उद्योग जगत् से जुड़े लोग सकते में आ गए। उनकी बेबाक टिप्पणियों को सुनकर लोगों ने उन्हें समझाया था कि इस तरह उनका जीवन खतरे में पड़ सकता है, क्यों नाहक वह दुश्मनी मोल ले रही हैं! तब उनका जवाब था, “मैं अपने पति व पुत्र की मौत देख चुकी हूँ। इससे ज्यादा अवसादपूर्ण अवस्था और क्या होगी!”

जरूरी है अनुशासनबद्धता

वह कहती हैं कि “जीवन में घटी घटनाओं ने मुझे इतना बोल्ड बना दिया है कि अब किसी चीज से डर नहीं लगता है। पहले जब भी कुछ गलत कहा जाता था तो मैं लकड़ी को छू लेती थी, पर आज लकड़ी का टुकड़ा भी मेरी नियति को नहीं बदल सकता है। अगर कभी लगता है कि मैं कमजोर पड़ रही हूँ या अतीत की दुःखद घटनाएँ मुझ पर हावी होने लगती हैं तो एक घंटा मेडिटेशन करती हूँ। इससे मुझे शक्ति मिलती है। जो मैंने खोया है, उसका दर्द तो कभी मिट नहीं सकता, पर उस दर्द को झेलने की ताकत अवश्य पा लेती हूँ।”

20 वर्षों तक लगातार एक महिला उद्यमी और थर्मेक्स इंडिया की चेयरपर्सन की व्यस्त व कठिन जिंदगी बिताने के बाद अब अनु आगा अपने पसंदीदा शौकों को पूरा करने में जुटी हैं—पढ़ना-लिखना, यात्रा करना, सामाजिक कार्य और सबसे महत्वपूर्ण अपनी बेटी के बच्चों

के साथ रहने के; क्योंकि उन्हें सदा यही शिकायत रही कि उनकी नानी उनसे जब भी मिलीं, हमेशा भागते-दौड़ते मिलीं, इसलिए केवल हाय और बाय ही हुई।

उनका पुणे स्थित घर उनकी तरह ही परिष्कृत और साधारण साज-सज्जा से युक्त है। कॉटन और सिल्क की साड़ियाँ उनका ट्रेडमार्क बन चुकी हैं और हर जगह वह उन्हें ही पहनती हैं। एक व्यवस्था और अनुशासनबद्धता जीवन जीने के लिए कितनी जरूरी है, यह बात उन्होंने एक चेयरपर्सन होने के नाते तो दरशाई ही, आज भी 68 वर्षीय अनु आगा एक रुटीन से बँधी जिंदगी जीने की समर्थक हैं। उनके दिन की शुरुआत एक्सरसाइज से होती है, जिसमें साइकलिंग, योगा व सैर शामिल है। टी.वी. देखने के बजाय वह न्यूजपेपर पढ़ना पसंद करती हैं। उन्हें पिक्चर देखना भी पसंद है और इसके लिए वह सिनेमा हॉल जाती हैं। लोगों से मिलना-जुलना पसंद होने के कारण वह अक्सर पार्टीयों में देखी जाती हैं और कोई उन्हें डांस करने को कहे तो उनके पैर थिरकने लगते हैं। उनका पसंदीदा पॉटर स्पोर्ट स्नोरकेलिंग है, क्योंकि समुद्र के अंदर आप एक अलग ही दुनिया में पहुँच जाते हैं, ऐसा मानना है अनु का। आखिर चुनौतियों का सामना आत्मविश्वास से करना ही तो अनु का स्वभाव और जीवन का मूल मंत्र है।

एक बार टेलीविजन पर दिए इंटरव्यू में अनु आगा ने जीवन व मृत्यु की तुलना उगते व झूबते सूरज से की थी, “जब सूरज झूबता है तो इसे एक प्राकृतिक प्रक्रिया की तरह माना जाता है। उसी तरह मृत्यु कोई संकट नहीं है। जब किसी को जाना है, वह जाएगा ही। मैं कोई संत नहीं हूँ, पर कम-से-कम इस बात को जानती हूँ कि मैं इस दुनिया में कुछ समय के लिए ही हूँ और इसलिए अपने हर क्षण का इस्तेमाल सही ढंग से करना चाहती हूँ।”



डॉ. अमृता पटेल



चुना चुनौतियों भरा क्षेत्र

चेयरपर्सन, एन.डी.डी.बी.

“मैं किसी बिजनेस में नहीं हूँ। मेरा काम है छाके गाँवों की महिलाओं को बिजनेस में लगाना, ताकि वे अपने परिवार व समुदाय को समृद्ध कर सकें।”

भारत का सबसे सफल सहकारी प्रयास विशालकाय नेशनल डेयरी डेवलपमेंट बोर्ड (एन.डी.डी.बी.) विश्व में नंबर वन दूध उत्पादक है। इसके 170 दुग्ध केंद्र हैं, जिसमें 1,17,000 गाँव स्तरीय सोसाइटी हैं, जिनको लगभग 12.4 करोड़ किसान सदस्य सँभालते हैं और प्रतिदिन 21.5 करोड़ लीटर दूध का उत्पादन किया जाता है। इस व्यापक संचालन का नेतृत्व करनेवाली इसकी चेयरपर्सन डॉ. अमृता पटेल उन असाधारण महिलाओं में से एक हैं, जो खुद किसी संस्था से कम नहीं हैं।

“मैं कोई बिजनेस वूमन नहीं हूँ।” अमृता का कहना है, “मैं दूसरी औरतों को बिजनेस में लगाने के बिजनेस में हूँ, ताकि वे अपनी प्रतिदिन की आय का अर्जन कर सकें। साथ ही हमें यह सुनिश्चित करना है कि हमें भारत में दूध का आयात न करना पड़े। और यही अब मेरे जीवन का लक्ष्य है।”

सीढ़ी-दर-सीढ़ी सफर

13 नवंबर, 1943 को दक्षिण गुजरात के खेड़ा जिले के विद्यानगर गाँव में जन्मी अमृता पूर्व वित्त मंत्री व कैबिनेट सेक्रेटरी एच.एम. पटेल की पाँच बेटियों में से एक हैं। सन् 1958 में दिल्ली के कॉन्वेंट ऑफ जीसस ऐंड मेरी स्कूल से पढ़ाई करने के बाद उन्होंने 1965 में बॉम्बे वेट्रिनरी कॉलेज से वेट्रिनरी साइंस में स्पेशलाइजेशन किया। बाद में उन्होंने ब्रिटेन के रोवेट रिसर्च इंस्टिट्यूट से एफ.ए.ओ. फेलोशिप के अंतर्गत एनिमल न्यूट्रीशन (पशु पोषण) में एडवांस ट्रेनिंग ली। फिर सन् 1965 में ही कायरा जिला सहकारी दुग्ध उत्पादक यूनियन की कंजरी कैटल फीड फैक्टरी में एनिमल न्यूट्रीशन का कार्यभार संभाला। सन् 1971 में अमृता प्रोजेक्ट एग्जीक्यूटिव एन.डी.डी.बी. से जुड़ गई। उसी दौरान उन्हें करनाल के नेशनल डेयरी रिसर्च इंस्टिट्यूट के लिए एचीवमेंट ऑफिट कमेटी की मदद करने का विशेष कार्य सौंपा गया। सन् 1972 में उन्हें इंटरनेशनल डेयरी कांग्रेस का असिस्टेंट डायरेक्टर नियुक्त किया गया। बाद में उन्हें कांग्रेस सेक्रेटरियट में डिप्टी डायरेक्टर का पद सौंपा गया और फिर सन् 1973 में कांग्रेस के 1975 में खत्म होने तक वह सेक्रेट्री जनरल बनी रहीं। जैसे ही कांग्रेस समाप्त हुई, उन्हें एन.डी.डी.बी. का एडमिनिस्ट्रेटिव व कर्मशियल डायरेक्टर नियुक्त कर दिया गया। फिर उन्होंने दिल्ली में एन.डी.डी.बी. की रीजनल डायरेक्टर के रूप में भी कार्य किया। सन् 1986 में डॉ. पटेल को एन.डी.डी.बी. के चीफ एग्जीक्यूटिव के पद पर नियुक्त किया गया। सन् 1988 में वह मैनेजिंग डायरेक्टर (ऑपरेशंस) बनीं और सितंबर 1990 में वह एन.डी.डी.बी. की मैनेजिंग डायरेक्टर बन गई, जो मदर डेयरी को संभालता है।

हर मुकाम पर चुनौतियों का साहस से मुकाबला करने को तैयार अपने मार्गदर्शक और भारत के सहकारी आंदोलन के पिता वर्गीज कुरियन द्वारा अमृता ने सन् 1998 में एन.डी.डी.बी. की कमान पूरी तरह से उस समय हाथ में ली, जब कुरियन ने 33 वर्ष लंबी अपनी कमान छोड़ी।

व्यक्तित्व में समन्वित संस्कार

उनकी जिंदगी के कैनवास पर अगर एक ओर उपलब्धियों के अनेक रंग बिखरे हुए हैं तो दूसरी ओर उन्होंने एक ऐसा उत्साहपूर्ण जीवन भी जिया है, जिसकी वजह से आज 67 वर्ष की आयु में भी अपने से आधी उम्र की महिलाओं के सामने वह कहीं अधिक स्मार्ट व सक्रिय साबित होती हैं। अपनी शर्तों पर जीवन जीनेवाली अमृता ने उस क्षेत्र में अपनी एक जगह बनाई, जहाँ जाने से भी पुरुष कतराते हैं।

एक रूढिवादी गुजराती परिवार की पाँच बेटियों में सबसे छोटी अमृता के जन्म के समय उनके माता-पिता चाहते थे कि लड़का हो। लड़के की उम्मीद रखते हुए परिवार के दर्जी ने बच्चे के कमरे को नीले रंग से सजा दिया था और जन्म से पहले ही उन्हें ‘अमृत’ कहकर पुकारा जाने लगा था। लेकिन लड़की पैदा होने पर उन्हें अमृता नाम दिया गया।

“पर हम पाँचों बहनों ने यह साबित कर दिया कि हम लड़कों से किसी भी तरह कम नहीं हैं और आज हम सभी एक ऐसे मुकाम पर हैं, जहाँ देखकर किसी भी माता-पिता को गर्व हो सकता है।” कहना है अमृता का, जिनकी सोच में ही नहीं, वरन् संपूर्ण व्यक्तित्व से एक शालीनता व परिपक्वता झलकती है। सौम्यता व संस्कारों की अटूट धरोहर के साथ उन्हें अपने पिता से दृढ़ इच्छा-शक्ति और अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उस पर केंद्रित हो जाने के गुण भी मिले।

अमृता के लिए उनके पिता ही सबसे बड़े मार्गदर्शक व प्रेरणा हैं। उन्होंने उनके अंदर समाज-सेवा, एकता, ईमानदारी, कड़ी मेहनत और एक स्वतंत्र सोच रखने जैसे मूल्यों का संचार किया। उनकी माँ ने उन्हें घर के काम करने में निपुण बनाया। उनकी बहनों ने उनके अंदर एक सौदर्य-बोध विकसित किया। चीजों के समन्वय के कारण ही वह विषम परिस्थितियों में भी न रहीं और कदम-कदम पर यह साबित किया कि औरत चाहे तो किसी भी क्षेत्र में सफलता पा सकती है। समाज की रूढियाँ या पुरुषों का मिथ्याभिमान भी उसे आगे बढ़ने से नहीं रोक सकता है। उनके लिए ताकत का अर्थ है हर समय विश्वसनीयता के उच्च मानकों को कायम रखना।

जिंदगी में हुए संयोग

लड़का होने की उम्मीद होने पर भी लड़की की तरह जन्म लेने के संयोग से लेकर एन.डी.डी.बी. की चेयरपर्सन बनने तक उनके जीवन में जो भी घटा, वह उसे किसी संयोग से कम नहीं मानती हैं, “लड़के की चाह में संयोगवश हुई लड़की से लेकर एन.डी.डी.बी. में नौकरी तक जिस पर पूरी तरह से पुरुषों का आधिपत्य था, मेरे जीवन की महत्वपूर्ण घटनाएँ जैसे संयोगवश ही हुई हैं।” पुरानी बातों को याद करते हुए अमृता कहती हैं। उनके

माता-पिता चाहते थे कि वह डॉक्टर बनें, लेकिन वह डॉक्टर तो बनना चाहती थीं, पर पशु चिकित्सक। निर्णय कर चुकने के बाद उन्हें डिगा पाना बहुत ही मुश्किल काम था। वैसे भी यह उनके अंदर पलनेवाली वह इच्छा थी, जो बचपन से उस समय से पल रही थी जब उनका कुत्ता बीमार हो गया था। वह कहती हैं, “उस समय बहुत ही कम पशु चिकित्सक होते थे और पशुओं की देखभाल में इसी कमी ने मुझे पशु चिकित्सक बनने के लिए प्रेरित किया।”

अपने पिता के रिटायरमेंट और सन् 1959 में उनके दिल्ली से आनंद, गुजरात लौटने पर युवा अमृता की मुलाकात अपने पिता के मित्र डॉ. वर्गीज कुरियन से हुई, जो उस समय बाढ़ आंदोलन अभियान (फ्लड मूवमेंट) से जुड़े हुए थे और ‘अमूल’ का संस्थापन करने में प्रयासरत थे। अमृता उन दिनों को याद करते हुए कहती हैं, “जब भी कोई कुत्ता बीमार पड़ता, हमें अमूल की सहायता लेनी पड़ती। चूँकि आनंद में केवल वही थे, जहाँ पशुओं का इलाज होता था। पशुओं की देखभाल और उनके प्रति मेरी चिंता देखकर एक डॉक्टर ने मुझे सिखाया कि कुत्तों को कैसे इंजेक्शन लगाया जाता है।” अमीर पारसियों के केक खानेवाले कुत्तों को इंजेक्शन लगाते-लगाते अमृता के अंदर इस क्षेत्र में और अधिक पैमाने पर काम करने की ललक बलवती होने लगी और वह उस डॉक्टर के साथ किसानों से मिलने उनके खेतों पर जाने लगीं। वहाँ जाकर उन्हें एहसास हुआ कि किसानों के लिए गाय-भैंसों का क्या महत्त्व है। उनके लिए वे सिर्फ जानवर मात्र नहीं हैं, वे उनकी जीविका के साधन भी हैं। यह देखकर उनके अंदर पशु चिकित्सक बनने का संकल्प और दृढ़ हो गया। पर यह बात उनकी माँ को बहुत नागवार गुजरी। उन्हें डर था कि ऐसे पेशे से जुड़ी लड़की से कोई भी शादी नहीं करेगा।

दृढ़ता का दामन थामे रखा

पर जो ठान लिया है, उसे पूरा करना ही है, की सोच रखनेवाली अमृता साइंस में कोर्स के लिए बंबई चली आई। अपनी क्लास में एकमात्र लड़की होने के कारण लड़के उनका मजाक उड़ाया करते और तंग करने का कोई भी मौका नहीं छोड़ते थे। उन्हें अपने प्रैक्टिकल्स अकेले करने पड़ते थे, क्योंकि लड़के उन्हें सहयोग देना ही नहीं चाहते थे। पास के गाँवों में फील्ड पर जाने पर जहाँ एक तरफ सारे लड़के एक साथ टोली बनाकर रहते, वहाँ अमृता को किसी दयालु परिवार की कृपा पर रहना पड़ता था।

कई बार उनके मन में आया कि वह बीच में ही कोर्स छोड़कर चली जाएँ; पर फिर उनके अंदर पलती इच्छा उनके पाँव रोक लेती और वह दृढ़ता से अपने काम में लग जातीं। जब पहली बार ‘अमूल’ में नौकरी करने के लिए उन्होंने डॉ. कुरियन से संपर्क किया तो उन्होंने

कहा कि अमूल किसी महिला को नौकरी पर नहीं रखता, यहाँ तक कि टेलीफोन ऑपरेटर की नौकरी पर भी नहीं। इसके बावजूद अपनी इच्छा को पूरी करने की चाह में 11 महीनों तक बिना वेतन लिये उन्होंने वहाँ काम किया और बाद में उन्हें तीन महीनों के लिए अस्थायी पद दिया गया और संयोगवश बाद में वह पूर्णकालिक नौकरी में बदल गया; क्योंकि उस क्षेत्र में कोई भी काम करने को तैयार नहीं था। बाद में उन्हीं डॉ. कुरियन ने अमृता को प्रशासनिक कार्यों के लिए तैयार करने के लिए चुना। इनमें से एक महत्वपूर्ण कार्य था दिल्ली में होनेवाली भारत की पहली इंटरनेशनल डेयरी कांग्रेस का आयोजन करना, जिसमें 3,000 से अधिक माननीय लोग भाग लेने वाले थे। यह नौकरी उन्हें इसलिए मिली थी, क्योंकि बहुत सारे उच्च पदाधिकारियों ने नौकरी छोड़ दी थी। अमृता ने इस काम में अपनी निपुणता को साबित कर दिया और शायद वह समय था, जब औरतों के प्रति सोच में भी बदलाव आया। वह कहती हैं, “शायद डॉ. कुरियन को दिखाई दे गया था कि वेटेनरी निपुणताओं के अलावा भी मेरे अंदर और क्षमताएँ हैं, क्योंकि उन्होंने उस वक्त पहले मुझे आनंद में एडमिनिस्ट्रेशन व कर्मशियल डायरेक्टर बना दिया और फिर दिल्ली में क्षेत्र का अध्यक्ष नियुक्त किया।”

नहीं रोक पाई चुनौतियाँ

अगर आज भारत दुनिया का सबसे अधिक दूध उत्पादन करनेवाला देश है तो इसका काफी श्रेय ‘लाइफटाइम एचीवर अवार्ड’ विजेता अमृता पटेल को भी जाता है। ऑपरेशन फ्लड द्वारा भारतीय डेयरी किसानों को संसाधन प्रदान कर, दूध के उत्पादन में बढ़ोतरी कर उनके जीवन में सुधार लाने के अतिरिक्त अमृता ने सहकारी विकास कार्यक्रम के एक हिस्से के रूप में महिलाओं की शिक्षा पर भी बहुत जोर दिया। यहीं नहीं, पुरुषों को भी उन्होंने इस बात से अवगत कराया कि औरतों की शिक्षा का क्या महत्व है और औरतों को डेयरी सहकारी समितियों में शामिल होने तथा बतौर एक सदस्य अपने अधिकारों का प्रयोग करने के लिए प्रेरित किया।

यह अमृता का अथक प्रयास ही था, जिसकी वजह से फाउंडेशन फॉर ईकोलॉजिकल सिक्योरिटी (एफ.ई.एस.) की स्थापना हुई—एक ऐसा संगठन, जो पारिस्थितिकी प्रक्रियाओं के बचाव जैसे महत्वपूर्ण कार्य पर जोर देता है, जो भूमि की जैविक उत्पादकता को बनाए रखते हुए गरीबों की स्थिति में सुधार करने में मदद करता है। उनकी अध्यक्षता में एफ.ई.एस. भारत के छह राज्यों में 1,830 गाँवों का सहयोग पाने में सफल हो गई, जिसकी वजह से वह 1 करोड़ लोगों तक पहुँच लगभग 1,07,000 हेक्टेयर निजी भूमि व वन्य भूमि को सामुदायिक प्रशासन के अंतर्गत लाने में सफल हो पाई। अनगिनत राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय संगठनों के बोर्ड व समितियों में उनकी उपस्थिति होने के साथ-साथ डॉ. पटेल वन संरक्षण,

सहकारी संस्थानों को मजबूत करने, ग्रामीण लोगों का जीवन सुधारने आदि संबंधित मुद्दों पर नीति निर्माताओं व विभिन्न संगठनों के साथ कार्य करती हैं।

‘पद्म भूषण’ और ‘डॉ. नोरमैन बरलॉग अवार्ड’ से सम्मानित अमृता के सामने अनेक चुनौतियाँ आईं। उस समय जब निजी उद्योग व नेस्ले व ब्रिटानिया जैसे एम.एन.सी. ने भारत के दूध क्षेत्र में पदार्पण किया तो उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती यह सुनिश्चित करने की थी कि देश के 96,000 डेयरी कॉपरेटिव्स, 170 दूध उत्पादन करनेवाले सहकारी संघ व 15 राज्यों के सहकारी दुध विपणन निकाय मजबूती से अपनी जगह बनाए रखें।

राजनीतिक हस्तक्षेप बरदाश्त नहीं

स्पष्ट और पारदर्शी सोच के साथ सीधी राह पर चलकर अपने इरादों को पूरा करने में विश्वास रखनेवाली अमृता पटेल के मार्ग में भी अनेक कँटीले मोड़ आए, जिसकी वजह से कई बार उन्हें विवादों में रहना पड़ा तो कभी उन्होंने हार महसूस की।

अमृता कहती हैं “जब एन.डी.डी.बी. बिल संसद् में पेश किया गया था, डॉ. कुरियन निमोनिया के कारण बिस्तर पर थे। इसलिए मैनेजिंग डायरेक्टर होने के नाते मुझे पूरी जिम्मेदारी लेनी पड़ी। उसके लिए मुझे मंत्रियों व संसद् सदस्यों से मिलना पड़ता था, ताकि बिल पास हो सके। वह बहुत ही कठिन काम था। एक वक्त तो ऐसा भी आया, जब मैं हार मानने लगी थी; पर मेरे पिता, जो स्वयं एक संसद् सदस्य थे, ने कहा, ‘तुम हार नहीं मान सकती हो। तुम्हें इसे इसके तार्किक निष्कर्ष तक ले जाना ही होगा। जब तक यह पास नहीं हो जाता, तुम्हें सारे प्रयास करने होंगे’।”

वह मानती हैं कि सफलता पाने के लिए मार्ग में आए रोड़ों को हटाना ही पड़ता है। वह बाधाओं का सामना कड़ी मेहनत, कमिटमेंट एवं लोगों की मदद करते हुए करना पसंद करती हैं। हालाँकि एन.डी.डी.बी. चेयरपर्सन के रूप में उनका पहला टर्म डॉ. वर्गीज कुरियन के साथ थोड़े विवाद के रूप में ज्यादा याद किया जाएगा; पर यह उस समय के रूप में भी याद किया जाएगा, जब वह पहली बार अपने पिता, जो देश के सबसे कुशल वित्त मंत्रियों में से एक थे, की छाया से बाहर आई। अमृता यह मानने से इनकार करती हैं कि उनका अपने गुरु व पूर्व बॉस कुरियन के साथ कोई मतभेद हुआ था। उनके पक्ष में एन.डी.डी.बी. की अध्यक्षता का भार सौंपने के बावजूद उनसे मतभेद की स्थिति कैसे आ गई, इस बात पर अमृता यही मानती हैं कि वह केवल अपने ध्येय पर केंद्रित रहना चाहती थीं, जो सहकारी संस्थानों को गठित करना था। वह यह भी मानती हैं कि वह आज जो कुछ भी हैं, वह डॉ. कुरियन की वजह से ही हैं। पर न्याय, ईमानदारी व लोगों को साथ लेकर

काम करने की विशेषताएँ उन्होंने अपने पिता से पाई हैं। वह मानती हैं कि एक सहकारी संगठन को किसी भी तरह की राजनीति से दूर रहना चाहिए और उसके प्रबंधन में किसी भी तरह का राजनीतिक हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए।

सम्मान

वह राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर अवार्ड प्राप्त कर अपनी योग्यता का लोहा मनवा चुकी हैं। वर्ष 2001 में पशुपालन में उनके योगदान के लिए उन्हें भारत सरकार द्वारा ‘पद्म भूषण’ से सम्मानित किया गया। 4 जून, 2008 को राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने फाउंडेशन फॉर ईकोलॉजिकल सिक्योरिटी (एफ.ई.एस.), आनंद की संस्थापक चेयरपर्सन अमृता को ‘इंदिरा गांधी पर्यावरण पुरस्कार’ से सम्मानित किया। यह पुरस्कार भारत सरकार द्वारा दिया जानेवाला सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार है, जो प्रकृति व प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में असाधारण योगदान देने के लिए प्रदान किया जाता है। उन्हें दुर्घटशाला (डेयरी) विकास व पशुपालन के क्षेत्र में दिए अपने योगदान के लिए डॉ. नोरमैन बरलॉग अवार्ड से सम्मानित किया गया। उन्हें सन् 1977 के लिए भारत के ग्रामीण स्वास्थ्य व पर्यावरण को सुधारने तथा बेहतर पशुपालन को प्रोत्साहित करने के प्रयास व उत्पादकता और आय में बढ़ोतरी करने के लिए वर्ल्ड डेयरी एक्सपो, इंक, मेडिसन, विस्कोन्सिन, अमेरिका द्वारा ‘इंटरनेशनल पर्सन ऑफ द ईयर अवार्ड’ से नवाजा गया।

इच्छा से शादी न करनेवाली अमृता को हालाँकि कई बार साथी की कमी महसूस हुई, लेकिन उनका काम उन्हें इतना व्यस्त रखता है कि उस कमी को वह भूल जाती हैं। पारिस्थितिकी संरक्षण व ग्रामीण स्वास्थ्य जैसे आंदोलनों से जुड़े रहकर वह अपना सारा जीवन उसी को समर्पित करना चाहती हैं। कर्मठ और ईमानदारी को अपने जीवन का मूल मंत्र माननेवाली अमृता जीवन में संतुलन बनाए रखने के लिए मेडिटेशन करती हैं।



इंदिरा नूई



लक्ष्यों को प्राप्त करने की असाधारण क्षमता

सी.ई.ओ., पेप्सिको

“सफलता का अर्थ पैसा, सम्मान या ताकत नहीं है, बल्कि अपने आपको शुश्रा व पूर्ण महसूस करना है। और वह उस चीज में अपना समय व जीवन लगाने से मिलती है, जिसे आप सबसे ज्यादा प्यार करते हैं। सफलता का आधार इस बात में निहित है कि आप जीवन में क्या करना चाहते हैं और जो लोग इस बात को जान लेते हैं, उन्हें अपने आपको भाव्यशाली मानना चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण अच्छा करने की कोशिश करना और उस तक पहुँचने का प्रयास करना है। इसी तरह आप अपनी क्षमताओं को पूर्णता प्रदान कर सकते हैं।”

भारत का इतिहास इस बात का गवाह है, जिसमें महिलाओं ने समय-समय पर यह साबित करके दिखाया है कि वे न केवल होममेकर हैं, वरन् अपनी ताकत व क्षमताओं से किसी भी क्षेत्र पर राज कर सकती हैं। फिर चाहे वह इंदिरा गांधी हों, सरोजिनी नायडू या लक्ष्मीबाई हों। ऐसी ही एक सशक्त ताकत बनकर उभरी हैं दुनिया की दूसरी सबसे बड़ी कोला कंपनी पेप्सिको की सी.ई.ओ. इंदिरा नूर्झ, जिन्हें ‘फोर्ब्स’ मैगजीन ने दुनिया की सर्वाधिक पावरपुल बिजनेस वूमन होने का खिताब दिया है।

इंदिरा कृष्णामूर्ति नूर्झ का जन्म एक साधारण परिवार में 28 अक्टूबर, 1955 को मद्रास में हुआ था। उनके पिता स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद में काम करते थे और उनके दादा जिला न्यायाधीश थे। उनकी माँ एक आम गृहिणी हैं। नूर्झ बचपन से ही अपने नियम बनाकर चलती थीं। ऐसे परिवार से ताल्लुक रखने के बावजूद, जहाँ बहुत अधिक आधुनिकता का समावेश नहीं हुआ था और ऐसे समाज में जहाँ किसी लड़की के लिए बहुत ज्यादा कुछ करने की चाह रखना सही नहीं माना जाता था, वह ऑल गर्ल्स क्रिकेट टीम में शामिल हो गई। यहाँ तक कि उन्होंने मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज में पढ़ते हुए ऑल-फीमेल रॉक बैंड में गिटार भी बजाया।

अलग हटकर करने की चाह

नूर्झ बचपन से ही यह मानकर चलींकि आप जो करते हैं, उसकी कोई सीमाएँ नहीं हैं। उनके जीवन की संपूर्ण कहानी जीवन के मूल्यों पर आधारित है। बचपन में उनकी माँ उन्हें और उनकी बहन को वे क्या बनना चाहती हैं, इस पर हर रात एक भाषण तैयार करने को कहती थीं और विजेता को चॉकलेट का एक टुकड़ा मिलता था। इस गतिविधि ने उन दोनों बहनों के अंदर एक आत्मविश्वास और कुछ बनने का बीज रोपा, जिसने आगे चलकर एक पल्लवित पौधे का आकार लिया और आज उसमें सुगंधित फूल खिले हुए हैं। वह मानती हैं कि सफलता तीन बातों पर आधारित है—परिवार, मित्र व विश्वास। उनकी माँ ने उनके लिए खेल बनाया था, जिसमें इंदिरा को देश के राष्ट्रपति होने का अभिनय करना पड़ता था। उनकी माँ चाहती थीं कि इससे कम स्थान पाने का वह सपना तक न देखें। बेशक वह सपना तो पूरा नहीं हुआ, पर आज वह जहाँ हैं, वह भी किसी बड़े सपने के पूरा हो जाने से कम नहीं है।

मद्रास क्रिश्चियन कॉलेज से उन्होंने रसायन, भौतिकी व गणित में स्नातक किया। ग्रेजुएशन करने के बाद कोलकाता के इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट से उन्होंने फाइनेंस व मार्केटिंग में पोस्ट ग्रेजुएशन किया और फिर एम.बी.ए., जिसके तुरंत बाद वह ए.बी.बी. और

फिर जॉनसन ऐंड जॉनसन (मुंबई) में नौकरी करने लगीं। जॉनसन ऐंड जॉनसन में उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि थी स्टेफ्री सैनेटिरी नैपकिंस लॉज्च करना। उसके बाद तो उन्होंने फिर कभी मुड़कर नहीं देखा। वह जिस भी सीढ़ी पर पैर रखतीं, कामयाबी उनके पैर चूमने लगती।

उस समय उनके अंदर आगे बढ़ने व कुछ अलग हटकर करने की चाह इतनी तीव्र थी कि उन्होंने अपने माता-पिता को उन्हें अमेरिका में येल मैनेजमेंट स्कूल में पढ़ने जाने देने के लिए राजी कर लिया। येल से उन्होंने पब्लिक व प्राइवेट मैनेजमेंट में मास्टर्स की डिग्री ली। वहाँ रहकर वे खर्च निकालने के लिए छोटी-मोटी नौकरियाँ भी करने लगीं। जैसे ही पढ़ाई पूरी हुई तो बोस्टन कंसल्टिंग ग्रुप के साथ उन्होंने अपने कैरियर के प्रथम सोपान पर गंभीरता से कदम रखा। लेकिन उनके जीवन में अभी अनेक मोड़ आने बाकी थे, इसलिए ही शायद उनके साथ एक हादसा हुआ। एक कार दुर्घटना में वह ऐसी आहत हुई कि उन्होंने कंसल्टेंट सेगमेंट को अलविदा कह कॉरपोरेट स्ट्रेटेजी (कारोबारी रणनीति) को अपना लिया।

सपनों को लगे पंख

सन् 1994 में जब उन्हें पेप्सिको से बुलावा आया तो इंदिरा उसे स्वीकारने में थोड़ी झिझकीं, क्योंकि उन्हें पता था कि पेप्सिको में गैर-अमेरिकियों के लिए एक सीमा तक ही तरकीकी के दरवाजे खुले होते हैं। पर तत्कालीन सी.ई.ओ. वेन कालीवे इंदिरा की साफगोई और दृढ़ता से इतने प्रभावित थे कि उन्होंने उन्हें यकीन दिलाया कि पेप्सिको में सफलता पाने के लिए ब्लू आई बॉय होना अनिवार्य नहीं है। उनकी यह बात 100 प्रतिशत सही साबित हुई। तभी तो आज इंदिरा शीर्ष पद पर आसीन हैं।

आश्वासन और सही राह पाने से मानो उनकी उड़ान व सपनों दोनों को ही पंख लग गए। उस समय कोला बाजार में कोका-कोला का एकाधिकार था, जिस पर आधिपत्य जमाने का लक्ष्य उन्होंने साधा। उन्होंने पेप्सिको का विस्तार और उसे लोकप्रिय बनाने के लिए एक रणनीति तैयार की। इसके लिए उन्होंने उस वक्त के सी.ई.ओ. रोजर इनरिको को कंपनी के रेस्टोरेंट डिवीजन पर ध्यान देने के लिए बाध्य किया, साथ ही के.एफ.सी. पिज्जा हट व टेको बेल ब्रांडों पर भी। नूर्झ ने स्वयं न सिर्फ इस ओर ध्यान दिया, बल्कि विलयन व अधिग्रहण की नीति को भी अपनाया। नतीजतन ट्रॉपिकाना व क्वेकर फ्रूट्स उनके अधिग्रहण में आ गए। इससे पेप्सिको की स्पोर्ट्स ड्रिंक मार्केट में पकड़ मजबूत हुई। इससे उन्होंने बिजनेस की दुनिया में अपनी स्थिति को सुदृढ़ किया, जहाँ किसी महिला के लिए किसी बहुत बड़ी कंपनी में अपनी एक अलग पहचान बनाना कठिन होता है। रोजर उनकी योग्यता से इतने

अभिभूत हुए कि सन् 2000 में उन्हें पेप्सीको का सी.एफ.ओ. (चीफ फाइनेंशियल ऑफिसर) नियुक्त कर दिया गया।

इंदिरा ने स्पोर्ट्स ड्रिंक मार्केट में पेप्सी का आगमन इतनी कुशलता से किया कि पेय बाजार में वह छा गई। रोजर ने कहा कि अगर इंदिरा को कोई विचार आता है तो वह उसके पीछे लग जाती हैं और उन्हें तब कोई भी बाधा रोक नहीं सकती है। काम को पूरा करने के बाद ही वह ठहरती हैं, लेकिन कोई दूसरा बड़ा कार्य करने के लिए। निस्संदेह उनकी दृढ़ता और लक्ष्य को पाने के नजरिए ने ही उन्हें सफलता पाने में मदद की और इसी ने उन्हें कंपनी के उच्चतम स्थान पर पहुँचने में मदद की, जहाँ जाने की बात लोग सपने में भी नहीं सोचते हैं।

बाधाओं को किया निरस्त

वही आज एकमात्र ऐसी महिला हैं, जो 25 अरब डॉलर से भी ज्यादा की बहुराष्ट्रीय कंपनी की सी.ई.ओ. हैं और इस ऊँचाई तक पहुँचनेवाली पहली भारतीय भी। सबसे अधिक वेतन पानेवाली इंदिरा के लिए यह कठिन व रोचक अनुभव रहा। उनके अपने शब्दों में, “एक महिला, प्रवासी व रंग तीनों ऐसी चीजें थीं, जिसने ऊँचाई पर पहुँचने के मार्ग को तीन गुना दुर्गम बना दिया था।” पर उस समय केवल एक ही मंत्र उन्होंने अपनाया और वह था अपने पुरुष सहकर्मियों की तुलना में दुगुना कार्य करना और हर क्षण को जीते हुए हर आनेवाली बाधा से परास्त हुए बिना उसे निरस्त करना।

इंदिरा नूई का जीवन किसी प्रेरणा से कम नहीं है। वह ऐसी प्रभावशाली महिला हैं, जिन्हें ‘फोब्स’ व ‘टाइम्स’ मैगजीन ने दुनिया की सबसे प्रभावी महिला होने का दर्जा दिया है। उनकी जिंदगी एक ताकतवर महिला की एक सीधी-सपाट कहानी है। एक ऐसी भारतीय लड़की की कहानी जो एक रूढ़िवादी परिवार में पैदा हुई और नाममात्र की पूँजी और बिना किसी सुरक्षा के अमेरिका उच्च शिक्षा प्राप्त करने चली गई। अगर वह उसमें फेल हो जातीं तो फिर कोई रास्ता उनके सामने नहीं बचता। यह एक ऐसी दृढ़ लड़की की कहानी है जिसने कनेक्टिकट में पढ़ते हुए पैसे कमाने के लिए आधी रात से लेकर सुबह तक एक रिसेप्शनिस्ट का काम किया और अपनी पहली नौकरी के इंटरव्यू के लिए वेस्टर्न सूट खरीदने के लिए एक-एक पैसा जोड़ा। लेकिन सही आउटफिट न खरीद पाने और बाद में इंटरव्यू में सफल न होने पर उन्होंने अपने प्रोफेसर से पूछा कि उन्हें किस तरह के कपड़े पहनकर जाना चाहिए, तो उन्होंने जवाब दिया कि अगर तुम भारत में होतींतो क्या पहनतीं। उनके कहने पर कि साड़ी पहनती, तो उन्होंने कहा—जिसमें तुम सुविधा महसूस करती हो, वही पहनो। जो तुम हो, उसे मत बदलो। अगले इंटरव्यू में नूई ने साड़ी ही पहनी और उन्हें वह नौकरी मिल गई और प्रोफेसर की वही सीख उन्होंने आज तक अपनाई हुई है। वह

जैसी हैं वैसी ही रहीं; कभी अपने मूल्यों व विश्वासों को बदलने की कोशिश नहीं की। बल्कि वह मानती हैं कि उन्हें अपनी परंपराओं से ताकत मिलती है। वह कहती हैं, “मैं अपने आप में सुरक्षित हूँ। कॉरपोरेट जीवन जीने के लिए मेरा अमेरिकी बनना आवश्यक नहीं है।”

तोड़ी ग्लास सीलिंग

सन् 1980 में बोस्टन कंसल्टिंग ग्रुप के साथ अपने कॅरियर की शुरुआत करने के बाद से वह जानती थीं कि उन्हें दो कारणों से कड़ी मेहनत करनी होगी—पहला यह कि वह महिला है और दूसरा कि वह अमेरिका की निवासी न होकर एक बाहरी व्यक्ति हैं। बोस्टन में उन्होंने 6 वर्ष बिताए और वहाँ उनके क्लाइंट्स टेक्स्टाइल से लेकर कंज्यूमर गुड्स कंपनियों से लेकर रिटेलर तक थे। छह वर्ष बाद सन् 1986 में उन्होंने वाइस प्रेसीडेंट और कॉरपोरेट स्ट्रेटजी एंड प्लानिंग डायरेक्टर के रूप में मोटोरोला जॉइन किया। सन् 1990 में वह एसी ब्राउन बोवरी में चली गई और वाइस प्रेसीडेंट की हैसियत से 4 वर्ष बिताए। सन् 1994 में पेप्सिको जॉइन करने से जुड़ी एक रोचक कहानी भी है। उस समय जनरल इलेक्ट्रिक (जी.ई.) कंपनी जिसे जैक वेल्च चला रहे थे, उनके सामने अपने से जुड़ने की पेशकश की। पर उन्हें अपने यहाँ आने के लिए मनाने के लिए पेप्सिको के सी.ई.ओ. वेयने केलोवे ने कहा, ‘मैं जानता हूँ कि जैक सबसे बेहतरीन सी.ई.ओ. है और संभवतः जी.ई. बेहतरीन कंपनी; पर मैं पेप्सिको को तुम्हारे लिए एक खास जगह बना दूँगा।’

सन् 1994 में पेप्सिको जॉइन करने के बाद जब उन्हें कॉरपोरेट स्ट्रेटजी व डेवलपमेंट का सीनियर वाइस प्रेसीडेंट नियुक्त किया गया तो उन्होंने एक तरह से ग्लास सीलिंग तोड़ी। पर वह जानती थीं कि वहाँ पहुँचना एक बात है और वहाँ टिके रहना दूसरी बात। वह कहती हैं, “अगर आप किसी कंपनी के उच्च शिखर पर पहुँचना चाहते हैं तो मैं इस बात को मानती हूँ कि वह केवल संयुक्त राज्य में ही पहुँचा जा सकता है, पर आपको अपने पुरुष साथियों की तुलना में दुगुना काम करना होगा।” उन्होंने न सिर्फ दुगुना काम व कड़ी मेहनत की, वरन् पेप्सिको की चीफ फाइनेंशियल ऑफिसर व रेजीडेंट बनने के लिए अपना मार्ग भी तैयार किया। सन् 2001 में वह पेप्सिको इंक के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स की सदस्य भी बना दी गई।

अपने काम से किया प्यार

जब नूर्झ पेप्सिको से जुड़ी थींतो वह 44 वर्ष की थीं और तब से आज तक वह हर प्रमुख निर्णय में सम्मिलित होती आई हैं। वह मानती हैं कि संतुलन बनाए रखने के लिए आपको कंपनी को एक परिवार का रूप देना होगा। कंपनी तेज गति से कार्य करे, इसके लिए बेहतरीन लोगों को उसमें जोड़ना होगा। वह कंपनी के हर कर्मचारी को परिवार का हिस्सा

मानकर उनकी हरसंभव मदद करती हैं। एक बार जब इंदिरा यात्रा पर थीं, उनकी बेटी ने उन्हें इस बात की अनुमति लेने के लिए फोन किया कि वह गेम खेल सकती है कि नहीं। रिसेप्शनिस्ट को उसकी दिनचर्या पता थी, इसलिए उसने पूछा कि ‘तुमने अपना होमवर्क पूरा कर लिया है कि नहीं? तुमने नाश्ता किया कि नहीं? ठीक है, अब तुम आधे घंटे के लिए गेम खेल सकती हो।’ फिर उसने इंदिरा के लिए वॉयस मैसेज छोड़ा कि मैंने आपकी बेटी को गेम खेलने की अनुमति दे दी है। किसी अन्य कॉरपोरेशन में ऐसी बातें सुनने को नहीं मिलतीं; पर इंदिरा ने पेप्सिको को इस तरह का बना दिया है, जहाँ हर कोई एक-दूसरे के परिवार के बारे में अच्छी तरह से जानता है।

वह मानती हैं—“सफलता का अर्थ पैसा, सम्मान या ताकत नहीं है, बल्कि अपने आपको खुश व पूर्ण महसूस करना है। और वह उस चीज में अपना समय व जीवन लगाने से मिलती है, जिसे आप सबसे ज्यादा प्यार करते हैं। सफलता का आधार इस बात में निहित है कि आप जीवन में क्या करना चाहते हैं। और जो लोग इस बात को जान लेते हैं, उन्हें अपने आपको भाग्यशाली मानना चाहिए। सबसे महत्वपूर्ण अच्छा करने की कोशिश करना और उस तक पहुँचने का प्रयास करना है। इसी तरह आप अपनी क्षमताओं को पूर्णता प्रदान कर सकते हैं। सफलता पानी है तो कभी भी सीखना खत्म न करें। वैसे भी सीखने का अर्थ केवल शैक्षिक ज्ञान पाना नहीं है, वरन् दुनिया में जो घट रहा है उसके प्रति अवगत रहना है। अपनी स्वाभाविक उत्सुकता को बनाए रखें। हमेशा अपने दिमाग की खिड़कियाँ खुली रखें, क्योंकि हम जिस दुनिया में रहते हैं, वह विभिन्न संस्कृतियों का संगम है और हमें हर तरह के लोगों के साथ अगर बेहतर ढंग से व्यवहार करना है तो अपनी सोच को संकीर्ण रखते हुए कर पाना असंभव है। ऊँचे लक्ष्य रखें और उन्हें पाने में जुट जाएँ।”

संतुलन अनिवार्य है

इंदिरा बेशक भारत में नहीं रहतीं, पर वह दिल से भारतीय हैं और भारतीय संस्कृति का आदर करती हैं। यह बात अगर उनकी सोच से परिलक्षित होती है तो उनके परिधानों से भी झलकती है। ऑफिस के अधिकांश समारोहों में वह साड़ी पहनती हैं।

इस मुकाम पर पहुँचने के बाद व्यस्तताओं व कार्यक्षेत्र की जिम्मेदारियों की वजह से अधिकांश महिलाएँ परिवार पर पूरी तरह से ध्यान नहीं दे पाती हैं; पर इंदिरा जितनी कुशलता से अपने ऑफिस को सँभालती हैं उतनी ही दक्षता से घर की हर जिम्मेदारी को उठाती हैं। जिस तरह से वह दोनों क्षेत्रों में संतुलन बनाए हुए हैं, वह किसी उदाहरण से कम नहीं है।

दुनिया भर में ख्याति और इतनी सफलता पाने के बावजूद नूई एक भारतीय महिला हैं, जिन्होंने पत्नी व माँ की भूमिका में भी अपने को बखूबी ढाल रखा है। उनके घर में प्रवेश करने से पहले जूते-चप्पल उतारने पड़ते हैं, क्योंकि हर समय वहाँ गणेश की मूर्ति के आगे एक दीया जलता रहता है। काम के समय बेशक वह लाखों-करोड़ों डॉलर का कारोबार करती नजर आएँ, पर जब वह घर आती हैं तो ऐसे कदम रखती हैं मानो किसी मंदिर में प्रवेश कर रही हैं। उनके घर में 18 घंटे कर्नाटक संगीत बजाता रहता है। जब कभी तनाव उन पर हावी होने लगता है तो वह आँखें मूँदकर तिरुपति जैसे किसी मंदिर की कल्पना करती हैं और उन्हें महसूस होता है कि वह दुनिया को जीत सकती हैं और फिर सब आसान लगने लगता है।

एक माँ और एक कॉरपोरेट एजीक्यूटिव होना क्या वाकई कठिन काम है? नूई मानती हैं, “यह सचमुच बहुत कठिन है। आप इस सच को तो झुठला भी सकती हैं कि आप शीर्ष अधिकारी हैं, पर इस सच को नहीं कि आप माँ हैं। वह भूमिका तो सबसे पहले स्थान पर आती है। मेरे पति मेरी सबसे बड़ी ताकत हैं। कठिन समय में मेरा परिवार और ईश्वर ही मेरी मदद करता है। अगर तब भी कुछ नहीं होता तो मैं भारत में अपनी माँ को फोन करती हूँ और उस समय जब वहाँ रात होती है, वह उठकर धैर्य से मेरी बात सुनती हैं और शायद ईश्वर के सामने तिरुपति आने का संकल्प लेती हैं। मैंने दुनिया को अपनी माँ के विश्वास के चश्मे से देखा है और वह मेरे लिए जीवन का मार्ग दिखानेवाला स्तंभ हैं।”

सर्वाधिक वेतन पानेवाली महिला

नूई सर्वाधिक वेतन पानेवाली महिला हैं, जिनका प्रतिदिन का वेतन ही लगभग 10 लाख रुपए है। उनके अपने निजी सहायक, मेकअप आर्टिस्ट, सुरक्षाकर्मी, मीडिया के लोग आदि हैं और हर छोटे-से-छोटे काम के लिए नौकर हैं; लेकिन फिर भी वह एक दिन के लिए भी इस बात को नहीं भूलीं कि उन्हें पुरुष सहकर्मियों की अपेक्षा दुगुना काम करना है। वे अपनी बेटियों को यही सिखाना चाहती हैं कि हमेशा विनम्र बने रहो। यह पद कल नहीं भी हो सकता है, पर अगर तुम्हारे अंदर का इनसान नहीं बदलता है तो तुम अच्छी-बुरी दोनों स्थितियों का सामना कर सकते हो। उस समय तो नूई ने सबकी कल्पनाओं तक को कुचल दिया था, जब उन्होंने वर्ष 2001 में पेप्सिको के सी.ई.ओ. स्टीव रेनमुंड की जगह ली। वह चाहे कोलकाता के आई.आई.एम. में अध्ययन करते हुए एक औसत छात्रा की गिनती में आती हों, पर इससे यह तो साबित हो ही जाता है कि किसी भी दृढ़ इच्छा-शक्ति रखनेवाले व्यक्ति के लिए कुछ भी पाना कठिन नहीं है। विवादों से दूर रहना पसंद करनेवाली नूई मानती हैं कि इसके लिए बस आवश्यकता है तो धैर्य व असंभव को संभव में बदलने के इरादे की।

वर्ष 2008 में नूई को यू.एस. न्यूज व वर्ल्ड रिपोर्ट ने अमेरिका की बेस्ट लीडर कहा। सन् 2007 में भारत सरकार ने उन्हें 'पद्म भूषण' से सम्मानित किया। सन् 2008 में उन्हें अमेरिकन एकेडमी ऑफ आर्ट्स एंड साइंसेज की फेलोशिप के लिए चुना गया। इसी वर्ष वह यू.एस. बिजनेस काउंसिल की चेयरवूमन चुनी गई और ग्लोबल सप्लाई चेन लीडर्स ग्रुप द्वारा सन् 2009 की सी.ई.ओ. का दर्जा उन्हें दिया गया।

इस समय इंदिरा अपने पति राज व दो बेटियों के साथ ग्रीनविच में रहती हैं। काम के प्रति उनकी गंभीरता अगर उनके चेहरे से पढ़ी जा सकती है तो विनोदप्रियता भी देखी जा सकती है। वह सदा खिलखिलाती रहती हैं और होंठों पर एक मुसकान बनी रहती है। कला के प्रति उनकी दिलचस्पी का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि वह न्यूयॉर्क सिटी में लिंकन सेंटर फॉर परफॉर्मिंग आर्ट्स के मंडल की सदस्या हैं।



इंदु जैन



मीडिया के फलक को किया विस्तृत

चेयरमैन, टाइम्स ऑफ इंडिया

“भेदे जीवन का लक्ष्य है खुद को और दूसरों को भौतिक व आध्यात्मिक ढंग से संपन्न बनाना।”

बेनेट, कोलोमन ऐंड कंपनी—भारत का विशालतम मीडिया समूह, जिसका अखबार टाइम्स ऑफ इंडिया है—की चेयरमैन इंदु जैन एक उद्यमी, शिक्षाविद्, अध्यात्मावादी होने के साथ-साथ कला और संस्कृति की संरक्षक होने के साथ-साथ मानवतावादी भी हैं। सन् 2000 में यूनाइटेड नेशंस में उन्होंने धार्मिक और आध्यात्मिक नेताओं के मिलेनियम वर्ल्ड पीस सम्मिट को संबोधित किया। ‘फोर्ब्स’ सन् 2010 की दुनिया की अरबपतियों की सूची में 75 वर्षीय इंदु जैन को सूचीबद्ध किया। वह बीसवीं अमीर भारतीय महिला हैं, जिनकी संपत्ति 2.68 अरब डॉलर अनुमानित की गई है। वह दुनिया की 317वीं अमीर महिला हैं।

8 सितंबर, 1936 को फैजाबाद, उत्तर प्रदेश में जनमीइंदु जैन को भारत के उद्योगपति परिवार साहू जैन से विरासत में धन-संपदा मिली। साहू जैन का परिवार उत्तर प्रदेश के बिजनौर जिले के छोटे से शहर नजीबाबाद से था। उन्होंने अशोक कुमार जैन से विवाह किया और वह दो पुत्रों समीर व विनीत जैन की माँ हैं। समीर जैन टाइम्स ऑफ इंडिया के चेयरमैन हैं और विनीत जैन मैनेजिंग डायरेक्टर।

3 नवंबर, 1838 को बंबई में द बॉम्बे टाइम्स एंड जर्नल ऑफ कॉमर्स नाम से टाइम्स ऑफ इंडिया का प्रकाशन आरंभ हुआ था। उसमें ब्रिटेन व उपमहाद्वीपों की खबरें छापी जाती थीं। प्रत्येक बुधवार और शनिवार को वह छपा करता था। फिर सन् 1850 में इसका प्रकाशन हर दिन होने लगा और सन् 1861 में इसे नाम दिया गया टाइम्स ऑफ इंडिया। 19वीं शताब्दी में इसमें 800 से अधिक लोग काम करते थे और भारत व यूरोप में इसका काफी सर्कुलेशन था। आजादी मिलने के बाद अखबार का स्वामित्व डालमिया के प्रसिद्ध उद्योगपति परिवार को दे दिया गया और बाद में इसे बिजनौर, उत्तर प्रदेश के साहू जैन ग्रुप के साहू शांति प्रसाद जैन ने ले लिया।

ताकत की अपनी शैली

टाइम्स ग्रुप भारत का सबसे विशालतम मीडिया सर्विसेज समूह है, जिसे ब्रिटेन की एक कंपनी से साहू परिवार ने अधिगृहीत किया था। टाइम्स ऑफ इंडिया की प्रतिदिन 3 करोड़ प्रतियाँ बिकती हैं। इंदु जैन के दोनों बेटे—समीर और विनीत—इसे सँभाल रहे हैं। कंपनी के 11 प्रकाशन केंद्र, 15 प्रिंटिंग सेंटर, 55 सेल्स ऑफिस, 7,000 से अधिक कर्मचारी, 5 दैनिक, 2 मुख्य पत्रिकाएँ, 2,468 शहरों व नगरों में पहुँचनेवाली 28 अन्य पत्रिकाएँ, 32 रेडियो स्टेशन, 2 टेलीविजन न्यूज चैनल, 1 टेलीविजन लाइफ स्टाइल चैनल और 700 करोड़ अमेरिकी डॉलर से अधिक का टर्नओवर है।

साधारण ढंग से रहनेवाली व सादगी-पसंद इंदु जैन एक ताकतवर व अमीर महिला, किसी ताकतवर महिला की छवि के रूप में कहीं से भी फिट बेशक न लगें, पर वह ताकत को अपनी एक शैली से धारण करती हैं। उनके लिए ताकत का अर्थ है लोगों का उनके मिशन को स्वीकृति देना और काम को प्रसन्नता व उत्साह से करना। श्री श्री रविशंकर व सद्गुरु जग्गी वासुदेव की शिष्या ने अपनी सारी आध्यात्मिक, सांस्कृतिक व सामाजिक संवेदनशीलता अपने समूह में लगा दी है। चेयरमैन होने के नाते उन्होंने भारत के विशालतम मीडिया समूह का विकास करने में अपनी सारी ऊर्जा लगा दी और परिणाम आज सबके सामने है।

मानवीय सोच

वह टाइम्स फाउंडेशन की संस्थापक और भारतीय ज्ञानपीठ फाउंडेशन की चेयरपर्सन भी हैं। टाइम्स फाउंडेशन, जिसे हर समय उनका मार्गदर्शन मिलता रहता है, ने विकास के क्षेत्र में दिए अपने योगदान व गतिविधियों के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ख्याति अर्जित की है। मानवतावादी इंदु जैन के निर्देशन में टाइम्स फाउंडेशन बाढ़, भूकंप, महामारियों जैसी आपदाओं के लिए सामुदायिक सेवाएँ, रिसर्च फाउंडेशन और टाइम्स राहत कोष चलाता है। महिला उत्थान के लिए निरंतर प्रयासरत इंदु जैन औरतों के अधिकारों और कल्याण के लिए सक्रिय रूप से सहयोग देती हैं। वह फिक्की (एफ.एल.ओ.) की महिला शाखा की संस्थापक अध्यक्ष भी हैं।

अनेक आध्यात्मिक व चैरिटेबल कार्यों के प्रति उनके समर्पण से हर कोई परिचित है। पूर्णतया मानवीय और आध्यात्मिक दृष्टिकोण रखनेवाली इंदु जैन के व्यक्तित्व का एक अन्य पहलू यह है कि वह भारत में मीडिया के फलक को विस्तृत व सही दिशा में ले जाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

सौम्यता की प्रतिमूर्ति, जिनके चेहरे पर एक तेज है और हमेशा एक शांत भाव पसरा रहता है, के इर्द-गिर्द जिस तरह एक अध्यात्म की लहर बहती है, वैसे ही उनका जिक्र करने भर से लोगों के चेहरों पर सम्मान के भाव परिलक्षित हो जाते हैं।

वह मानती हैं कि अध्यात्म आपको फिट बनाए रखता है, क्योंकि उस स्थिति में दिमाग एकदम तनाव-रहित रहता है। इससे हर चीज बेहतर स्थिति में रहती है—खाना, चलना, बात करना, वह हर काम जिसका संबंध आपके शरीर से है। केवल अध्यात्म ही उनके जीवन का अहम हिस्सा नहीं है, वरन् वह अपने खाने-पीने के प्रति भी सचेत रहती हैं।

वह कहती हैं कि जब मैं 70 वर्ष की होने वाली थी तो मेरे बेटों ने मुझे चेयरमैन बना दिया। इसलिए मैं चेयरमैन बन गई। मुझे जहाँ भी लगा दो, वहाँ पल्लवित व पुष्पित हो जाती हूँ। मैं ऐसी ही हूँ। इतने बड़े पद और गरिमामय व्यक्तित्व की स्वामिनी होने के बावजूद इंदु जैन को अहंकार नहीं है। कंपनी में जहाँ भी कहीं विवाद की स्थिति उत्पन्न होती है, वह उसे सुलझाने को तैयार रहती है, चाहे वह समस्या मजदूरों से जुड़ी हो या किसी उच्च अधिकारी से। जहाँ भी संवादहीनता की स्थिति पैदा हो जाती है, वह बीच में आकर उसे सुलझाती हैं।

वर्षों तक गृहिणी की भूमिका निभाने के बाद इतने बड़े कार्यभार को सँभालना आसान नहीं था, पर उन्होंने इसे बखूबी कर दिखाया। वह मानती हैं कि काम ने मेरे लिए पूर्णतया अलग आयाम खोल दिए। दैवी शक्ति का प्रतीक लगनेवाली इंदु जैन के लिए हर रिश्ता महत्वपूर्ण

है, क्योंकि उनकी नजरों में अगर कोई रिश्ता अधूरा है तो ज्ञान संपूर्णतया प्राप्त नहीं होता है।

‘अंतरराष्ट्रीय लाइफस्टाइल एचीवमेंट अवार्ड’ से सम्मानित इंदु जैन मानती हैं कि पैसा किसी से छीनकर नहीं मिलता। अगर आपके पास उसे पाने की दृढ़ता है तो ईश्वर आपको उससे भर देगा। एक गरीब आदमी इसलिए गरीब है, क्योंकि वह मान रहा है कि वह गरीब है, वह सोच रहा है कि वह गरीब है; अन्यथा वह कीचड़ को सोना बनाने की क्षमता रखता है।



एकता कपूर



बदला भारतीय टेलीविजन उद्योग का चेहरा

जॉइंट मैनेजिंग व क्रिएटिव डायरेक्टर, बालाजी फिल्म्स

“काम करना और शुश्रा करना मेरा निजी ध्येय है। मैं मानती हूँ कि व्यक्ति जैसा है उसे वैज्ञानीकी दृष्टि से चाहिए। जिस क्षण आप शुद्ध को जान लेते हैं, आप अगले दिन का इंतजार शुश्री से और एक नए अवसरे को पाने के साथ करने लगते हैं। वह अवसरे, जिसके साथ आप आगे बढ़कर अपने स्पन्दनों को पूरा कर सकते हैं।”

वह जितना अपने पारिवारिक सीरियलों और उनमें दिए जानेवाले नाटकीय मोड़ों के लिए जानी जाती हैं, उतना ही अपने उग्र स्वभाव के लिए भी। उनकी रचनात्मकता और टी.वी. की दुनिया को नया आयाम देने तथा उसे प्रोफेशनल बनाने के कारण उनके चाहनेवालों की

संख्या असीमित है। लोगों के घरों और जिंदगी में अपने सीरियलों के माध्यम से एक खास जगह बना लेने के कारण उनके प्रशंसकों की अगर लंबी सूची है तो उनके आलोचकों की भी कमी नहीं है, जो निरंतर उनके सीरियलों की कहानी में होनेवाले नाटकीय परिवर्तनों पर बहस छेड़ देते हैं।

यह हैं आज के समय की भारतीय टेलीविजन उद्योग की क्वीन कही जाने वाली एकता कपूर। वही एकमात्र ऐसी महिला हैं, जिन्होंने तमाम मध्यम वर्ग की टी.वी. देखने की आदतों में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया। उनके सास-बहू के सीरियलों ने न सिर्फ लोगों का ध्यान खींचा, बल्कि आलोचनाओं का बाजार भी गरम कर ऐसे भी लोकप्रियता को बटोरा। बालाजी टेलीफिल्म्स नामक अपनी कंपनी के बैनर तले बने अपने सीरियलों की वजह से उन्होंने न सिर्फ लोकप्रियता हासिल की, बल्कि टेलीविजन की दुनिया को भी एक नया आयाम दिया।

भारतीय टेलीविजन पर किया एकाधिकार

7 जून, 1975 को जनमीएकता कपूर बॉलीवुड के एक जमाने में सुपर स्टार रह चुके जितेंद्र की बेटी और आज के हीरो तुषार कपूर की बहन हैं। बॉम्बे स्कॉटिश स्कूल से पढ़ाई करने के बाद उन्होंने मिट्टीबाई कॉलेज में दाखिला लिया। उन्हें पढ़ाई में बहुत ज्यादा दिलचस्पी नहीं थी। हैरानी की बात तो यह है कि बचपन में मोटी, सुस्त और पढ़ाई से जी चुरानेवाली आज की एकता का जादू सिर चढ़कर बोलता है। बचपन में माँ-बाप के प्यार ने उन्हें बिगाड़ दिया था कि वह कुछ करना ही नहीं चाहती थीं। जितेंद्र व उनकी माँ शोभा कपूर चाहते थे कि वह एम.बी.ए. करें, पर जीवन का कोई मकसद न होने के कारण वह कुछ भी करने को तैयार नहीं थीं। बस सारा दिन टी.वी. देखने का शौक था और यह मौका वह कभी नहीं छोड़ती थीं।

किसी तरह कॉलेज की पढ़ाई खत्म करने के बाद उन्होंने एक एडवरटाइजिंग एजेंसी जॉइन की और असिस्टेंट मॉडल कोऑर्डिनेटर की हैसियत से काम करने लगीं। पिता जितेंद्र के फिल्मों में होने के बावजूद उन्होंने बचपन से कभी फिल्म इंडस्ट्री में काम करने की दिलचस्पी नहीं दिखाई। तब उनके पिता ने उन्हें सलाह दी कि वह टी.वी. सीरियल बनाने की दुनिया में जाए। 19 उम्र की आयु में वह इस क्षेत्र से जुड़ गई और बहुत जल्दी ही भारतीय टेलीविजन उद्योग के चेहरे को बदल दिया और एक तरह से आज पूरी तरह से उस पर उनका एकाधिकार है। साधारण सी दिखनेवाली एकता बहुत असाधारण व्यक्तित्व की स्वामिनी हैं। अगर उनकी उम्र व अनुभव पर नजर डालें तो जिस कुशलता से उन्होंने

क्रिएटिविटी, मार्केटिंग व मैनेजमेंट के गुरों को सीखकर उन्हें लागू किया, वह मनोरंजन की दुनिया में किसी सराहनीय योगदान से कम नहीं है।

जादुई करिश्मा

यह आत्मविश्वास से युक्त युवा महिला अपनी वशीभूत करनेवाली हँसी से लोगों का दिल तो मोहती ही है, साथ ही यह भी जानती है कि वह क्या करना चाहती है। कैमरे के सामने से नहीं, कैमरे के पीछे रहते हुए कुछ करना चाहिए, इसे ही अपना लक्ष्य बनाते हुए उन्होंने बालाजी फिल्म्स की नींव रखी। एक जादुई करिश्मे से ओत-प्रोत एकता का टी.वी. के प्राइम टाइम पर मानो एकाधिकार है। सप्ताह में 30 घंटे उनके बनाए कार्यक्रमों पर प्रमुख चैनल निर्भर हैं और दिन के समय दुबारा प्रसारित होने पर भी विज्ञापनों की कोई कमी नहीं होती।

बालाजी फिल्म्स की क्रिएटिव डायरेक्टर एकता अब तक 25 से भी ज्यादा सीरियल बना चुकी हैं और विभिन्न टी.वी. चैनलों पर हफ्ते में चार-पाँच की औसत से उन्हें दिखाया जाता है। एक समय ऐसा भी था, जब उनके सीरियलों ने जनता की कल्पना को वशीभूत कर लिया था। उन्होंने भारत में पिछले सारे टी.वी. सीरियल प्रोडक्शन के रिकॉर्ड को तो तोड़ा ही है, साथ ही लोकप्रियता के भी सारे रिकॉर्ड तोड़ डाले हैं। उनका सबसे प्रसिद्ध सीरियल था ‘क्योंकि सास भी कभी बहु थी’, जो सन् 2000 में आरंभ हुआ था और इतने लंबे समय तक चला कि अंतत : 2008 में उसे बंद करने के आदेश अदालत को देने पड़े। ‘क’ अक्षर से आरंभ होनेवाले सीरियल हिट होंगे, इस अवधारणा को मानते हुए उन्होंने फिर तो ‘क’ से शुरू होने वाले सीरियलों की लाइन ही लगा दी—‘कहानी घर-घर की’, ‘कहीं तो होगा’, ‘काव्यांजलि’, ‘क्या होगा निम्मो का’, ‘कसम से’, ‘कहींकिसी रोज़’, ‘कसौटी जिंदगी की’, ‘कुसुम’, ‘कुटुंब’, ‘कलश’, ‘कुंडली’ आदि। सन् 2010 में आई उनकी फिल्म ‘वन्स अपॉन ए टाइम इन मुंबई’ काफी चर्चा में रही।

अड़चनों को लिया चुनौती की तरह

एक सेलेब्रिटी पिता की बेटी और बचपन से ही फिल्मी दुनिया के तौर-तरीकों को समझने के बावजूद उन्हें बहुत सारी अड़चनों का सामना करना पड़ा। सन् 1994 में उनका पहला म्यूजिकल गेम शो ‘धम धमाका’ प्रसारित होने के बाद से वह एक लंबा व कठिनाइयों भरा रास्ता तय करने के बाद ही आज यहाँ पहुँच पाई हैं। वह कहती हैं, “मेरी उम्र कम है, इस सोच को तोड़ना मेरे लिए किसी बड़ी चुनौती से कम न था। मैं एक अमीर घराने से संबंधित हूँ और अनुभवहीन हूँ, आरंभ में यह बात मेरे लिए नुकसानदेह ही साबित हुई थी और उसके बाद हर दिन केवल 2 घंटे के लिए शो प्रसारित होने के लिए हर शो के लिए छह

महीने का लंबा इंतजार भी किसी चुनौती से कम नहीं था।” इन सब परेशानियों का कारण था एकता का अतिरिक्त उत्साह, जिसके चलते उन्हें बहुत अधिक आर्थिक नुकसान सहना पड़ता।

चाहे पसंद करें या नापसंद, पर बालाजी के बैनर तले सीरियलों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है और इसका सारा श्रेय वन वूमैन आर्मी कही जानेवाली एकता कपूर को जाता है। उन्होंने आज बालाजी टेलीफिल्म्स को घर-घर में इतना प्रचलित कर दिया है कि किसी-न-किसी वजह से उनके सीरियल सदा चर्चा में रहते हैं। यह बच्चों जैसे चेहरेवाली युवा, जिसका कभी आम लड़की की तरह शादी करके घर बसाने का सपना था, वह आज की 10 शीर्ष महिला उद्यमियों में से एक के रूप में गिनी जाती हैं।

पूर्णतया प्रोफेशनल और प्रखर व्यापारिक समझ रखनेवाली एकता के एक समय में भारतीय चैनलों पर प्रसारित होनेवाले 50 सीरियलों में से 38 सीरियल होते थे। लेकिन सन् 2008 में ऐसा वक्त भी आया, जब उनकी कहानियों से उक्ताई जनता की वजह से टी.आर.पी. घटने लगी और चैनलों को उनके शो रोकने पड़े। सन् 2008-09 में केवल 3-4 शो ही प्रसारित होते थे। कंपनी ने मार्च 2009 में 14 करोड़ रुपए का घाटा दिखाया, जिसने मार्च 2008 में 24 करोड़ रुपए का मुनाफा दिखाया था। लोग कहने लगे कि उनका जादू थोड़े समय के लिए ही था, क्योंकि वह बैंधी-बैंधाई लीक पर चलने की आदी हैं। बदलते मीडिया के साथ तादात्म्य न रख पाने के कारण ही उनकी साख गिरती जा रही है, आलोचकों की इन बातों को एकता ने एक चुनौती की तरह लिया; क्योंकि उनके आलोचक यह नहीं जानते थे कि एकता अपनी कमियों को दूर करना जानती हैं और बालाजी को मनोरंजन की दुनिया का एक व्यापक साम्राज्य बनाना उनका जुनून है।

बनाया मनोरंजन की दुनिया को व्यावसायिक

कुरते और ट्राउजर के अपने बिंदास पहनावे, नजरिए और बेबाकी तथा माथे पर लगे नारंगी टीके के लिए विख्यात एकता गणेश की परम भक्त हैं। फैमिली ड्रामे से लोगों को टी.वी. से चिपके रहने के लिए बाध्य करनेवाली एकता के प्रयासों व मेहनत से उनकी कंपनी आज 200 करोड़ रुपए की बन गई है। वह लगातार सीढ़ी-दर-सीढ़ी चढ़ती जा रही हैं और उनकी कामयाबी को देखते हुए यह अंदाजा लगाना गलत नहीं होगा कि वह एक दिन फिल्मी दुनिया में शोहरत की बुलंदियों को छू लेंगी।

35 वर्षीया एकता देश की ऐसी सफल उद्यमी हैं, जो अपनी आयु के लोगों से बहुत आगे निकल गई हैं। लगातार दिन-रात काम करते हुए वह अपने स्टूडियो में ही अधिकतर समय

बिताती हैं, जहाँ उनके डेली सोप व फिल्मों की शूटिंग साथ-साथ होती रहती है। एकता उस नई पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिनके लिए कामयाबी के शिखर को छूना किसी बहुत बड़े जुनून से कम नहीं है। इसके लिए वह हिम्मत हारे बिना बहुत निडरता से लक्ष्य को पाने में जुटी रहती हैं।

उनका कहना है कि वह सीरियल बनाने की कला को व्यावसायिक बनाने में कामयाब हो पाई हैं। आम जनता की संवेदनाओं को छूते उनके सीरियलों में हर तरह का मसाला होता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि वे लंबे समय तक चलते ही चले जाते हैं। उनके अनुसार, “मैं अपने काम का पूरा आनंद उठाती हूँ, लोगों को हँसाती और रु लाती हूँ। मेरे सीरियलों की औरत बोल्ड होती हैं और उनकी अपनी एक सोच होती है। साथ ही वे मध्यम वर्ग के मूल्यों व परंपराओं को भी सम्मान देती हैं।”

उम्र को आड़े नहीं आने दिया

10 करोड़ की छोटी सी इक्विटीवाली बालाजी टेलीफिल्म्स आज एंटरटेनमेंट इंडस्ट्री की लीडर कंपनी है। वह आज एक विशाल पब्लिक लिमिटेड कंपनी बन चुकी है। माना जाता है कि एकता कपूर ने फिल्म इंडस्ट्री को कॉरपोरेट कल्चर क्या होता है, इससे अवगत कराया है। सन् 1994 से जब एकता ने बहुत अधिक लोकप्रिय हुए सीरियल ‘हम पाँच’ को बालाजी टेलीफिल्म्स के बैनर तले बनाया था, तब से उन्होंने टेलीविजन पर अपना आधिपत्य जमा लिया और अधिकांश मुख्य चैनलों पर तब से उनके सीरियल प्रसारित हो रहे हैं।

सन् 1995 में जब एकता ने कपूर हाउस के गैरेज में पाँच लोगों के साथ बालाजी टेलीफिल्म्स की स्थापना की थी तो उन्हें अपनी हर कोशिश के साथ घाटा ही उठाना पड़ा था। पर पिता जितेंद्र के सहयोग व प्रोत्साहन के कारण वह आगे बढ़ती गई और प्रयासों को जारी रखा। उन्होंने इस बात को साबित कर दिखाया है कि अगर जज्बा हो तो उम्र व अनुभव कम होने पर भी सपनों को पूरा किया जा सकता है। अपने गुस्सैल और अक्खड़ स्वभाव के लिए जानी जानेवाली एकता अपनी माँ को आदर्श मानती हैं, जिनसे वह संतुलित रहना सीख रही हैं। उनकी माँ शोभा कपूर, जो शादी के बाद एयर होस्टेस की नौकरी छोड़ गृहस्थी सँभाल रही थीं, बेटी के बड़े होने व उसके लक्ष्यों में उसकी मदद करने के लिए उसको सहयोग देने लगीं। वह बालाजी फिल्म्स की सक्रिय प्रबंध निदेशक हैं और कंपनी का प्रोडक्शन बिजनेस सँभालती हैं।

माँ को घर व काम को संतुलित ढंग से सँभालते देख एकता भी इसे अपनाना चाहती हैं, क्योंकि वह मानती हैं कि अत्यधिक सफलता पाने की चाह कभी-कभी नुकसानदेह भी हो सकती है। संतुलित जीवन ही सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है। बिजनेस वूमैन मानने के बजाय कर्मशियल लाइन में स्वयं को एक क्रिएटिव व्यक्ति माननेवाली एकता सफलता के पीछे दौड़ने में यकीन नहीं रखती हैं। वह कहती हैं, “काम करना और खुश रहना मेरा निजी ध्येय है। मैं मानती हूँ कि व्यक्ति जैसा है उसे वैसा ही रहना चाहिए। जिस क्षण आप खुद को जान लेते हैं, आप अगले दिन का इंतजार खुशी से और एक नए अवसर को पाने के साथ करने लगते हैं। वह अवसर जिसके साथ आप आगे बढ़कर अपने सपनों को पूरा कर सकते हैं।”

मि. राइट का इंतजार

उनके निजी जीवन को लेकर समय-समय पर बहुत सी अटकलें लगाई जाती रही हैं, पर अभी एकता का विवाह करने का कोई इरादा नहीं है। अपने व्यवहार से बहुत बोल्ड, मूडी व रूखी लगनेवाली एकता बहुत ही रोमांटिक किस्म की हैं और मानती हैं कि हर किसी के लिए कोई-न-कोई बना होता है और जिस दिन भी उनकी उससे मुलाकात हो गई, वह शादी कर लेंगी। वह कहती हैं, “मैं ईश्वर और नियति में यकीन रखती हूँ और यकीन है कि एक दिन मेरा मि. राइट मेरे सामने आकर खड़ा हो जाएगा। अभी तो मैं अपना सारा ध्यान केवल काम पर लगाना चाहती हूँ, क्योंकि जिस क्षण मुझे मेरा साथी मिला, मैं अपना सारा ध्यान उस पर लगा दूँगी।”

उपलब्धियों ने दिलाए सम्मान

बहुत कम उम्र में असाधारण सफलता प्राप्त करनेवाली एकता युवा प्रतिभाओं, खासकर लड़कियों को बढ़ावा देने की अपनी खासियत के लिए जानी जाती हैं। उनकी कंपनी में काम करनेवाली अधिकतर क्रिएटिव डायरेक्टर 20 से 30 वर्ष की महिलाएँ ही हैं। उनका नाराज हो जाना या काम पूरा न होने पर डॉट देने की आदत को भी उनके सहयोगी इसलिए नजरअंदाज कर जाते हैं, क्योंकि एकता खुद काम को लेकर बहुत कमिटेड हैं।

टी.वी. उद्योग में एक नया मुकाम बनाने और अपनी उपलब्धियों के लिए उन्हें सन् 2001 में ‘अर्नेस्ट ऐंड यंग स्टार्टअप एंटरप्रेन्योर’ अवार्ड से सम्मानित किया गया। सन् 2002 में उन्हें इकोनॉमिक्स टाइम्स का बेस्ट एमरजिंग टी.वी. प्रोड्यूसर अवार्ड दिया गया।



कल्पना मोरपारिया



इंवेस्टमेंट बैंकिंग की राह प्रशस्त की

सी.ई.ओ., जे.पी. मोरगन, इंडिया

“यह आपकी हर समय कुछ नया व सूचनात्मक तथा अलग हरकर सीधने की क्षमता है, जो सफलता का निर्धारण करती है। आप जिस संगठन में कार्य करते हैं, उसके ढाँचे के अंतर्गत बेहतर प्रदर्शन करने का आपका उत्साह, सृजनात्मकता व भूख्य ही है, जो आपकी सफलता की कहानी लिखती है।”

पढ़ाई से उनका दूर-दूर तक सरोकार नहीं था। एक परीकथा जैसे विवाह की कल्पना उन्हें खुद को सजाने-सँवारने में व्यस्त रखती थी। उनका विवाह तो हुआ, पर उन्हें क्या पता था, उसी से उनके जीवन में एक सकारात्मक बदलाव आ जाएगा। पढ़ाई से दूर भागनेवाली कल्पना को उनके पति ने उसे जारी रखने को प्रेरित किया और सपनों की दुनिया में खोए रहनेवाली कल्पना ने बैंकिंग की दुनिया में कामयाबी का परचम लहराने के लिए कदम रखा

और आज कॅरियर के प्रति कभी सचेत न रहनेवाली कल्पना मोरपारिया भारत के दूसरे विशालतम बैंक की मैनेजिंग डायरेक्टर रह चुकी हैं। रिटायर होने के बाद जे.पी. मोरगन में बतौर सी.ई.ओ. उन्होंने अपने जीवन व कॅरियर की दूसरी पारी की शुरुआत कर यह बता दिया है कि अगर सपनों में जान हो तो पंख कभी खराब नहीं होते। वह जे.पी. मोरगन की इन्वेस्टमेंट बैंकिंग, एसेट मैनेजमेंट, ट्रेजरी सर्विस और प्रिंसिपल मैनेजमेंट सर्विस को देखती हैं। वह ग्रुप के भारत में सर्विस ग्रुप्स ऑपरेटिंग के लिए भी जिम्मेदार हैं और जे.पी. मोरगन की ग्लोबल स्ट्रेटिजी टीम की सदस्य भी हैं, जिसका मुख्यालय न्यूयॉर्क में है। वह कई अग्रणी कंपनियों के निदेशक मंडल में भी हैं।

सपनों की दुनिया

उनकी कामयाबी का सफर भी किसी चमत्कार से कम नहीं है, बिलकुल वैसा ही जैसे किसी ने जादुई छड़ी घुमाकर उनके सपनों और सोच की दिशा बदल दी हो। अगर ऐसा न होता तो क्या आज वह संभव हो पाता, जिसके बारे में न कभी उन्होंने सोचा था, न ही उसे पाने के लिए कभी किसी तरह का लक्ष्य निर्धारित किया था। अपने बचपन में उन्होंने कभी ऐसे ख्वाब नहीं बुने, जिसमें कुछ अलग हटकर करने की चाह हो; कभी छोटे-बड़े किसी तरह के लक्ष्य तय नहीं किए, न ही पढ़ाई के प्रति गंभीर हो स्कूल में प्रथम आने की होड़ मन में पाली। वह तो शीशों के सामने खड़े होकर अपने को निहारते हुए एक सुंदर से राजकुमार को घोड़े पर आते हुए देखने के रोमांच से भर जातीं और फिल्मी सितारों के ग्लैमर पर रशक करतीं। वह विवाह कर, एक आदर्श पत्नी बन परिवार की बैंधी-बैंधाई दिनचर्या में स्वयं को खुश रहने तक ही सीमित कर बड़ी हुई। एक पारंपरिक गुजराती परिवार में 30 मई, 1949 को जनमी कल्पना विवाह को ही जीवन का सच मानकर बड़ी हो रही थीं; पर वक्त ने उनके सामने ऐसी स्थितियाँ खड़ी कर दीं कि उनकी माँ, जो उनके अंदर एक सुघड़ गृहिणी बनने के गुण रोपने की हिमायती थीं, उन्हें ही अपनी दोनों बेटियों के अंदर महत्वाकांक्षाओं के बीज रोपने के लिए बाध्य होना पड़ा। बहुत कम उम्र में अपने पति को खोने के बाद कल्पना की माँ ने निर्णय लिया कि पढ़े-लिखे न होने की वजह से पति के जाने के बाद उन्हें जिस तरह की परेशानियाँ सहनी पड़ीं, वे उनकी बेटियाँ नहीं सहेंगी। पर कल्पना सबसे छोटी होने के कारण स्थितियों को गंभीरता से लेने के बजाय जीवन को मस्ती से जीने में यकीन रखती थीं। वह कहती हैं, “मैंने कभी बहुत ज्यादा मेहनत कर कक्षा में प्रथम आने की कोशिश नहीं की, बल्कि नाटक व नृत्य आदि में मेरी रुचि अधिक थी। वैसे भी मुझे कुछ बनना है, यह बात तो मेरे दिमाग में कभी आई ही नहीं। पर मेरी माँ मुझे आत्मनिर्भर बनाने को प्रतिबद्ध थीं और चूँकि उस समय लड़कियों के लिए बहुत सारे प्रोफेशन के विकल्प नहीं थे, इसलिए वह चाहती थीं कि मैं डॉक्टर बनूँ।”

मिले पंख

उनकी माँ ने उनके सपनों को ऐसे पंख दिए कि स्वयं को शीशे में निहारने के बजाय वह हकीकत की जमीन पर पैर रखना सीख गई और परिणाम आज सबके सामने है—वह गुजराती लड़की इंडस्ट्रियल क्रेडिट एंड इन्वेस्टमेंट कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लि. (आई.सी.आई.सी.आई.) के लिए पैसा उगाहनेवाली व सशक्त महिला बनकर उभरीं और सन् 1999 में न्यूयॉर्क स्टॉक एक्सचेंज की सूची में आ गई। उन्होंने आई.सी.आई.सी.आई. के आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के साथ मई 2002 में हुए विलय की अगुआई की और डाभोल पावर प्रोजेक्ट को सँभाला। संगठन को दिए 32 वर्षों की वजह से आई.सी.आई.सी.आई. और उनका नाम एक-दूसरे का पर्याय बन गए हैं और इसलिए सन् 2007 में रिटायर होने के बावजूद तथा जे.पी. मोरगन में दूसरी पारी आरंभ करने के बावजूद आई.सी.आई.सी.आई. का नाम लेने पर लोग उनका नाम भी अवश्य लेते हैं।

बदलाव की राह

स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद वह बंबई के सेंट जेवियर कॉलेज में जाना चाहती थीं, ताकि उनकी सहेलियों का साथ न छूटे—“पढ़ाई के प्रति गंभीर न होने के बावजूद मैं विज्ञान में अच्छी थी, इसलिए मेरी माँ ने मेरा दाखिला सोफिया कॉलेज में करा दिया—विशेषकर इसलिए, क्योंकि वह गल्स कॉलेज था।” 4 साल के डिग्री कोर्स में दूसरे साल में यह चुनना होता है कि आप मेडिसन पढ़ेंगे या नहीं—और कल्पना तो डॉक्टर बनना ही नहीं चाहती थीं। माँ का विरोध करना संभव न होने के कारण वह लापरवाह बनी रहीं, ताकि कट ऑफ लिस्ट में उनका नाम न आए और हुआ भी ऐसा—और उन्हें विज्ञान में ही ग्रेजुएशन करने की अनुमति मिल गई।

कॉलेज के मस्ती भरे दिन खत्म होने के कारण वह तय कर चुकी थीं कि वह आगे नहीं पढ़ेंगी, पर संयोगवश सन् 1970 में परिणाम निकलने के दो दिन बाद ही उन्हें एक स्कूल में नौकरी मिल गई। पर वोकल कॉर्ड में सूजन आने के कारण नौकरी छोड़ वह घर में रहने लगीं। लेकिन 10 महीने लगातार घर में रहने और खाना बनाने तथा घर सँभालने की दिनचर्या से ऊबी कल्पना में पहली बार तब कुछ ऐसा करने की ललक उठी, जो चुनौतीपूर्ण हो।

कल्पना की बड़ी बहन, जिसने लॉ पढ़ा था और एक सॉलीसिटर के ऑफिस में काम कर रही थी, उससे प्रेरित हो कल्पना ने सन् 1971 में बंबई के गवर्नरमेंट लॉ कॉलेज में दाखिला ले लिया। उस समय सरकार भारतीय संविधान में बहुत सुधार कर रही थी, जिसके अंतर्गत

कई मूलभूत अधिकारों को खत्म करने के कारण कॉलेज के छात्रों ने एक जुलूस निकाला, जिसमें उन्होंने भी भाग लिया। इसके बाद तो उनके अंदर पढ़ाई के प्रति दिलचस्पी पैदा हो गई और जीवन के प्रति उनकी सोच में भी व्यापक बदलाव आ गया और शादी का ख्याल प्राथमिकताओं की सूची में से हट गया। पर जो सोचें वही हो, ऐसा संभव नहीं है। कॉलेज के दूसरे वर्ष में उन्हें विवाह करना पड़ा। वह कहती हैं, “मुझे अपने पति जय सिंह एवं सुसुरालवालों का पूरा सहयोग मिला और मैं अपनी पढ़ाई पूरी करने में सफल हो पाई।”

एल-एल.बी. की डिग्री के साथ ही उन्हें एक लॉ फर्म में नौकरी मिल गई। इसके बाद कुछ अन्य कंपनियों में काम करने के बाद उन्होंने हिंदुस्तान लीवर में आवेदन किया, पर असफल रहीं। फिर उन्हें आई.सी.आई.सी.आई. के बारे में पता चला जिसमें कॉरपोरेशन का खुद का कानूनी विभाग था। पर उन्होंने सोचा, उन्हें वित्तीय ज्ञान तो है नहीं, यहाँ कैसे नौकरी मिल सकती है। एक दिन रीडर्स डाइजेस्ट में एक पंक्ति ने उनके जीवन की दिशा को फिर एक नया मोड़ दिया—‘जो आप करना चाहते हैं, उसके लिए कल का इंतजार न करें।’ आई.सी.आई.सी.आई. में आवेदन करने के तीन महीने बाद उन्हें जवाब मिला और विभिन्न तरह की प्रक्रियाओं व औपचारिकताओं को पूरा करने के बाद अंततः नवंबर 1975 में कल्पना की नियुक्ति वहाँ हो गई।

अलग हटकर सोचने की क्षमता

कल्पना के लिए ताकत का अर्थ है कुछ अलग करने की क्षमता। कल्पना ने फाइनेंस की पढ़ाई नहीं की, किसी बिजनेस स्कूल से मैनेजमेंट की डिग्री भी हासिल नहीं की, फिर भी फाइनेंस सेक्टर में अपनी काबिलियत का लोहा मनवाने में सफल रहीं और फाइनेंस कंपनी आई.सी.आई.सी.आई. को देश का प्रमुख वित्तीय सेवा संस्थान बनाने में अहम भूमिका निभाई। सन् 1982 के बाद 14 वर्षों तक आई.सी.आई.सी.आई. ने जो भी नई सेवा पेश की। उसे ग्राहकों तक पहुँचाने और मुनाफा देनेवाली बनाने में कल्पना का ही विशेष योगदान है।

“यह आपकी हर समय कुछ नया व रचनात्मक तथा अलग हटकर सोचने की क्षमता है, जो सफलता का निर्धारण करती है। आप जिस संगठन में कार्य करते हैं, उसके ढाँचे के अंतर्गत बेहतर प्रदर्शन करने का आपका उत्साह, सृजनात्मकता व भूख ही है, जो आपकी सफलता की कहानी लिखती है।”

“लोग मुझसे अक्सर दो सवाल पूछते हैं—एक तो यह कि क्या औरत होने से कामयाबी की राह में दिक्कतों का सामना करना पड़ता है, तो मेरा जवाब होता है कि आज मैं जहाँ हूँ,

वहाँ इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि मैं औरत हूँ या पुरुष। अगर किसी को इस बात से परेशानी है कि मैं एक औरत हूँ तो वह सब खुद झेले है। मैं तो सबसे पहले एक उद्यमी हूँ। दूसरा सवाल लोगों का होता है कि आप कैसे अपने कार्यक्षेत्र के जीवन में संतुलन बिठाती हैं? मेरा उत्तर हमेशा यही होता है कि मेरा काम ही मेरा जीवन है, इसलिए संतुलन करने का तो सवाल ही नहीं उठता है।”

“लोग कहते हैं कि मैं अपने समय के प्रति बहुत लचीली हूँ, तो हो सकता है कि मैं कुशल समय प्रबंधक नहीं हूँ। मुझे जितने लोगों से मिलना चाहिए, उससे कहीं अधिक लोगों से मैं मिलती हूँ। मैं सुबह जल्दी नहीं उठ सकती, इसलिए ऑफिस समय पर नहीं पहुँच पाती; पर देर तक काम हमेशा करती हूँ। जब मैं जे.पी. मोरगन में आई थी तो अपना 90 प्रतिशत समय ऑफिस में ही व्यतीत करती थी। मैं क्लाइंट्स से ज्यादा मिलती नहीं थी और मेरे योग्य साथी यह काम करते थे। पर जैसे-जैसे समय गुजरता गया, मैंने क्लाइंट्स, सरकार तथा मीडिया से मिलना शुरू कर दिया। मीडिया के साथ संवाद स्थापित करने में मुझे कभी परेशानी महसूस नहीं हुई। मुझे लगता है कि यह बहुत जरूरी है और इसके लिए समय निकालना भी जरूरी है। जब आप लोगों के सामने अपने विचार रखते हैं तो इससे फर्म का नाम व्यापक रूप से फैलाने में मदद मिलती है।”

उनके जीवन का मूल मंत्र है कि अगर आपको लगता है कि जो आपके लिए उपयुक्त है, वह वास्तव में हो नहीं रहा है तो तुरंत दिशा बदल लेनी चाहिए। वह मानती हैं कि बहुत सारी चीजों का निचोड़ निकालने के बाद एक सरल विचार का मंथन करें। अपने से बहुत सारे सवाल करें, उद्यमी होने की यही निशानी होती है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप किसी गाँव से आए हैं या हार्वर्ड बिजनेस स्कूल में पढ़े हैं। रिलीज के पहले सप्ताह फिल्म देखना अगर कल्पना की कमजोरी है तो शॉपिंग करने में भी उन्हें बहुत मजा आता है।

बचपन का शौक शानदार कपड़े पहनना और सजने-सँवरने की आदत उनके अंदर आज भी विद्यमान है। भारत के दूसरे विशालतम बैंक से रिटायर होने के बाद जे.पी. मोरगन में दूसरी पारी की शुरुआत करनेवाली कल्पना कहती हैं, “मैं आज गर्व से यह बात कह सकती हूँ कि कामयाबी पाने के बावजूद मैं वैसी ही हूँ जैसी थी। अपने साथियों के साथ मेरा व्यवहार मानवीय व संवेगात्मक है। अगर आप अच्छी उद्यमी हैं तो आपकी उद्यमशीलता एक गृहिणी की तरह घर चलाने से झलकेगी।”



কিরণ মজুমদার শো



বাযোটেকনোলোজী মেং লিখী সফলতা কী কহানী

সংস্থাপক ও চেয়ারপর্সন, বাযোটেক কংপনী

“এক মহিলা উদ্যমী কে দৃষ্ট মেং, জিল্লাকে পাই কোর্ড পুষ্টৈনী নাম
ওঁৈৱ সংপত্তি ভী নাহিঁ থী, মুঝে কোর্ড দ্বিক্ষত নাহিঁ আৰ্দ; লেকিন
ব্যবস্থা মেং জো শ্বানিয়াঁ হৈন, জিনকে কাণুণ কিল্সী ভী উদ্যমী কো
দ্বিক্ষতেঁ আতী হৈন, বৈক্ষী পঞ্জোনিয়াঁ মেঘে সামনে ভী আতী হৈন।
জনকে লিএ মুঝে লগতা হৈ কি ব্যবস্থা কো ঠীক কল্জে কী
আবশ্যিকতা হৈ। মুঝে হৃৎ বাত কা গৰ্ব হৈ কি মেং এক ভাসুনীয়
হুঁ ওঁৈৱ মেঘা সপনা এক হেস্তী কংপনী শবড়ী কল্জা হৈ, জিল্ল পৰ
মেং হী নাহিঁ, প্রত্যেক ভাসুনীয় গৰ্ব কৰু সকে।”

“মেং নে মাত্ৰ 10,000 রুপএ কী পুঁজী সে এক গৈৱাজ সে অপনী কংপনী কী শুৰুআত কী থী।
জিংদগী কা যহী তো রোমাংচ হৈ কি আপ শূন্য সে শুৰু কৰেঁ ওঁৈ ইতনা বড়া কাম কৰ জাএঁ কি

आपका काम दुनिया की नजरों में आ जाए।” कहना है बायोटेक क्वीन के रूप में जानी जानेवाली किरण मजूमदार शॉ का। 57 वर्षीय किरण एक ऐसी महत्त्वाकांक्षी, कर्मठ और दृढ़ निश्चयी महिला की जीती-जागती तसवीर पेश करती हैं जिन्होंने उस समय समाज में अपनी एक अलग पहचान और उद्यम से जुड़ा कैरियर बनाने की हिम्मत की जिस समय में महिलाएँ केवल घर की देहरी के अंदर ही रहने को मजबूर थीं और अपनी निजता को लेकर किसी तरह के सपने नहीं बुनती थीं।

खुद से किया एक वादा

देश की सर्वाधिक सफल और संपन्न महिला किरण ने सन् 1978 में 25 वर्ष की आयु में ‘बायोकॉन’ को स्थापित किया और खुद से वादा भी किया कि एक दिन वह भारतीय महिला उद्यमियों के लिए मिसाल बनकर दिखाएँगी। उस समय उनके पास न पर्याप्त धन था, न व्यापारिक समझ, न अनुभव, न कोई राजनीतिक समर्थन और न ही औद्योगिक या व्यापारिक संगठनों से संपर्क थे। बस थी तो केवल उनके जैसी ही सोचनेवाली एक टीम।

किराए के एक गैराज में आरंभ हुई उनकी इस कंपनी ने आज एक ऐसे साम्राज्य का रूप ले लिया है, जो वैश्विक स्तर पर लोकप्रिय है। किरण ने अगर नियति व चुनौतियों से लड़ना स्वीकार नहीं किया होता तो आज वह भी दुनिया की भीड़ में कहीं खो गई होतीं। जीवन ने कदम-कदम पर उन्हें अनचाही राहों पर धकेला, उनके हाथ से अवसर छीने; पर उन्होंने आहत होने के बावजूद डटकर हर स्थिति का सामना किया और आज वह फार्मास्युटिकल्स उद्योग में एक ऐसी पहचान बना चुकी हैं, जिसमें किसी महिला का अपना वर्चस्व कायम करना किसी आश्वर्य से कम नहीं है।

आज जिस कामयाबी की उच्चतम चोटी पर वह खड़ी हैं, वहाँ से पीछे मुड़कर देखना हालाँकि उनकी फितरत नहीं है, पर आगे बढ़ते रहने के निरंतर प्रयास का जज्बा कायम रखने के लिए उन्हें वे दिन याद आ ही जाते हैं, जब उन्हें मेडिकल में प्रवेश नहीं मिला था, जब उन्हें महिला होने के कारण ब्रूअर की नौकरी नहीं मिली थी या जब वह नुकसान में जा रहे अपने पिता के बिजनेस को सँभालने में अक्षम साबित हुई थीं।

सुखद बचपन

शराब बनानेवाली प्रतिष्ठित यूनाइटेड ब्रीवरेज कंपनी में कार्यरत मुख्य ब्रूअर की पुत्री किरण अपनी सफलता का श्रेय अपने पिता को देती हैं, जिन्होंने एक प्रेरणा-शक्ति बनकर कदम-कदम पर उन्हें सहयोग दिया। लेकिन उन्हें इस बात का अफसोस है कि आज उनकी इस

सफलता को देखने के लिए उनके पिता जीवित नहीं हैं। पर आज उनकी माँ उन्हें प्रोत्साहन और आगे बढ़ने की हिम्मत देती हैं। इतना ही नहीं, अपनी बेटी के साथ वह कदम-से-कदम मिलाकर चल सकें, इसके लिए खुद मजूमदार फार्म्स व जीवेस को सँभालती हैं, साथ ही एक ड्राई क्लीनिंग व लौंड्री सर्विस एजेंसी का कार्य भी देखती हैं।

किरण का बचपन उनके जीवन का सबसे सुरक्षित व सुखद समय था। 23 मार्च, 1953 को रसेंद्र व यामिनी मजूमदार के यहाँ बंगलौर में जन्मी किरण का बचपन अपने दोनों भाइयों व माता-पिता के आसपास ही केंद्रित था। उनके माता-पिता ने उनके अंदर मध्यम वर्गीय मूल्यों के साथ-साथ विनम्रता और ईमानदारी के बीज भी रोपे थे। उन्होंने अगर अपने पिता से रूढ़ियों का विरोध करना सीखा तो उनकी माँ ने उन्हें परंपराओं का निर्वाह करना सिखाया; पर दोनों से मिली एक संवेगात्मक परिपक्वता की वजह से वह प्रथम पीढ़ी की महिला उद्यमी बनने में सफल हुई। वह कहती हैं, “मेरे पिता एकदम स्पष्टवादी इनसान थे; जो कहना होता था, कह देते थे और उनका यह बिंदास व्यवहार मेरे अंदर भी आया है। पर सबसे बड़ा पाठ, जो मेरे पिता ने मुझे सिखाया था, वह था कि कभी भी अहंकार मत करना, हमेशा नम्र बने रहना और कभी भी सफलता का सारा श्रेय खुद मत लेना। मुझे लगता है, मेरी कामयाबी में वे सारे पाठ और दर्शन की महत्वपूर्ण भूमिका है, जिन्हें समय-समय पर मेरे माता-पिता मेरे अंदर पोषित करते रहे थे।”

बेहतरीन छात्रा

बचपन में किरण को रंगों से लगाव था। वह रंगों के साथ नए-नए प्रयोग करतीया आड़ी-तिरछी लकीरें खींचती रहतीं। जीवन और लोगों के व्यवहार, उनकी सोच को समझने की अदम्य लालसा लिये वह बड़ी हुई। स्कूल में वह बेहतरीन छात्रा के रूप में अपनी अध्यापिकाओं के बीच लोकप्रिय थीं। विभिन्न अवधारणाओं और नए विचारों को जानना उन्हें उत्साहित करता था। चीजों को नए सिरे से तथा अलग हटकर तराशा जाए, फिर चाहे इसके लिए कितनी ही चुनौतियों का सामना क्यों न करना पड़े, ऐसी मानसिकता शायद बचपन में ही उनके व्यक्तित्व का एक अटूट हिस्सा बन गई थी।

स्कूल के दिनों में ही उन्हें जेनेटिक्स और मॉलीक्यूलर बायोलॉजी अपनी ओर खींचने लगी थी। विज्ञान की दुनिया के रहस्य उन्हें उस दुनिया के बारे में और अधिक जानने के लिए उकसाते थे। लेकिन इसके बावजूद मेडिकल में सीट न मिलने पर हताश होने के बजाय किरण ने प्राणी-विज्ञान में बी.एस-सी. कर यूनिवर्सिटी में प्रथम स्थान अर्जित किया। वह कहती हैं, “मेरे आत्मविश्वास पर लगा वह पहला आघात था। पहली बार असफलता से मेरा सामना हुआ था और मेरे लिए उसे सहन करना आसान नहीं था। हार होने के बावजूद मैंने

उसे एक चुनौती की तरह लिया। उस समय चूँकि और पढ़ाई करने के बारे में सोचना था, इसलिए प्राणी विज्ञान में बी.एस-सी. की। प्रथम आना चुनौती को उत्तर देने का एक छोटा सा प्रयास था, खासकर मेडिकल कॉलेजों को कि उन्होंने किसे खो दिया है। मैं एक अच्छी डॉक्टर साबित हो सकती थी।”

सीखा नया पाठ

उस समय ब्रूइंग का क्षेत्र भारत में शैशवावस्था में ही था और बहुत सारे लोग इस पेशे से जुड़े नहीं थे। इसलिए किरण ने स्वयं को साबित करने के लिए इस प्रोफेशन में जाने का निश्चय किया और उनका साथ दिया उनके पिता ने। इस समय नियति भी जैसे उनका साथ देने को तत्पर थी। उन्हें ऑस्ट्रेलिया में मास्टर ब्रूअर्स प्रोग्राम करने के लिए बाल्लारट यूनिवर्सिटी जाने के लिए यूनिवर्सिटी वूमेंस काउंसिल से स्कॉलरशिप मिल गई। अपने बैच में वह एकमात्र छात्रा थीं और वह भी सबसे कम उम्र की। वह कहती हैं, “उस समय मेरी उम्र 21 वर्ष थी और औद्योगिक व कॉर्पोरेट परिवेश के बारे में मेरे पास कुछ भी अनुभव नहीं था; जबकि मेरे साथ पढ़नेवाले बाकी साथी न सिर्फ मुझसे उम्र में बड़े थे, वरन् उनके पास काम का ठोस अनुभव भी था।” लेकिन वही वह जगह थी, जहाँ किरण ने सीखा कि कैसे अकेली लड़की होने के बावजूद पुरुषों के साथ कदम-से-कदम मिलाकर चला जा सकता है। उनकी दृढ़ता और आत्मविश्वास से प्रभावित उनके सहपाठी उनके साथ मिलकर पेपर्स तैयार करते, जिससे किरण के ज्ञान में तो बढ़ोतरी हुई ही, साथ ही तेजी से उन्होंने प्रगति भी की। परिणाम सामने था—क्लास में उन्होंने टॉप किया था।

कदम-कदम पर मिर्लींचुनौतियाँ

सन् 1975 में कोर्स खत्म करने के बाद ऑस्ट्रेलिया में छात्रों व अध्यापकों के बीच अपनी काबिलियत का लोहा मनवाकर अपनी नई प्राप्त निपुणता का परीक्षण करने के इरादे से भारत लौटीं तो फिर से चुनौतियाँ उनका स्वागत करने के लिए खड़ी थीं। उनके पिता का बिजनेस बुरी स्थिति में था और उन्हें किरण की आवश्यकता थी। वह कहती हैं, “हमने हरसंभव कोशिश की कंपनी को पुनः खड़ा करने की, पर असफलता ही मिली। शायद इसलिए क्योंकि हमारे पास प्रोफेशनल्स की कमी थी।” सन् 1976 से 1978 के बीच वह पिता के सपने को सँभालने में लगी रहीं और उसी दौरान उद्यमी होने के बीज उनके अंदर पल्लवित-पुष्पित होने लगे। यही वह समय था, जब किरण को पैसे की कीमत के बारे में पता चला।

“यह वह समय था, जब हमें खर्चने से पहले दो बार सोचना पड़ता था।” कहना है किरण का। ऑस्ट्रेलिया से लौटने के बाद उन्होंने कुछ भी सार्थक व ठोस नहीं किया था और यह बात उन्हें खल रही थी, इसलिए अपने दम पर कुछ करने के इरादे से वह ब्रूअर की नौकरी ढूँढ़ने निकल पड़ीं। तब उन्हें एहसास हुआ कि योग्यता व प्रशिक्षण के बावजूद ब्रूइंग उद्योग में उनका महिला होना सबसे बड़ी अड़चन है। वह कहती हैं, “उस दौरान मुझे लगा कि सही योग्यताओं के साथ मैं एक गलत देश में रह रही हूँ।” तब उन्होंने विदेश की ओर रुख किया और स्कॉटलैंड में उन्हें नौकरी मिल गई।

25 मार्च, 1978 को किरण को बड़ौदा से दिल्ली की ट्रेन पकड़नी थी और वहाँ से दूसरी धरती पर कदम रखना था।

पर उस दिन सुबह-सुबह ही किरण के लिए एक फोन आया और एक बार फिर से नियति ने नई चुनौतियाँ उनके सामने खड़ी कर दीं? आयरलैंड की बायोटेक्नोलॉजी कंपनी बायोकॉन के संस्थापक ले ओचीनक्लोस ने उन्हें फोन पर कहा कि वह बड़ौदा में हैं और उनके साथ एक बिजनेस प्रोजेक्ट के सिलसिले में बात करना चाहते हैं, क्योंकि वह भारत में भी अपनी कंपनी खोलना चाहते हैं और इसके लिए किरण की मदद चाहते हैं। वह पपीते से एंजाइम बनाना चाहते थे। किरण की प्रतिक्रिया इनकार में ही थी, क्योंकि वह भारत में रहकर कोई और जोखिम उठाने को तैयार नहीं थीं; दूसरी ओर वह मात्र 25 वर्ष की थीं और उनकी कम उम्र फिर आड़े आ सकती थी। लेकिन तब ओचीनक्लोस ने प्रस्ताव रखा कि अगर एक साल में वह कामयाब नहीं होती हैं तो उन्हें वह पुनः उसी नौकरी को दिलाने में मदद करेंगे।

हुई नई शुरुआत

इस तरह स्कॉटलैंड के बजाय किरण ने आयरलैंड की धरती पर पैर रखे। 6 महीने के प्रशिक्षण के बाद दो लोगों की टीम के साथ एक छोटे से गैराज में उन्होंने पेपेन बनाने का प्लांट लगाया। किरण ने कच्चे पपीते व ट्रॉपिकल फिश से प्राप्त एंजाइम को बनाना शुरू किया। लेकिन इतना ही काफी नहीं था, इसलिए और अनुसंधान करने के इरादे तथा कंपनी को बढ़ाने के उद्देश्य से किरण ने कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक की लंबी यात्रा की। लोगों को विश्वास दिलाना उनके लिए मुश्किल था, क्योंकि हर जगह उनकी उम्र आड़े आ जाती थी। उस समय किसी कंपनी का हेड होने का अर्थ होता था कि कम-से-कम वह 40 वर्ष का तो हो, इसलिए लोग उन्हें गंभीरता से नहीं लेते थे और उनकी बातों को उम्र का जोश समझकर नकार देते थे। यहाँ तक कि उनके पास कोई निवेशक बैंक तक न था। वह कहती हैं, “ऐसे लोगों को ढूँढ़ना तक मुश्किल था, जो मेरे लिए काम कर सकें, पर ‘मैं जीत

हासिल करके रहूँगी' की सोच और अपनी योग्यता के बल पर आखिरकार मैं निवेशकों को प्रभावित करने में सफल हो गई।"

सन् 1989 में यूनीलीवर ने आयरलैंड की कंपनी को अपने हाथ में ले लिया, जिससे बायोकॉन के सामने तरक्की के नए आयाम खुल गए। सन् 1998 में कंपनी ने बायोफार्मस्युटिकल्स में जाने का निर्णय किया। इस तरह सन् 1998 में 70 करोड़ रुपए की कंपनी 2004 में 500 करोड़ की हो गई और लिमिटेड भी। सन् 2006 में बायोकॉन इंडिया की नई कैंसर प्रतिरोधक औषधि बाजार में आई। इस समय कंपनी के पास 130 से ज्यादा पेटेंट हैं। बायोकॉन के एंजाइम से जेनेटिक बायोफार्मस्युटिकल्स से लेकर प्रोप्राइटेरी बायोटेक उत्पादों तक का बदलाव एक रोचक यात्रा है। एक स्मार्ट स्कार्फ, एक स्टाइलिश हेयर कट और हॉंठों पर हमेशा छाई रहनेवाली मुसकराहट, किरण को देखकर यह अंदाजा लगाना मुश्किल है कि वह एक वैज्ञानिक हैं, जिसके अंतर्गत 1,200 तकनीकी विशेषज्ञ काम करते हैं, जिसकी कंपनी के पास 130 से अधिक पेटेंट हैं। बायोकॉन में काम करनेवाले हर कर्मचारी पर भरोसा करना और उन्हें काम करने का पूरा अवसर देना ही कंपनी की नीति है। स्त्री-पुरुष के बीच तो वहाँ भेद किए जाने का सवाल ही नहीं उठता है। वह कहती हैं कि बायोकॉन ने अभी एक मंजिल तय की है। इस दशक के अंत तक बायोकॉन को एक अरब की कंपनी बनाने के लक्ष्य को हासिल करना है।

निजी जीवन

सन् 1991 में बंगलौर में मदुरा कोट्स के मैनेजिंग डायरेक्टर जॉन शॉ से उनकी मुलाकात हुई और उन्हें लगा कि दोनों में बहुत समानताएँ हैं। सन् 1998 में 45 वर्ष की आयु में किरण ने जॉन शॉ से विवाह किया। हालाँकि उन्होंने देर से विवाह किया, पर अपने सपनों के पुरुष से किया। यह सही है कि एक सुपर एचीवर से विवाह करने के लिए एक अलग किस्म का इनसान होना अनिवार्य है और जॉन शॉ वैसे ही अलग हैं। वह कहते हैं कि हम दोनों ही सिक्योर व मैच्योर लोग हैं। जॉन भी मदद करने के लिए बायोकॉन परिवार में शामिल हो गए। उन्होंने लंदन के अपने घर को बेचकर, बायोकॉन में निवेश कर यूनीलीवर से उसे मुक्त कर 100 प्रतिशत निजी कंपनी का आकार दे दिया। जॉन बहुत ही समझदार पति साबित हुए हैं, जिन्होंने पत्नी की सफलता में न सिर्फ योगदान दिया बल्कि उसे निखारा भी।

सम्मान व उपलब्धियाँ

सन् 1989 में उन्हें 'पद्मश्री' से सम्मानित किया गया। इकोनॉमिक्स टाइम्स व फाइनेंशियल एक्सप्रेस से अनेक सम्मान प्राप्त करने के अतिरिक्त उन्हें 'फोब्स' ने भी अनेक बार

सम्मानित किया है। सन् 2004 में इकोनॉमिक्स टाइम्स ने उन्हें ‘बिजनेस वुमेन ऑफ द ईयर’ अवार्ड प्रदान किया और बायोकॉन को उभरता हुआ एंटरप्राइज घोषित किया। वह भारत में सबसे शक्तिशाली सी.ई.ओ. में से एक के रूप में जानी जाती हैं।

आज वह देश की सबसे अमीर महिला हैं; पर पैसे की कीमत क्या होती है, इसे वह बखूबी समझती हैं। इसलिए फिजूलखर्ची करना न तो निजी और न ही कंपनी के मामलों में उनकी आदत बनी। जब भी कहींगई, सबसे सस्ता ट्रेन टिकट खरीदा और सबसे सस्ते होटल में रहीं। दिखावे से वह दूर रहती हैं। यही वजह है कि न तो उन्हें कभी डिजाइनर साड़ियाँ पहने आप देखेंगे, न ही भारी-भरकम आभूषणों से लदे। वह बहुत ही सादगीपूर्ण ढंग से रहने में यकीन व सुविधा महसूस करती हैं। शायद यही वजह है कि दुनिया की सबसे अमीर महिला होने के वर्ग में फिट करने में वह स्वयं को बहुत सहज या असहज महसूस करती हैं। वह कहती हैं, “जब लोग मुझे ‘भारत की सबसे धनी महिला’ कहकर संबोधित करते हैं तो उन्हें देखकर यही प्रतीत होता है कि उनके दिमाग में यही होगा कि वह ऐसी लगती तो नहीं है। मुझे सफल महिला उद्यमी के रूप में जाना जाना अधिक गौरवान्वित करता है। मुझे देश की सबसे संपन्न महिला होने के खिताब से रोमांच नहीं होता, मुझे रोमांच इस बात से होता है कि मैंने उपयोगी संस्थान को जन्म दिया और यह संस्थान देश के हजारों वैज्ञानिकों के लिए एक मंच बना। मुझे इस बात की खुशी अवश्य है कि जो संपत्ति मेरे पास है, वह मुझे विरासत में नहीं मिली है, बल्कि उसे मैंने स्वयं अर्जित किया है।”

असंभव को बनाया संभव

‘चीजें जैसी हैं, उन्हें वैसे ही चलने दिया जाए या मुश्किल में हार मान ली जाए’ जैसी अवधारणाओं को किरण ने अपने जीवन पर कभी हावी नहीं होने दिया। वह तो यही मानकर चलींकि जीत तभी पाई जा सकती है जब असंभव को संभव बनाया जाए, जब पानी के प्रवाह को वक्त के साथ मोड़ा जाए। इसीलिए वह महिलाओं को लगातार प्रोत्साहित करती हैं कि वे अपने बारे में सोचें, अपने जीवन में बदलाव लाने के बारे में सोचें। वे औरत हैं, सिर्फ इसलिए उन्हें पीछे हटने की आवश्यकता नहीं है। वह कहती हैं कि भारत में अब महिलाएँ यह समझने लगी हैं कि वे नेतृत्व करने की भूमिकाएँ अपना सकती हैं। ऐसा नहीं है कि महिला कभी सफलता नहीं पाना चाहती थी, वह तो केवल छिपी हुई थी। संभवत : समाज ने उसे दबा रखा था। अब महिलाएँ उसे लेकर मुखर हो गई हैं और सफल होना चाहती हैं। वह मानती हैं कि महिलाओं का हर क्षेत्र में पदार्पण होने के बावजूद पुरुष के लिए आज भी महिला को समाज की परंपराओं के बाहर जाकर कुछ करना बरदाश्त नहीं है। वह फेमिनिस्ट नहीं हैं, पर चाहती हैं कि लिंग, जाति, धर्म आदि के आधार पर भेदभाव किए बिना सबको समान अवसर मिलने चाहिए, फिर चाहे वह औरत हो या पुरुष।

किरण ने एक कॉन्फ्रेंस में कहा था, “एक महिला उद्यमी के रूप में, जिसके पास कोई पुश्तैनी नाम और संपत्ति भी नहीं थी, मुझे कोई दिक्कत नहीं आई; लेकिन व्यवस्था में जो खामियाँ हैं, जिनके कारण किसी भी उद्यमी को दिक्कतें आती हैं, वैसी परेशानियाँ मेरे सामने भी आती हैं। उनके लिए मुझे लगता है कि व्यवस्था को ठीक करने की आवश्यकता है। मुझे इस बात का गर्व है कि मैं एक भारतीय हूँ और मेरा सपना एक ऐसी कंपनी खड़ी करना है जिस पर मैं ही नहीं, प्रत्येक भारतीय गर्व कर सके।”

किरण ने एक सी.एस.आर. (कॉरपोरेट सोशल रिसोर्सिबिलिटी) निकाय भी गठित किया है, जो स्वास्थ्य व शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रहा है। उन्होंने बायोकॉन फाउंडेशन भी स्थापित किया है, जिसमें माइक्रो-हैल्थ इंश्योरेंस सिस्टम के तहत ग्रामीण स्वास्थ्य योजना चलाई जा रही है। वह दौलत को ताकत का संबल मानती हैं। उनका मानना है कि “ताकतवर होने का अर्थ यह नहीं है कि लोगों पर हावी होकर उन पर हुक्म चलाया जाए, ताकत हमें सामाजिक बदलाव करने की क्षमता प्रदान करती है और वही उसका सही इस्तेमाल होता है।”



चंदा कोचर



एक असाधारण बैंकर

आई.सी.आई.सी.आई. बैंक की सी.ई.ओ. और मैनेजिंग डायरेक्टर

“किसी भी क्षेत्र में अपने कार्यों को प्राथमिकता के हिसाब से
तय करना प्रभावी प्रबंधन कहलाता है और उसके कर्त्तव्यों में सक्षम
होने पर ही निजी व प्रोफेशनल जीवन के साथ सामंजस्य बिताया
जा सकता है।”

चंदा कोचर भारतीय युवाओं की आकांक्षाओं की वह प्रतीक हैं, जिन्होंने भारत का
पुनरुत्थान कर उसे एक नई छवि प्रदान की है। लक्ष्यों के प्रति एक स्पष्टवादिता व
कठिबद्धता जीवन के प्रति उनकी सोच को परिलक्षित करती है। वह कभी इस बात का दावा
नहीं करतीं कि वह सबकुछ कर सकती हैं। उनका मानना है कि कोई भी इनसान पूर्ण रूप
से उत्कृष्ट नहीं होता। कमियाँ व खूबियाँ हमारे जीवन के ऐसे दो पहलू हैं, जिन्हें हमें खुले
मन से स्वीकारना चाहिए। एक व्यक्ति किसी काम को करने में दक्ष होता है तो दूसरा कोई
और, पर जरूरी है यह जानना कि आप कौन से काम को बखूबी निभा सकते हैं। एक बार

उसी को अपना लक्ष्य बना लिया तो कामयाबी हासिल करने के सारे रास्ते स्वतः खुल जाते हैं।

चंदा कोचर मई 2009 में चीफ एजीक्यूटिव ऑफिसर (सी.ई.ओ.) थीं और आज वह आई.सी.आई.सी.आई. बैंक की सी.ई.ओ. व मैनेजिंग डायरेक्टर हैं। वह बैंक की चीफ फाइनेंशियल ऑफिसर (सी.एफ.ओ.) भी हैं और स्पोक्स पर्सन भी। इतना ही नहीं, वह बैंक के कॉरपोरेट सेक्टर की अध्यक्ष भी हैं।

मिली सही शिक्षा व अवसर

जोधपुर में जनमी और जयपुर में पली-बड़ीं चंदा ने अपने बचपन से ही आत्मविश्वास को अपनी सबसे बड़ी ताकत माना और तय किया कि वह कुछ कर दिखाएँगी। दृढ़ इच्छाशक्ति किसी विद्युत् से कम नहीं होती, जो बाधाओं को भी निरस्त करने की क्षमता रखती है। जरूरत होती है तो बस उसकी चमक का इस्तेमाल सही दिशा में करने की। चंदा की परवरिश जिस तरह के खुले माहौल व उच्च शिक्षित परिवार में हुई, उसमें स्वयं के लिए मार्ग बनाना उनके लिए कठिन न था। उनके पिता जयपुर इंजीनियरिंग कॉलेज के प्रिंसिपल थे, जिसकी स्थापना उन्होंने ही की थी। एक बड़ी बहन व भाई की लाडली छोटी बहन होने के कारण उन्हें जहाँ एक तरफ बेहिसाब प्यार-दुलार मिला, वहीं अपने नखरे उठवाने में भी वह कोई कसर नहीं छोड़ती थीं। चूँकि परिवार में शिक्षा को महत्व दिया जाता था और संकीर्ण विचारों को प्रश्रय नहीं दिया जाता था, इसलिए लड़के-लड़की के बीच अंतर करने का तो कोई सवाल ही नहीं उठता था।

वह कहती हैं, “हमें बचपन से ही सिखाया गया था कि कॅरियर बनाना जितना लड़कों के लिए महत्वपूर्ण है उतना ही लड़कियों के लिए भी है।” अपने माता-पिता का समर्थन व प्रोत्साहन पाकर उन्होंने बचपन में ही ठान लिया था कि वह बड़ी होकर आई.ए.एस. अफसर बनेंगी। बैंकर बनने की इच्छा तो बहुत बाद में उनके अंदर जाग्रत् हुई थी। पर शायद प्यारे बचपन और खुशनुमा पारिवारिक माहौल को जैसे नजर लग गई। नन्हीं चंदा के जीवन में व्यवधान और दुःख दोनों एक साथ आ गए। वह उस समय मात्र 13 वर्ष की थीं, जब उनके पिता का देहांत हो गया। जयपुर में उनका कोई और रिश्तेदार नहीं था, इसलिए उनकी माँ के लिए अकेलापन और अधिक कष्टदायी हो गया। दुःख-दर्द बाँटनेवाला कोई नहीं था, इसलिए जैसे ही चंदा की स्कूल की पढ़ाई पूरी हुई, वह बंबई शिफ्ट हो गई, जहाँ उनके सारे रिश्तेदार रहते थे।

कॅरियर की शुरुआत

पिता, जो उनके परिवार के आधार-स्तंभ थे, उनकी मौत के दर्द से उबर पाना इतना आसान नहीं था; लेकिन धीरे-धीरे समय के साथ घाव भरते गए और चंदा का व्यक्तित्व भी एक आत्मविश्वासी युवती की तरह निखरने लगा। बंबई के जय हिंद कॉलेज से सन् 1982 में स्नातक करने के बाद उन्होंने एम.बी.ए. और कॉस्ट अकाउंटेंसी की। उसके बाद चंदा ने जमनालाल बजाज इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज से मैनेजमेंट में डिग्री हासिल की। चंदा पढ़ने में ही नहीं, अन्य गतिविधियों में भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लेती थीं। जहाँ एक तरफ वह बहुत उत्साह से बैडमिंटन खेला करतीं, वहीं दूसरी ओर अनेक वाद-विवाद प्रतियोगिताओं व नाटकों में भी सक्रिय रूप से भाग लेती थीं।

सन् 1984 में जमनालाल बजाज इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज जैसे प्रतिष्ठित संस्थान से डिग्री लेने और उनकी प्रतिभा के आधार पर उन्हें आई.सी.आई.सी.आई. ने मैनेजमेंट ट्रेनी की तरह नियुक्त कर लिया। उन्होंने अपने कैरियर की शुरुआत प्रोजेक्ट फाइनेंस से की। यह वह क्षेत्र था, जिस पर इस विकासोन्मुखी सरकारी वित्तीय संस्थान का मुख्य कारोबार टिका था। जब बैंक ने अलग से एक कमर्शियल बैंक का गठन करने का निश्चय किया तो चंदा उस टीम से जुड़ गई, जो बैंक के ऑपरेशन (संचालन) की अवधारणा में सहायता करती थी।

उनका कैरियर ग्राफ किसी को भी प्रेरणा दे सकता है, क्योंकि जिस तेजी से उन्होंने प्रगति की है, वह दूसरों के लिए एक मिसाल बन गई है। 9 वर्ष की अथक मेहनत के बाद उन्हें आई.सी.आई.सी.आई. बैंक को गठित करनेवाली कोर टीम में शामिल किया गया। उन्हें सन् 1994 में असिस्टेंट जनरल मैनेजर और 1996 में डिप्टी जनरल मैनेजर बनाया गया। सन् 1998 में उन्हें जनरल मैनेजर बना दिया गया और आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के 200 विशेष ग्राहकों के साथ व्यवहार बनाए रखने की जिम्मेदारी सौंप दी गई। उनकी तरकीकी व प्रगति का सिलसिला यहीं नहीं थमा, क्योंकि निरंतर काम करने की जिजीविषा उन्हें प्रोत्साहित करती रहती थी। अप्रैल 2001 में उन्हें एजीक्यूटिव डायरेक्टर बना दिया गया और वह आई.सी.आई.सी.आई. का रिटेल बिजनेस सँभालने लगीं। फिर अप्रैल 2006 में चंदा कोचर को आई.सी.आई. सी.आई. बैंक का डिप्टी मैनेजिंग डायरेक्टर नियुक्त किया गया।

दी नई योजनाओं को गति

देश का वित्तीय क्षेत्र सन् 1991 में प्रतिबंधों से मुक्त होने लगा तो आई.सी.आई.सी.आई. ने इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट फाइनेंस डिवीजन की स्थापना की। यह वह क्षेत्र था, जिसके विकास में चंदा ने अमूल्य योगदान दिया। 32 वर्ष की उम्र में उनकी योग्यता का सम्मान करते हुए

उन्हें आई.सी.आई.सी.आई. की कमर्शियल बैंकिंग बिजनेस आरंभ करनेवाली कोर टीम की लीडर बना दिया गया।

चंदा कोचर की ही टीम का करिश्मा है कि आज हम अपने ड्रॉइंगरूम में बैठे-बैठे पर्सनल कंप्यूटर से रेल या हवाई यात्रा के टिकट बुक करा सकते हैं, होटल का कमरा रिजर्व कर सकते हैं। इससे मानवीय श्रम और समय की बचत होने के साथ-साथ पेपरलेस बैंकिंग ने आई.सी.आई.सी.आई. का परिचालन व्यय घटाया और ग्राहक सेवा में गति दी। चंदा की दूसरी पहल है—बैंक में रिटेल ग्राहकों को वित्तीय सेवाओं की क्रॉस सेलिंग। चंदा को लगा कि आई.सी.आई.सी.आई. अगर एक ही ग्राहक को एक से ज्यादा सेवाओं की बिक्री करे तो अच्छा लाभ हो सकता है और तभी से लगातार क्रॉस सेलिंग की योजना के तहत व्यापार की बढ़ोतरी हो रही है। इसके अलावा बैंक ने रिटेल बैंकिंग उत्पादों के साथ-साथ ग्राहकों को होम लोन्स, कार लोन्स व क्रेडिट कार्ड बेचे, जिससे आई.सी.आई.सी.आई. का अलग-अलग बिजनेस क्षेत्रों में व्यापार कई गुना बढ़ा। चंदा विद्यमान सेवाओं में और नई योजनाओं को प्रस्तुत करती आ रही हैं, जिससे ग्राहकों की संख्या हर दिन बढ़ रही है।

सफलता को जोड़ा उत्कृष्टता के साथ

किसी को तरक्की करते देखउसकी किस्मत की सराहना करने में किसी को क्षण भर भी नहीं लगता; पर यह इनसान की बहुत स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि वह उस व्यक्ति की हिम्मत, लगन और मेहनत को जान-बूझकर नजरअंदाज कर उसे भाग्य कहकर अपनी नाकामयाबियों का ढिंढोरा पीटने से बाज नहीं आता है। चंदा कोचर के लिए भी आगे बढ़ना कोई बहुत सरल बात नहीं थी। नए काम को करने, नए विचार व नीतियाँ निर्धारित करने और उन्हें लागू करने के दौरान उन्हें अनेक चुनौतियों व अवरोधों का सामना करना पड़ा।

अपने 15 वर्षों के कॉरपोरेट बैंकिंग कॅरियर से रिटेल फाइनेंस में आना उनके जीवन में होनेवाले किसी बहुत बड़े बदलाव से कम नहीं था—“रिटेल बैंकिंग क्षेत्र के हर पहलू के बारे में जानकारी प्राप्त करने के अलावा मैंने एक टीम का गठन करना भी इस दौरान सीखा और यह मेरे जीवन का सबसे अहम अनुभव साबित हुआ।” वह मानती हैं कि सफलता का अर्थ ही है उत्कृष्टता। आप जो करते हैं, उसमें उत्कृष्टता हासिल करने में ही सफलता निहित है।

बेहतरीन टीम लीडर

चंदा के प्रयासों से न सिर्फ बैंक के बिजनेस में बढ़ोतरी हुई, वरन् भारतीय बैंकिंग सेक्टर में एक नए युग की शुरु आत भी उन्होंने की। वह कहती हैं, “आज हमारी नीतियों व

योजनाओं से इस क्षेत्र में व्यापक बदलाव आ गया है और उसने लेन-देन की प्रणाली को भी प्रभावित किया है। यह बदलाव बहुत ही सकारात्मक है और लोग इसे पसंद कर रहे हैं। ऑनलाइन ट्रांजेक्शन इस बदलाव का एक उदाहरण है, जिसकी लोकप्रियता दिनोंदिन बढ़ रही है और ग्रामीण ग्राहक तक ऑनलाइन लेन-देन करने लगे हैं। ई-चैनल्स जैसे ए.टी.एम., फोन बैंकिंग, इंटरनेट बैंकिंग व मोबाइल बैंकिंग से 70 प्रतिशत लेन-देन होता है। निवेश व सेवा उत्पाद भी हम बेचते हैं। हम आर.बी.आई. बॉण्ड्स, विभिन्न कंपनियों की इंश्योरेंस पॉलिसी व म्यूचुअल फंड भी वितरित करते हैं।”

वह इस बात पर यकीन रखती हैं कि “एक टीम लीडर होने के नाते उचित व नीतिपरक मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन देते हुए आपको अपनी टीम के साथियों को एक रास्ता दिखाना होता है। यही नहीं, लोगों को पुरस्कृत व दंड देने में भी एक निष्पक्ष व न्यायसंगत सोच रखना नितांत आवश्यक है।”

बैंकिंग सेक्टर में धन व लोगों के दिमाग की सूक्ष्म व सटीक समझ होना बहुत अनिवार्य है। चंदा की यही खूबी उन्हें इस ऊँचाई तक ले आई है। उन्हें लगता है कि इस क्षेत्र के लिए महिलाएँ अधिक उपयुक्त रहती हैं, क्योंकि “बहुमुखी प्रतिभा व स्थितियों का धैर्य के साथ सामना करने के कारण महिलाएँ बैंकिंग के बहुआयामी बिजनेस के लिए बिलकुल उपयुक्त रहती हैं।”

सम्मान व अवार्ड

चंदा के नेतृत्व में आई.सी.आई.सी.आई. बैंक ने वर्ष 2001, 2003, 2004 व 2005 में भारत में बेस्ट रिटेल बैंक का अवार्ड जीता। चंदा को दि एशियन बैंकर ने सन् 2004 का रिटेल बैंकर ऑफ द ईयर, इकोनॉमिक्स टाइम्स ने वर्ष 2005 की बिजनेस वुमेन ऑफ द ईयर और रिटेल बैंकर इंटरनेशनल ने ग्लोबल अवार्ड्स सन् 2008 के लिए राइजिंग स्टार अवार्ड से सम्मानित किया। चंदा सन् 2005 से लगातार बिजनेस में सबसे पावरफुल वुमेन की ‘फोर्ब्स’ की सूची में भी शामिल होती आ रही हैं। सन् 2009 में ‘फोर्ब्स’ की विश्व की सबसे ताकतवर 100 महिलाओं में उन्हें 20वें नंबर पर रखा गया।

वह मानती हैं, “किसी भी क्षेत्र में अपने कार्यों को प्राथमिकता के हिसाब से तय करना प्रभावी प्रबंधन कहलाता है और ऐसा करने में सक्षम होने पर ही निजी व प्रोफेशनल जीवन के साथ सामंजस्य बिठाया जा सकता है।” अपनी सफलता का श्रेय वह भारत की परिवार व्यवस्था को देती हैं। वह कहती हैं, “हमारे देश के सामाजिक परिवेश व संयुक्त परिवार

प्रणाली से मिले समर्थन के कारण ही भारतीय महिलाएँ घर की जिम्मेदारियों को बखूबी निभा पा रही हैं। और इसी वजह से वे कार्यक्षेत्र में भी सफलता प्राप्त कर पा रही हैं।”

पति से मिलनेवाले सहयोग की वजह से ही वह आज इतनी सफल हो पाई हैं। काम की व्यस्तता के बीच उनके बच्चों को बेशक उनकी कमी खली, पर उनके दोनों बच्चे अपनी माँ की उपलब्धियों से बेहद खुश हैं। मुंबई में रहनेवाली चंदा को थाई व मुगलई खाना पसंद है और संगीत की मधुर लहरियों में वह खो जाती हैं। यही वजह है कि हर तरह का संगीत उन्हें लुभाता है, क्योंकि वह उन्हें बड़ी आसानी से तनाव-मुक्त कर देता है।



जरीना मेहता



मीडिया में बनाई विशेष पहचान

चीफ क्रिएटिव ऑफिसर यू.टी.वी. ब्रॉडकास्टिंग व यू.टी.वी. इंटरएक्टिव

“हारू और सफलता को समान रूप से लेना चाहिए। हारू से उन्होंना और सफलता की चाह करना अबस्तुत बात है। हारू मुझे प्रेरित करनी है। अगर ये ज्ञानचाल बढ़ हो जाएँ तो मुझे नहीं लगता कि आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करने के लिए कोई होगा।”

‘बि जनेस टाइम्स’ की सबसे ताकतवर महिलाओं की सूची में तीन बार सूचीबद्ध भारत का बच्चों का पहला चैनल ‘हंगामा’ लॉज्च करने का श्रेय जाता है जरीना मेहता को और उसके बाद युवाओं के लिए ‘बिंदास’ चैनल। जरीना मेहता का मीडिया के क्षेत्र में सबसे बड़ा योगदान है यू.टी.वी. बिंदास को अग्रणी यूथ चैनल बनाना। ‘इमोशनल अत्याचार’ जैसे प्रोग्राम बनाकर उन्होंने यू.टी.वी. बिंदास चैनल को युवाओं का सबसे लोकप्रिय चैनल बना

दिया है। बिंदास चैनल के बारे में जरीना का कहना है कि सर्वेक्षण करने से यह बात सामने आई है कि युवा वर्ग में धैर्य की अत्यधिक कमी होती है और वे हमेशा कुछ अलग हटकर चाहते हैं। बिंदास एक अलग तरह का अनुभव है, जिसमें हम हमेशा कुछ नयापन जोड़ने का प्रयास करते हैं। एक तरफ जहाँ हमने इस पर बिंग स्विच जैसे शो लॉज्च किए, वहीं दूसरी ओर कॉमेडी रियलिटी शो या ट्रैवल रियलिटी शो भी दिखाते हैं। इसके अतिरिक्त उनके और चैनल हैं—यू.टी.वी. मूवीज, यू.टी.वी. एक्शन और यू.टी.वी. वर्ल्ड मूवीज। उन्होंने मोबाइल के लिए 2 से 4 मिनट लंबी मूवी व टी.वी. शो भी तैयार किए।

किए नए चैनल शुरू

जरीना मेहता यूनाइटेड टेलीविजन (यू.टी.वी.) की संस्थापक सदस्यों में से एक और उसके बिंदास चैनल की सी.ई.ओ. भी हैं। वह यू.टी.वी. के बोर्ड पर भी हैं। यू.टी.वी. टी.वी. और बड़े परदे के मनोरंजन की दुनिया का एक जाना-माना नाम है। भारत का सबसे तेजी से बढ़ता ब्रॉडकास्टिंग चैनल है, जो मोबाइल पर भी मनोरंजन उपलब्ध करा रहा है। अपने ऑपरेशंस को सुदृढ़ करने के लिए उसने अब पर्सनल स्क्रीन के मंच पर एक व्यापक भूमिका निभाने के लिए दस्तक दी है। इसके तहत यू.टी.वी. इंटरएक्टिव की सी.ई.ओ. की तरह जरीना की जिम्मेदारियाँ और बढ़ गई हैं। आज दक्षिण एशिया में यू.टी.वी. मीडिया व मनोरंजन का नंबर वन चैनल है, जो 247 करोड़ दर्शकों का मनोरंजन कर रहा है। मोशंस पिक्चर्स के माध्यम से इसने देश में बेहतरीन मूवी स्टूडियो तैयार किया। यू.टी.वी. भारत का ऐसा मीडिया व एंटरटेनमेंट ग्रुप है, जो फिल्में, ब्रॉडकास्टिंग, गेमिंग व न्यूज मीडिया में दखल रखता है और अपनी एक पहचान भी बना चुका है।

यू.टी.वी. में उन्होंने कई लोकप्रिय शो तैयार किए। हंगामा चैनल शुरू करने के पीछे भी उन्हींका हाथ था, जो शुरू होने के 18 महीनों में बच्चों का पसंदीदा चैनल बन गया था और जिसे सन् 2006 में वाल्ट डिजनी कंपनी को बेच दिया गया। बच्चों के चैनल पर उनका यह पहला अधिग्रहण था। जरीना ने इंडोनेशिया और मलेशिया में भी पहले लोकल किड्स चैनल आरंभ करने में मदद की। डिजनी के भारत के ऑपरेशंस को सँभालने के ऑफर को नकारनेवाली जरीना के मन में यह खयाल आया कि युवाओं के लिए एक खास लोकल चैनल शुरू किया जाए। वह कहती हैं कि जिस पल सबकुछ ठीक-ठाक और सुगमता से चल रहा होता है, मुझे ऊब होने लगती है और मन में कुछ नया करने की धून सवार हो जाती है, और उसी का नतीजा है बिंदास। सिर्फ 9 महीनों में बिंदास ने स्थापित युवा चैनलों एम.टी.वी., वी और जूम टी.वी. की तरह अपनी जगह युवाओं के दिल में बना ली। पिछले 20 वर्षों से जरीना यू.टी.वी. के कुछ मुख्य विभागों को खोलने में प्रमुख भूमिका निभाती

आई हैं। साथ ही वह विभिन्न भाषाओं में अधिकतम टी.आर.पी. बटोरने वाले अवार्ड जीतनेवाले 3,500 घंटों के टेलीविजन प्रोग्राम भी बना चुकी हैं।

दृढ़ व्यक्तित्व

एक पारसी परिवार में जन्म लेनेवाली जरीना रिटायर्ड ब्रिगेडियर एफ.एस.बी. मेहता और विली मेहता की बेटी हैं। एक थिएटर कलाकार की तरह प्रशिक्षण लेने वाली जरीना मुंबई में जनमी और पली-बढ़ीं। उनकी एक अधिकार व निर्देश दे सकनेवाली आवाज सहज ही लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचती है। और आवाज की यह बानगी उनके थिएटर से जुड़े रहने के कारण है। बचपन में उन्हें तीन वर्षों तक अमेरिका में वाशिंगटन डी.सी. में रहने का अवसर भी मिला। वह कहती हैं कि “वह मेरे लिए बहुत ही कठिन समय था। अमेरिकी शिक्षा ओपन थी और पढ़ाई पर कम ध्यान दिया जाता था। पूरे तीन वर्षों तक मैं आखिरी बेंच पर बैठी पेंट करती रहती थी। शरमीली होने के कारण बच्चे मुझे बहुत तंग करते थे।” भारत लौटने पर उनके माता-पिता को एहसास हुआ कि उनकी बेटी न तो पढ़ सकती है और न ही लिख। लेकिन जेबी पेटिट स्कूल में दाखिला लेने के बाद जरीना की जिंदगी में बहुत बदलाव आने लगा।

उनके अंदर एक दृढ़ता और कमांड करने की प्रवृत्ति स्कूली दिनों से है। वह मुंबई के जेबी पेटिट स्कूल में पढ़ा करती थीं और वहीं उन्हें एक दृढ़ व्यक्तित्व बनाने में मदद मिली। वह कहती हैं, “मैंने जी-जान से मेहनत की और एकदम पढ़ाकू बन गई। मुझे लगता है कि मेरा दिमाग इसके लिए तैयार था और मैं भी। हो सकता है कि बिना किसी दबाव के बड़े होने का यही फायदा होता है। प्रिंसिपल शीरीन दाराशा के मार्गदर्शन में मेरे अंदर प्रश्न पूछने की आदत विकसित हो गई।”

थिएटर ने तराशा

स्कूल में ही वह थिएटर से जुड़ीं और पर्ल पद्मसी जैसी थिएटर हस्ती के साथ काम करने का मौका भी मिला, वह उस समय 16 वर्ष की थीं और दसवीं की परीक्षा दे रही थीं जब उन्हें पर्ल पद्मसी को असिस्ट करने का अवसर मिला और उन्होंने ‘चिल्ड्रन ऑफ लेसर गॉड्स’ और ‘हूज लाइफ इज इट एनीवे’ जैसे नाटकों में भाग लिया।

अगर स्कूल ने उनके व्यक्तित्व का विकास करने में मदद की तो सेंट जेवियर कॉलेज ने, जहाँ उन्होंने इकोनॉमिक्स ऑनर्स में ग्रेजुएशन करने के लिए दाखिला लिया था, उन्हें अनेक गतिविधियों में हिस्सा लेने को प्रेरित किया। पर सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण भूमिका उनके

जीवन को तराशने में थिएटर ने निभाई। वह पब्लिक स्पीकिंग में भी आगे रहती थीं; हालाँकि उन्हें भी डर लगता था और लगता था कि वह लड़खड़ाकर गिर जाएँगी। पर एक बार स्टेज पर पहुँचने के बाद सारा डर काफूर हो जाता था। थिएटर के दिनों में ही उनका परिचय रोनी स्कूवाला व देवेन खोटे से हुआ, जिन्होंने उनके साथ नाटकों में काम किया था और बाद में तीनों ने मिलकर यू.टी.वी. की नींव रखी। आगे चलकर उन्होंने रोनी से शादी कर ली।

पहला डेली सोप

कॉलेज के बाद उन्होंने एडवरटाइजिंग में कोर्स करने के लिए जेवियर इंस्ट्रियूट ऑफ कम्यूनिकेशंस में दाखिला ले लिया। लेकिन जल्दी ही उन्हें एहसास हो गया कि विज्ञापन की दुनिया उनके लिए नहीं है। तब देवेन ने उन्हें मोशन पिक्चर्स में एडिटिंग का काम करने को बुलाया, जिसके बारे में उन्हें बिलकुल जानकारी नहीं थी। उन्हें अभिनेता रमण कुमार के संवादों की एडिटिंग करनी थी। सुबह 7 बजे वह मोशन पिक्चर्स के ऑफिस पहुँच गई। पूरा दिन ऐसे ही बीत गया और जब उन्होंने घड़ी देखी तो शाम के 7 बजे रहे थे, यानी कि पूरा एक दिन बीत चुका था। उनकी माँ ने उन्हें यह काम न करने की सलाह दी; पर वह जानती थीं कि वह इसे करके ही रहेंगी, क्योंकि उन्हें वह पसंद आ गया था।

इस क्षेत्र में 20 वर्ष गुजारनेवाली 47 वर्षीय यू.टी.वी. ग्रुप, एक 400 करोड़ की मीडिया कंपनी की संस्थापक सदस्य जरीना आज जब पीछे मुड़कर देखती हैं तो पाती हैं कि बहुत सी चीजें उन्होंने पहली बार शुरू की थीं। पहला डेली सोप शांति, पहला गेम शो ‘स्नेक्स ऐंड लेडर्स’ और बच्चों के लिए पहला गेम शो ‘गोल-गोल गुल्लम’।

इस प्रोडक्शन हाउस को अपने पति रोनी स्कूवाला और मित्र देवेन खोटे के साथ मात्र 37,000 रुपए में शुरू करनेवाली जरीना ने यू.टी.वी. को बढ़ाने व कामयाब बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और साथ ही टेलीविजन बिजनेस में भी वह कहती हैं, “रोनी यू.टी.वी. में बॉस हैं और देवेन यू.एस.एल. को देखते हैं और मैं बिंदास को। हमारे बीच कार्य संबंधी एक बेहतरीन रिश्ता है, इसलिए कभी गलतफहमियाँ नहीं हुईं और हम निरंतर आगे बढ़ते गए।”

काम बना जुनून

टेलीविजन उनका जुनून है और बेहतरीन आइडिया को समझने में है, बेशक वह उनका न हो। उस विचार को निर्मित कर वह अंजाम तक पहुँचाती हैं और बेहतरीन प्रोग्राम प्रस्तुत

करती हैं। उन्होंने दूरदर्शन के समय से शुरू आत की थी, जब उन्हें 10 सीरियल बनाने की अनुमति मिली थी। यह काम 1982 से लेकर सन् 1992 के बीच किया गया, पर वह समय भी उनके लिए बहुत शानदार और रोमांचक था। उस समय उन्होंने मैथेमैजिक जैसे शो किए। ऐसा गेम शो, जिसके लिए जरीना ने पूरे एक वर्ष तक रिसर्च की थी। इसके अलावा उनका लाइफलाइन शो भी बहुत सराहा गया, जो डॉक्टरों के जीवन पर आधारित था और 16 एम.एम. पर किया गया था, जिसके बारे में उस समय कोई जानता तक नहीं था। वह कहती हैं कि सन् 1992 में जी.टी. का आना टेलीविजन के लिए एक बदलाव का मोड़ था। उन 10 शो के बाद उन्होंने 200 शो बनाए, जिनमें जंगली, तूफान, पंचर और चक्रव्यूह भी शामिल था।

जी.टी. के आने के बाद से टेलीविजन प्रोग्रामों की तो जैसे बाढ़-सी आ गई और काम की कोई कमी नहीं रही। यही वह समय था, जब जरीना शांति नामक डेली सोप का हिस्सा बनीं, जो भारतीय टेलीविजन में प्रसारित होनेवाला पहला डेली सोप था। सी.एम.डी., मेडीसन कम्युनिकेशंस के सैम बलसारा ने हमसे एक डेली सोप करने के लिए संपर्क किया, लेकिन हमें तब यह नहीं समझ आ रहा था कि हम कैसे इसकी शुरू आत करें। इसलिए स्क्रिप्ट लिखने के लिए हमने लिंटास के आदी पोचा से संपर्क किया। यह एक ऐसी लड़की की कहानी थी, जो अपनी माँ के बलात्कारी से बदला लेने के लिए आती है और उस समय के हिसाब से यह विषय काफी प्रगतिशील था। मंदिरा बेदी, जो स्वयं उस समय नई थीं, ने शांति की भूमिका निभाई थी। तीन वर्षों में उन्होंने 1,000 एपीसोड किए और वह ऐसा पहला प्रोग्राम था, जिसका प्रसारण प्राइम टाइम पर श्रीलंका में भी हुआ।

जुड़ीं हङ्गामा चैनल से

सन् 1996 में सोनी एवं स्टार ने टेलीविजन की दुनिया में प्रवेश किया और जरीना ‘साया’ व ‘हिप-हिप हुर्रे’ जैसे शोज में व्यस्त हो गई। वह कहती हैं, “हम हमेशा कुछ नया करने की कोशिश करना चाहते थे। सन् 2002 तक प्रतियोगिता बहुत ज्यादा बढ़ गई थी और हम बालाजी के साथ भी जुड़ गए थे। पर सन् 2002 में हमें महसूस हुआ कि हमें स्क्रिप्ट एवं निष्पादन में थोड़ी और सावधानी व नियंत्रण रखने की आवश्यकता है। इसलिए हमने सोचा कि यह समय टेलीविजन को अलविदा कह फीचर फिल्में बनाने का है। और इस तरह हमने अपना ध्यान उस ओर केंद्रित कर लिया। लेकिन केवल पटकथा पढ़ने के सिवाय बाकी चीजों से हमने खुद को दूर रखा।”

सन् 2004 तक जरीना टेलीविजन की दुनिया में काम करते-करते इतनी थक गई थीं कि उन्होंने उसे छोड़ने का फैसला किया। उन्हें लगने लगा था कि वह सीखने के बजाय केवल

सीरियलों को बनाने में जुटकर रह गई। कुछ नया करने की चाह ने फिर उन्हें अपना ध्यान नई चीज पर लगाने को उकसाया। उन्होंने कुछ समय काम से छुट्टी लेकर 20 दिनों के लिए शमक डावर डांस कोर्स जॉइन कर लिया, मनपसंद किताबें पढ़ीं और विश्यना के लिए चली गई।

लेकिन इसके अलावा भी अभी बहुत कुछ करने के लिए उनके लिए दरवाजे खुल रहे थे। उन्हें रोनी स्क्रूवाला ने ‘हंगामा’ जॉइन करने के लिए कहा और दुबारा से वह व्यस्तता और विभिन्न गतिविधियों में संलग्न हो गई। पहले प्रोग्रामिंग हेड और फिर सी.ओ.ओ. की तरह उन्होंने हंगामा का कार्यभार सँभाला। वहाँ उनके लिए मार्केटिंग, सेल्स, पीआर और अन्य पहलू बिलकुल नए थे, पर वह हर चीज सीखने में लग गई। लेकिन बच्चों के क्षेत्र से जुड़ी मार्केटिंग बढ़ रही थी। फिर भी उन्हें पर्याप्त विज्ञापन नहीं मिल रहे थे, इसलिए उन्होंने उसे डिजनी को बेच दिया, जो हंगामा को खरीदने को आतुर था। सन् 2006 में जब हंगामा बिका तो उससे अलग होना किसी दर्दनाक अलगाव से कम नहीं था उनके लिए; पर तब तक वह चीजों के हाथ से जाने की क्षमता को विकसित कर चुकी थीं और आज वह उसे देखती हैं तो उसकी सफलता को देखकर उन्हें बहुत प्रसन्नता होती है। वह कहती हैं, “आरंभ में जब चीजें आशा के विपरीत मोड़ लेती थीं तो मैं हताश हो जाती थी, पर आज मैंने सीख लिया है कि कैसे पहले परेशानी को समझना और सुलझाना चाहिए। वैसे भी फिल्म एवं टेलीविजन में हार व सफलता बिलकुल सार्वजनिक हो सबके सामने आ जाती है। इसलिए अगर आप खुश रहना चाहते हैं तो जो हो रहा है, उसे बरदाश्त करने की क्षमता अपने में विकसित करनी होगी।”

टीम प्लेयर

इस क्षेत्र में आज 20 वर्ष से अधिक समय गुजर जाने के बाद भी उनका जुनून कायम है और हर बीतते दिन के साथ बढ़ ही रहा है। वह इस क्षेत्र में एक टीम प्लेयर की तरह जानी जाती हैं। वह इस बात का पूरा ध्यान रखती हैं कि उनका ब्रांड हर काम को सही ढंग से करे और वह अपनी टीम को भी सही ढंग से संचालित करे। वह कहती हैं, “अपनी टीम की कद्र करें और यह सुनिश्चित करें कि उन्हें लगातार प्रेरणा मिलती रहे। उनकी हर बात सुनें, उनकी समस्या का समाधान करें।” आज वह 70 से अधिक लोगों की टीम को संचालित करती हैं और उनके दिल्ली, चेन्नई व बंगलुरु में ऑफिस हैं।

गोआ, लंदन और बार्सिलोना उनके मनपसंद पर्यटन स्थल हैं और अपने कुत्ते स्प्राइट के साथ खेलना, पढ़ना एवं चाय पीना समय व्यतीत करने के बेहतरीन माध्यम हैं। पढ़ने की अत्यधिक शौकीन जरीना के संग्रह में 600 से अधिक किताबें हैं। वह हर हफ्ते 2-3 किताबें

तो खरीद ही लेती हैं। उनकी बहुत सी किताबें तो अभी भी उनके माता-पिता के घर रखी हैं, क्योंकि अपने घर में रखने की जगह ही उन्हें नहीं मिल पा रही है। वह खाली समय में यात्रा करते हुए हमेशा किताब पढ़ती हैं। वह कहती हैं, “अपने घर की बालकानी में छुट्टी के दिन बैठकर बाहर लगे पेड़ों को देखते हुए, अपने कुत्ते को पैरों के पास बिठाकर चाय की चुस्कियाँ लेते हुए किताब पढ़ने से मुझे सच्ची खुशी मिलती है। सबसे ज्यादा मैं अगर इस दुनिया में किसी से जुड़ी हुई हूँ तो वे मेरी किताबें हैं। जब लोग किताबों के पन्नों को मोड़ते हैं तो मुझे बहुत खराब लगता है, इसलिए मैं न किसी को अपनी किताबें पढ़ने को देती हूँ, न ही किसी से लेती हूँ। जब मैं 8 साल की थी तब किताबों के प्रति यह जुनून शुरू हुआ था। उससे पहले मैं अमेरिका में थी और जब भारत लौटी तो लोगों को यह देखकर बहुत आश्वर्य हुआ था कि मैं न तो पढ़ सकती हूँ, न ही लिख। अपना समय जो मैं बरबाद कर चुकी थी, उसकी भरपाई करने के लिए एक जिद की तरह मैंने किताबों को पढ़ना शुरू किया और आज मैं किताबी-कीड़ा बन चुकी हूँ।”

वह मानती हैं कि कार्य व परिवार के बीच समन्वय बनाने का तरीका बहुत आसान है, अगर परिवार का सहयोग मिले। कड़ी मेहनत तो कामयाब होने के लिए करनी ही पड़ती है; पर परिवारवालों का सहयोग सारा तनाव दूर कर देता है। शायद यही वजह है कि आज भी बिना थके वह अपनी कामयाबी की कहानी लिख रही हैं।



जिया मोदी



कानूनी क्षेत्र में नई ऊँचाईयाँ छुई

कॉरपोरेट कानून की विशेषज्ञा

“मेरे लिए ताकत का अर्थ है—बढ़लाव का एक प्रभावी माध्यम बनाना और एक व्यापक स्तर पर संगठन बनाना।”

एक विकट परामर्शदाता, चाहे वह मुकेश अंबानी का भाई अनिल अंबानी से सेटेलमेंट करा रही हों या टाटा स्टील का नेट स्टील पर अधिग्रहण करना हो, हर बड़ी एवं महत्वपूर्ण डील के पीछे होती है जिया मोदी की फर्म ए.जे.डि.बी. ऐंड पार्टनर्स। उनकी फर्म भारत में दूसरी सबसे बड़ी फर्म है और बड़े-बड़े कॉरपोरेट हाउसों को विलय व अधिग्रहणों पर सलाह देती है।

कई इन्वेस्टमेंट बैंकों की लीगल एडवाइजर जिया मोदी की विलय व अधिग्रहण मामलों में विशेषता है। सन् 2004 में उन्हें ‘बिजनेस टुडे’ ने इसलिए भारत की 25 सर्वाधिक

ताकतवर उद्यमियों में से एक के रूप में चयनित किया और फाइनेंशियल एक्सप्रेस द्वारा ‘नॉलेज प्रोफेशनल ऑफ द ईयर’ से सम्मानित भी किया गया।

जन्मजात गुण

पूर्व एटॉर्नी जनरल सोली सोराबजी और जेना की पहली बेटी जिया का जन्म संभवतः वकील बनने के लिए ही हुआ था। वह कहती हैं, “मैं हमेशा से वकील बनना चाहती थी और मुझे लगता है कि कुछ चीजें हमें जन्मजात वंशानुगत ढंग से प्राप्त होती हैं। पापा को अपने क्लाइंट्स से बात करते और अदालती मामलों पर टिप्पणियाँ देते सुन मेरे अंदर भी दिलचस्पी जगनी स्वाभाविक प्रक्रिया ही कहा जा सकता है।”

मुंबई में जनमी और पली-बढ़ी 54 वर्षीया जिया मोदी ने मुंबई के जे.बी. पेरिट स्कूल एवं एलफिंस्टन कॉलेज से पढ़ाई की और फिर उच्च शिक्षा के लिए कैंब्रिज व हार्वर्ड में दाखिला लिया। न्यूयॉर्क बार परीक्षा देकर वह न्यूयॉर्क एटॉर्नी के रूप में चुनी गई और फिर न्यूयॉर्क में बेकर ऐंड मैकेंजी के साथ पाँच वर्षों तक कार्य किया।

एक नई दुनिया से सामना

बचपन से ही वकील बनने की इच्छा और पिता से लगातार इस क्षेत्र में जाने के लिए प्रोत्साहन पाते रहने के बावजूद एक समय ऐसा भी आया जब जिया के मन में एयर होस्टेस बननी की इच्छा जाग्रत् हुई। लेकिन तब उनकी माँ ने उन्हें केवल पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित करने की सलाह दी। वह कहती हैं, “वह वक्त ऐसा था, जब मैं इस बात को लेकर दुविधा में थी कि मुझे क्या करना चाहिए; पर तब शायद मेरी माँ ने मेरी दुविधा भाँप मेरी दिशा तय कर दी थी। इंग्लैंड में कैंब्रिज यूनिवर्सिटी से एल-एल.बी. करने के बाद मैंने हार्वर्ड से एल-एल.एम. किया। कैंब्रिज ने मुझे सिखाया कि किस तरह से किसी चीज का विश्लेषण करने के बाद ही मैं उस पर प्रतिक्रिया करूँ। हार्वर्ड ने मेरा परिचय एक बिलकुल ही नई दुनिया से कराया। वहाँ मेरे बहुत सारे मित्र बने जिससे मेरी सोच का विस्तार हुआ।”

उसके बाद न्यूयॉर्क में वर्ष 1980 में उन्होंने न्यूयॉर्क बार की परीक्षा दी एवं बेकर और मैकेंजी से जुड़ गई। उस समय वह मात्र 23 वर्ष की थीं और एक स्टूडियो अपार्टमेंट में रहते हुए बैले, ब्रॉडवे और म्यूजियमों की सैर करते हुए शहर की खूबसूरती का आनंद उठा रही थीं। इसी दौरान उन्होंने अपनी पहली मुख्य डील की वाशिंगटन में चार होटलों के ताज ग्रुप के अधिग्रहण के मामले से उनका जुड़ना चर्चा का विषय बन गया।

कॉरपोरेट एसोसिएट की तरह काम करते हुए उन्होंने फ्रेंचाइजिंग, फाइनेंस और रिबिल्डिंग का काम किया। फिर वह अपने साथ अनुभव एकत्र कर भारत लौट आई।

पारिवारिक सहयोग

भारत लौटने के बाद उन्होंने अपने बचपन के साथी जयदेव मोदी से विवाह कर लिया। वह पेनिनसुला ग्रुप में रियल एस्टेट डेवलपर थे। उनकी सास भी वकील हैं और उनके दिवंगत ससुर भी एक जज थे। “इसलिए जब मेरा विवाह हुआ तो मेरी सास को इस बात की बहुत खुशी हुई कि मेरे साथ कानून फिर घर में लौट आया है। ससुराल होने का तो सवाल ही नहीं उठता था, बल्कि किसी और परिवार में मेरा विवाह हुआ होता तो मैं कभी भी अपने कॅरियर को आगे बढ़ा इस मुकाम तक नहीं पहुँच पाती।” जिया अपने आपको खुशकिस्मत मानती हैं कि एक तरफ उन्हें ऐसे पिता मिले जिन्होंने उन्हें वैधानिक निपुणताएँ सिखाई और दूसरी तरफ ससुराल में भी ऐसा माहौल मिला, जिससे कभी उन्हें ऐसे क्षेत्र में वर्चस्व स्थापित करने में दिक्कतों का सामना नहीं करना पड़ा, जो मुख्यतया पुरुषों का क्षेत्र माना जाता था।

वह कहती हैं, “मेरे पिता सोली सोराबजी मेरे आदर्श हैं। उन्हीं से मैंने सारी वैधानिक निपुणताएँ सीखीं। रात के खाने के समय जब पूरा परिवार साथ खाने बैठता तो बहुत बहस और वाद-विवाद होता। इस तरह कानूनी विचार-विमर्शों के साथ बचपन से ही मेरा परिचय हो गया था, जो आनेवाले वर्षों में बहुत काम आया।”

केवल पिता ही नहीं, उनकी माँ भी उनकी बेहतर मार्गदर्शिका थीं। उनकी माँ एक तरफ जहाँ उनकी पढ़ाई के प्रति अत्यधिक जागरूक थीं, वहीं चाहती थीं कि जिया इसके अतिरिक्त अन्य चीजों में भी निपुणता हासिल करें। “इसलिए मैं सुबह 5 बजे उठ जाती थी और महालक्ष्मी रेसकोर्स में घुड़सवारी करने जाती। वापस आकर फटाफट स्कूल जाने के लिए तैयार होती। 2 बजे स्कूल से घर आने के बाद पियानो सीखने जाती। फिर कढ़ाई, क्रोशिया व बुनाई-सिलाई सीखती।” 10 वर्षों तक उन्होंने भरतनाट्यम् भी सीखा।

जिया की माँ ने उन्हें हर तरह से गढ़ने के लिए तैयार किया, ताकि उन्हें कभी यह न लगे कि वह फलों काम नहीं कर सकती हैं। यही नहीं, उनकी माँ ने उनके अंदर धार्मिक आस्था के बीज भी बोए। उनका परिचय ‘बहाई’ धर्म से कराया। उनकी माँ चाहती थीं कि उन्हें और उनके तीनों भाइयों को सही मूल्य व संस्कार मिले। यही वजह है कि जिया अगर एक तरफ कानूनी दाँव-पेंचों को अपने अकाट्य तर्कों से ध्वस्त कर देती हैं तो दूसरी ओर अध्यात्म में भी रुचि रखती हैं।

चमत्कारिक व्यक्तित्व

आज जिया मोदी के कानूनी मसलों पर बहस और सफलता की जितनी तारीफ की जाए काम है। पर अपने कैरियर के आरंभिक दिनों में भी जिया जिस तरह से मामलों पर बहस किया करती थीं, वह उनके युक्तिसंगत तर्कों व चमत्कारिक व्यक्तित्व दोनों को ही प्रमाणित करते हैं। न्यूयॉर्क में काम करने के बाद जब वह भारत लौटीं तो उस समय उनका कैरियर बुलंदियों पर था। लेकिन भारत में बसने का निर्णय उनका नहीं था, क्योंकि उनके पति जयदेव, जिनसे शीघ्र ही उनका विवाह होने वाला था, चाहते थे कि जिया भारत आ जाएँ। जिया ने बहुत खुशी से उनके निर्णय को स्वीकार कर लिया। उसके बाद ही जन्म हुआ ए.जेड.बी. ऐंड पार्टनर्स का।

लेकिन इसकी शुरुआत कोई बहुत आसानी से नहीं हो गई थी। उन्होंने सबसे पहले ‘चैंबर्स ऑफ जिया मोदी’ नाम से एक छोटी सी फर्म खोली। जब उनके एक पार्टनर बेराम वकील उनसे आ जुड़े तो उन्होंने अपनी कंपनी को नाम दिया ‘सी.जेड.बी.’ कुछ समय बाद अक्षय चोडास्मा भी उनसे जुड़ गए। तब जिया ने मुंबई और बंगलौर दोनों जगह अपनी पैराक्टिस शुरू कर दी।

लेकिन वह इतना करने से ही संतुष्ट नहीं थीं और दिल्ली में भी अपनी पहचान कायम करना चाहती थीं। जब दिल्ली में उनका परिचय अजय बहल ऐंड कंपनी से हुआ, जो खुद विस्तार करने को उत्सुक थीं तो जिया उनके साथ विलय करने को तैयार हो गई और इस तरह आविभवि हुआ ए.जेड.बी. ऐंड पार्टनर्स का।

सिक्योरिटीज लॉज, कॉरपोरेट एम ऐंड ए, प्राइवेट इक्विटी और प्रोजेक्ट जायनेर्स के अलावा जिया ने फिर इंटेलेक्चुअज प्रॉपर्टी के क्षेत्र में भी काम करना शुरू कर दिया और वहाँ भी उन्हें कामयाबी हासिल हुई।

काम है एक जुनून

आज ए.जेड.बी. के दफ्तर दिल्ली, मुंबई एवं बंगलौर तीन शहरों में हैं और उनमें लगभग 80 वकील कार्यरत हैं। जिया से बेहतर विलय व अधिग्रहण की कला और बारीकियों को कोई नहीं समझ सकता है। काम के प्रति पूर्णतया समर्पित और एक जुनून की तरह 16 घंटे लगातार काम करनेवाली जिया के चेहरे पर कभी थकावट के चिह्न नहीं दिखाई देते। एक मुसकराहट हमेशा उनके चेहरे पर छाई रहती है; लेकिन उस मुसकराहट के पीछे छिपी उनकी लौह-सी दृढ़ता को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है, जिसके बल पर वह कॉरपोरेट जगत् में अपनी आश्वर्यजनक कानूनी दक्षता व दूरदर्शिता के लिए जानी जाती हैं।

भारत की अग्रणी कॉरपोरेट वकीलों में से एक जिया मोदी मानती हैं कि पहले अवश्य ही महिला वकीलों को सशंकित नजरों से देखा जाता था, किंतु अब खुली बाँहों से उनका स्वागत किया जा रहा है। लेकिन उन्हें भी पुरुषों की तरह बराबर मेहनत करनी पड़ती है और निजी जीवन में बहुत सारे त्याग भी। वह मानती हैं कि कानून के क्षेत्र में बिना परिवार के सहयोग के कभी भी कामयाबी हासिल नहीं की जा सकती है। तीन पुत्रियों की माँ जिया बहुत संतुष्टि के भाव से कहती हैं, “मेरे पति मेरे प्रोफेशन से जुड़ी समस्याओं व उसकी माँगों से पूर्णतया वाकिफ हैं। ऐसा नहीं होता तो मैं दिन के 14 से 16 घंटे काम करते हुए नहीं गुजार पाती।”

इकोनॉमिक्स टाइम्स का सन् 2010 की बिजनेस वूमैन का अवार्ड जीतनेवाली जिया मोदी पुरुष-प्रधान कानूनी क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान बनानेवाली पहली महिला हैं। सन् 2004 और 2006 इकोनॉमिक्स टाइम्स की भारत की 100 सर्वाधिक श्रेष्ठ सी.ई.ओ. की सूची में उनका नाम सूचीबद्ध है। एडवरटाइजिंग स्टैंडर्ड्स काउंसिल के बोर्ड की डायरेक्टर होने के अतिरिक्त वह न्यू इरा हाई स्कूल, पंचगनी की एक ट्रस्टी भी हैं और कुछ एन.जी.ओ. से भी जुड़ी हैं।

जिया मोदी के लिए ताकत का अर्थ कामयाबी पाना नहीं है, बल्कि बदलाव का एजेंट बनना है।

यात्रा करने की शौकीन जिया के खासतौर पर इटली, ग्रीस और राजस्थान मनपसंद पर्यटक स्थल हैं। उन्हें पुरानी, रोमांटिक और हॉलीवुड की हास्य-प्रधान फ़िल्में देखना पसंद है।



ज्योति नाइक



औरतों को आत्मसम्मान से जीना सिखाया

प्रेसीडेंट, श्री महिला गृह उद्योग, लिज्जत पापड़

“मुझे इस बात का गर्व है कि अपने भविष्य का नियंत्रण हमारे श्वुद के हाथ में है। लिज्जत जब नहीं था तो और्जुनें जानती तक नहीं थीं कि जीवन कैसा होता है। वे कभी घर से बाहर तक नहीं निकली थीं, अपने श्वुद के लिए कभी कुछ उपलब्ध भी हासिल नहीं की थी; परं आज बदलाव की लहर तेजी से चल रही है।”

औरत को एक मजबूत व आत्मनिर्भर हस्ती की तरह उभरने में पारंपरिक भारतीय पुरुष-प्रधान समाज में लगातार संघर्ष करते रहना पड़ता है। लेकिन ऐसी कई महिलाएँ हैं, जिन्होंने अपनी एक जगह बनाने के लिए सारी चुनौतियों का सामना कर अपनी उपस्थिति को न सिर्फ देश में बल्कि विदेशों में भी दर्ज करवाया। कहा जाता है कि यह दुनिया पुरुषों

की है; पर ज्योति नाइक, प्रेसीडेंट, श्री महिला गृह उद्योग, लिज्जत पापड़ ने इस बात को गलत साबित कर दिया है। वह आज एक ऐसी संस्था को चला रही हैं, जिसमें केवल औरतें काम करती हैं और जो केवल औरतों के लिए है। वह एक ऐसा सशक्त संगठन है, जो औरतों को आत्मसम्मान से जीना सिखाता है और उन्हें आर्थिक आजादी भी देता है।

पहल, जो बन गई उदाहरण

कररम-कुररम, साथ स्वाद में लिज्जत पापड़, यह पंक्ति आज भी लोगों की जुबान पर है, जिसकी वजह से लिज्जत पापड़ हर घर की जरूरत बन चुका है। यह ऐसा ब्रांड है, जो न सिर्फ श्री महिला गृह उद्योग की सफलता की कहानी का उदाहरण पेश करता है, बल्कि इससे सही मायने में जुड़ी महिलाओं की क्षमताओं की गाथा भी सुनाता है। श्री महिला गृह उद्योग की प्रेसीडेंट ज्योति नाइक उन सफल उद्यमियों में से एक हैं, जिन्होंने अपनी मेहनत से लगभग 40,000 महिलाओं की एक टीम तैयार की है। कहने को पापड़ बनाने जैसा उद्यम छोटा लगता है, पर आज वह विदेशों में भी अपनी एक पहचान बना चुका है।

सन् 1959 में ज्योति नाइक की माँ जसवंतीबेन पोपट ने खाली समय का सदुपयोग करने एवं आर्थिक हालत सुधारने के लिए समस्त महिलाओं को साथ लेकर चलने तथा एक उद्यम आरंभ करने की जो पहल की थी, वह आज ऐसी महिलाओं के लिए मिसाल है, जो बिना प्रयास किए हिम्मत हार जाती हैं। उस समाज के सामने ऐसा उदाहरण है जो औरत की शक्ति और दृढ़ता को कम ऊँकता है और उसके प्रयासों की समय-समय पर परीक्षा लेने से नहीं चूकता है।

सात महिलाओं द्वारा मात्र 80 रुपए से शुरू होनेवाले इस उद्यम का आज इतना विस्तार हो चुका है कि देश भर में इसकी लगभग 35 शाखाएँ और 40 डिवीजन सेंटर हैं। जसवंतीबेन ने जब उधार के 80 रुपयों से अपने इस सफर की शुरू आत की थी तो बेशक उन्होंने नहीं सोचा था कि एक दिन उनका उद्यम विश्व स्तर पर ख्याति पा लेगा और हजारों महिलाओं के रोजगार का जरिया बनेगा। धैर्य और विश्वास के बल पर विकसित यह उद्योग आज हजारों अशिक्षित महिलाओं के जीवन की आस बन गया है।

ज्योति नाइक बचपन में जब अपनी माँ को सुबह 4 बजे उठकर पापड़ बेलते देखतींतो उनका मन भी पापड़ बेलने को करता। वह कहती हैं, “अपनी माँ की मदद करने के लिए मैं 12 वर्ष की उम्र से ही श्री महिला गृह उद्योग, लिज्जत पापड़ सोसाइटी के दफ्तर जाने लगी थीं। सन् 1973 में मैं बांद्रा की शक्कर बाजार शाखा में पैकिंग का कार्य करने लगी और बाद में वडाला की शाखा में संचालिका बन गई।” 23 वर्ष की उम्र में वह लिज्जत की स्वतंत्र

सदस्य बन गई और विवाह के बाद भी यह कार्य करना बंद नहीं किया। इसके विपरीत उनके पति ने स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ले ली, ताकि ज्योति नाइक घर की जिम्मेदारियों से मुक्त होकर पूर्णतया सोसाइटी के काम पर ध्यान दे सकें।

संगठन है एक परिवार

अगर कुछ ठान लिया जाए तो अवरोधों और विपरीत परिस्थितियों को परास्त कर अपनी राह तलाशना और उस पर चलते रहना मुश्किल नहीं होता। बस चाहिए होती है हिम्मत चुनौतियों को करारा जवाब देने की। ज्योति नाइक न सिर्फ कार्यक्षेत्र में सबसे आगे रहती हैं, बल्कि घर के क्षेत्र को भी वह निपुणता से निभाने में सक्षम हैं। सन् 1999 में वह इस संगठन की प्रेसीडेंट बनीं और तभी से इसे बखूबी सँभाल रही हैं। इस संगठन की नींव तीन बातों पर टिकी हुई है—व्यापार, परिवार व निष्ठा। किसी दान, उपहार या अनुदान को स्वीकार किए बिना लिज्जत पापड़ उद्योग ने आरंभ से बेहतरीन वस्तुओं का उत्पाद और उचित दामों पर उनकी बिक्री करने की अवधारणा का पालन किया है। सारा फायदा व नुकसान संगठन और सदस्य मिलकर उठाते हैं। हर केंद्र के लिए एक संचालिका होती है, जो उसके कार्यों को देखती है। सबसे अहम बात तो यह है कि इस उद्योग की हर सदस्या सामूहिक रूप से कल्याण कार्यों के लिए अपनी आय का कुछ अंश दान करती है।

जिस क्षण कोई नई सदस्या इस संगठन में शामिल होती है, जिसे ज्योति एक परिवार मानती हैं, वह उन्हें गुणवत्ता को अपने कार्य का मंत्र बनाने की सलाह देती हैं और उन्हें सिखाया जाता है कि कैसे सही ढंग से पापड़ को बेला जाए और साथ ही संगठन की नीतियों व लक्ष्यों से अवगत कराया जाता है।

ज्योति नाइक का यही प्रयास रहता है कि पापड़ बनाने की हर प्रक्रिया बहुत सुगमता से मिले, सदस्यों को उचित लाभ मिले और ग्राहक को उचित मूल्य पर बेहतरीन उत्पाद मिले तथा समाज को उसके दान से फायदा हो। उनकी सारी गतिविधियों से गांधीवादी सरलता झलकती है। लेकिन ऐसा करना आखिर संभव कैसे हुआ है? हर सुबह लिज्जत ब्रांच में कुछ औरतें आटा गूँधने जाती हैं, जिन्हें फिर उन महिलाओं तक पहुँचाया जाता है, जो उनके पापड़ बेलती हैं। जब वे महिलाएँ गूँधा हुआ आटा लेने आती हैं तो पिछले दिन के बने पापड़ भी लाती हैं, जिनकी गुणवत्ता जाँचने के लिए परीक्षण किया जाता है। इस तरह से उनका वितरण चक्र कार्य करता है।

आर्थिक आजादी का सपना हुआ सच

जो भी महिला इस संस्था के मूल्यों को ईमानदारी से अपनाने को तैयार होती है और जो गुणवत्ता की कद्र करती है, वह संगठन की सदस्य बन सकती है। साथ ही जहाँ पापड़ बेले जाने होते हैं, उस जगह का एकदम साफ होना भी अनिवार्य होता है। जिन महिलाओं के पास ऐसी सुविधा नहीं होती है वे आटा गूँधने या पैकिंग जैसे किसी अन्य कार्य का दायित्व ले सकती हैं।

ज्योति नाइक का मानना है कि औरत की आर्थिक आजादी की भावना ने एक छोटे से उद्यम को इतना बड़ा व्यापार बना दिया है। ये औरतें यहाँ अपने बच्चों को पालने व आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने की दिशा में यहाँ कार्य करती हैं। वे अब इतनी सक्षम हो चुकी हैं कि स्वयं निर्णय ले सकें, अपने बच्चों को स्कूल भेज सकें और अपने आत्मसम्मान की रक्षा कर सकें।

80 रुपए से शुरू हुआ यह व्यापार आज 300 करोड़ रुपए का बन चुका है। “इतने बड़े टर्नओवर के पीछे इस काम से जुड़ी महिलाओं की कड़ी मेहनत है। इस संगठन ने गाँव की औरतों को आत्मनिर्भर व सक्षम बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और तरक्की की राहें खोली हैं। इस संगठन ने समाज में अपना स्तर सुधारने में उन्हें सही मंच प्रदान किया है।” कहना है ज्योति नाइक का। वर्ष 2001-02 में जब उन्हें ‘बिजनेस वूमन ऑफ द ईयर’ से सम्मानित किया गया तो वह लिज्जत से जुड़ी कई महिलाओं के साथ अवार्ड लेने मंच पर आई। उनके सम्मान में देश की कॉरपोरेट जगत् की बड़ी-बड़ी हस्तियों ने खड़े होकर तालियाँ बजाईं।

ज्योति नाइक मानती हैं कि इस सम्मान की हकदार केवल वही नहीं हैं, वरन् संस्था की हर वह महिला है, जो लगन और ईमानदारी से यहाँ काम करती है। वह कहती हैं कि मुझे इस बात का गर्व है कि यहाँ हमें रोकने के लिए कोई नहीं है। अपने भविष्य का नियंत्रण हमारे खुद के हाथ में है। लिज्जत जब नहीं था तो औरतें जानती तक नहीं थीं कि जीवन कैसा होता है। वे कभी घर से बाहर तक नहीं निकली थीं, अपने खुद के लिए कभी कुछ उपलब्ध भी हासिल नहीं की थी।

उनका यही गर्व है जो किसी तरह का उपहार स्वीकार नहीं करता है। वह किसी तरह का अनुदान, उपहार या मदद नहीं लेती हैं। इसके विपरीत लिज्जत की सदस्या समय-समय पर मिलजुलकर दान देती हैं, यहाँ तक भूकंप पीड़ित एक गाँव तक को उन्होंने गोद लिया हुआ है। निस्संदेह लिज्जत महिला ज्योति नाइक के नेतृत्व व मार्गदर्शन ने यह तो साबित कर ही दिया है कि अगर दृढ़ इच्छाशक्ति हो तो कामयाबी बहुत दूर नहीं होती।



तर्जनी वकील



बैंकिंग क्षेत्र में लिखी नई इबादत

पूर्व चेयरपर्सन, ऐक्सिस बैंक

“जब आप काम कर रहे होते हैं तो यह बात मायने नहीं रखती कि आप महिला हैं या पुरुष, बल्कि मायने रखता है आपका प्रोफेशनल फॉर्मला!”

बैंक और फाइनेंशियल संगठन की पहली भारतीय महिला प्रमुख बनने का गौरव प्राप्त करनेवाली तर्जनी वकील ने अपने कैरियर की शुरुआत सन् 1958 में महाराष्ट्र स्टेट फाइनेंस कॉरपोरेशन (एम.एस.एफ.सी.) से की। जब 75 रुपए का पहला वेतन उनके हाथ में आया तो उन्हें लगा जैसे सारी दुनिया को ही उन्होंने मुट्ठी में कर लिया हो। उसके बाद तो वह जिस भी वित्तीय संगठन से जुड़ीं, सफलता के नए आयाम उसके और अपने साथ जोड़ती गई।

सन् 1965 में वह आई.डी.बी.आई. के साथ जुड़ीं और फिर ऐक्सिस बैंक के साथ जुड़कर कामयाबी का एक नया इतिहास लिखकर उन्होंने एशिया में उच्चतम श्रेणी रैंकिंग वूमैन

ऑफिशियल का दर्जा हासिल किया। यहाँ उन्होंने नई तकनीकों का इस्तेमाल किया, नए पैमाने स्थापित किए और अपने कार्यकाल के दौरान स्थापित मजबूत तंत्र व प्रक्रियाओं के द्वारा भारतीय बैंकिंग के संपूर्ण स्वरूप को ही बदल डाला।

कैरियर वूमैन बनने का सपना

मुंबई में जनमी और पलीं तर्जनी तीन भाइयों की एक बहन हैं और वह भी सबसे छोटी। उनके भाइयों और उनकी उम्र में काफी फासला था। मुंबई के एलफिंस्टन कॉलेज से इतिहास में पोस्टग्रेजूएट करने से पहले उन्होंने एच.पी.टी. गल्फ़ स्कूल से अपनी आरंभिक शिक्षा ग्रहण की। इतिहास विषय लेनेवाली तर्जनी ने कभी कल्पना भी न की कि वह कभी बैंकिंग जैसे क्षेत्र में अपना नाम कमाएँगी हालाँकि उस दौरान उन्होंने अपने जीवन का कोई लक्ष्य तय नहीं किया था; लेकिन वह अवश्य जानती थीं कि वह एक दिन कैरियर वूमैन जरूर बनेंगी और उनके पिता भी उनसे ऐसी ही अपेक्षा रखते थे।

स्कूल और कॉलेज में हमेशा अच्छे अंक लाकर वह लगातार अपने पिता के सपने को और मजबूत करती रही। वैसे भी उनके परिवार में शिक्षा को बहुत महत्व दिया जाता था और सभी उच्च शिक्षित व खुले विचारों के थे तथा उन्हें हर प्रकार का सहयोग देते थे। वह मानती हैं कि अपने पारिवारिक माहौल की वजह से वह स्थिति का सामना करने तथा हर तरह के वातावरण के अनुसार स्वयं को ढालने में सक्षम हो पाई।

महत्वपूर्ण बदलाव

तर्जनी जिस दौरान एम.ए. कर रही थीं, उनके भाई ने उन्हें सुझाया कि वह एम.एस.एफ.सी. में नौकरी कर लें। पढ़ाई के साथ-साथ नौकरी करने का अवसर मिलते देख उनकी खुशी का ठिकाना न रहा। एम.एस.एफ.सी. एक छोटा सा संगठन था, जिसमें तब केवल पेरोल पर मात्र 20 लोग काम करते थे। पढ़ाई और नौकरी के दायित्वों को साथ-साथ निभाना कोई आसान बात नहीं थी और समय न मिल पाने के कारण कई बार वह खाना ही नहीं खाती थीं।

पढ़ाई पूरी होने के बाद उन्हें असिस्टेंट का पद दे दिया गया। वहाँ उन्होंने टर्म लेंडिंग में विशिष्टता हासिल की। लघु स्तर के उद्योगों पर विशेष ध्यान देते हुए उनके विकास व विस्तार करने में उन्होंने मदद की, ताकि वे महाराष्ट्र के संपूर्ण क्षेत्र में फैल सकें। 27 वर्ष की कम उम्र में ही उन्होंने महाराष्ट्र के लघु स्तर के उद्योगों का उद्धार करनेवाली संरक्षिका के

रूप में प्रतिष्ठा हासिल कर ली। तर्जनी की जिंदगी में आया यह महत्वपूर्ण बदलाव था, जिसने उनके कॅरियर वूमैन के सपने को हकीकत में बदलने का अवसर दिया।

सामने आई प्रबंधकीय क्षमता

एम.एस.एफ.सी. में काम करते हुए तर्जनी को 7 वर्ष हो गए थे कि एक दिन अखबार में एक विज्ञापन पर उनकी नजर पड़ी। आई.डी.टी.आई, जो तभी बना नया संगठन था, वह ऐसे नए कर्मचारियों को नियुक्त करना चाहता था, जिनके पास औद्योगिक वित्त के क्षेत्र में काम करने का अनुभव व योग्यता थी। तर्जनी के समय में आई.आई.एम. जैसे संस्थान भारत में नहीं थे। इसलिए नियुक्तियाँ करना वास्तव में एक विकट कार्य हुआ करता था। उन्होंने आई.डी.बी.आई. में आवेदन किया और उनका चयन हो गया।

आई.डी.बी.आई. में डिप्टी जनरल मैनेजर के पद तक पहुँचने के बाद तर्जनी का बतौर जनरल मैनेजर ऐक्सिस बैंक से जुड़ना कोई अस्वाभाविक घटना नहीं थी। उस समय वह बैंक विकास की आरंभिक प्रक्रिया से गुजर रहा था और एक मिली-जुली भागीदारी व साहचर्य का वातावरण निर्मित करना उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती थी।

सन् 1993 में उन्हें ऐक्सिस बैंक का चेयरमैन नियुक्त किया गया। इस समय भारतीय अर्थव्यवस्था विदेशी बाजारों में अपने पंख फैलाने लगी थी, जिसकी वजह से उद्योगों के लिए विस्तृत अवसर खुल गए थे। निर्यात के क्षेत्र में असाधारण रूप से विस्तार हो गया था। तर्जनी की प्रबंधकीय क्षमताएँ तब सबके सामने आई जब उन्होंने ऑफिस में एक साथ तीन पीढ़ियों से कुशलता से व्यवहार किया और ऐसा माहौल निर्मित किया, जिसमें सब लोग मिलकर काम कर सकें।

चेयरमैन बनने के बाद वह रोज सुबह 9.45 बजे सारे ग्रुप हेड्स से मीटिंग करतीं और उसमें पिछले दिन हुई चीजों पर चर्चा की जाती, वर्तमान में चल रहे प्रोजेक्ट्स की समीक्षा की जाती और नए प्रोजेक्ट्स के प्रस्तावों को रखा जाता। वह यह सुनिश्चित करतीं कि ऐक्सिस में हर मीटिंग समय तय करने के बाद ही की जाए—यह उनके प्रोफेशनल दृष्टिकोण का एक और उदाहरण था। इस तरह की मीटिंगों में एक पारदर्शिता बनी रहती। यही नहीं, ऐक्सिस बैंक के हर फ्लोर को इस तरह डिजाइन किया गया कि पारदर्शिता बनी रहे।

उन्होंने अपनी प्रबंधकीय क्षमताओं व कुशाग्र बुद्धि से ऐक्सिस बैंक को 1 अरब डॉलर का बैंक बना दिया, जिसके भारत में 11 और विदेश में 5 ऑफिस खोले गए। तर्जनी और उनकी टीम ने बैंक को इस मुकाम कर पहुँचाने के लिए 24 घंटे काम किया।

राह में आई बाधाएँ

कैरियर के आरंभिक दिनों में प्रशिक्षण को सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। जिन प्रशिक्षणों की तर्जनी को आवश्यकता थी, उसे पाने में उनका महिला होना सबसे बड़ी बाधा साबित हुई। उनके सीनियर उनकी सुरक्षा को लेकर इतने चिंतित रहते थे कि उन्हें ट्रेनिंग प्रोग्राम के लिए विदेश नहीं भेजते थे। वे मानते थे कि एक अकेली महिला का विदेश यात्रा करना असंभव है और फिर पराए देश में वह अकेले कैसे सबकुछ संभाल पाएँगी।

इसलिए जब तर्जनी ने ट्रेनिंग प्रोग्राम में जाने की इच्छा प्रकट की तो उन्हें कहा गया कि वह बिना किसी प्रशिक्षण के भी बेहतर करने में सक्षम हैं। 17 वर्ष के उनके कैरियर में उन्हें केवल 10 दिनों के लिए ट्रेनिंग पर जाने का मौका मिला।

वह कहती हैं कि “उस समय महिलाओं को लेकर इतनी संकुचित धारणाएँ थीं कि मुझे फैक्टरियों तक में जाने की इजाजत नहीं थी, क्योंकि वहाँ सारे पुरुष कामगार होते हैं, जिनसे बात करना मेरे लिए उचित नहीं माना जाता था। लेकिन मैं मानती हूँ, जब आप काम कर रहे हों तो महिला हैं या पुरुष यह बात मायने नहीं रखनी चाहिए, बल्कि प्रोफेशनल होना मायने रखता है। जो लोग इस आधार पर काम करते हैं, वही सही सोच के साथ काम कर सकते हैं और दूसरों को भी आगे बढ़ने का मौका दे सकते हैं।”

इसके बावजूद तर्जनी निरंतर आगे बढ़ती गई और यह सिद्ध कर दिया महिलाएँ हर क्षेत्र में अव्वल हैं और महिला होना बाधा होने के बावजूद उन्हें सफल होने से नहीं रोक सकता है। सन् 1996 में उन्हें ‘वूमैन ऑफ द ईयर’ घोषित किया गया। सन् 1997 में ‘के.पी.एम. के वर्ल्ड वाइड बिजनेस’ ने बिजनेस की दुनिया में अपनी क्षमता को प्रमाणित करने के लिए 50 शीर्ष महिलाओं में उन्हें चुना।

सन् 1996 में ही रिटायर होने के बाद भी आज तर्जनी एक सक्रिय जीवन बिता रही हैं। वह एशियन पेंट्ल इंडिया लि., इंडियन रेयॉन एंड इंडस्ट्रीज लि., महिंद्रा इंटर-ट्रेड लि., डी.एस.पी. मेररिल ट्रस्टी कंपनी प्राइवेट लि. के बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स में हैं और ए.बी.एन. एमरो बैंक के स्थानीय परामर्श बोर्ड की सदस्य भी हैं।

वह यात्रा करना पसंद करती हैं और भारतीय शास्त्रीय संगीत, थिएटर व नाटक उनकी कमजोरी हैं, इसलिए अधिकांश समय इन शौकों को पूरा करने में लगती हैं।

अविवाहित रहना कोई जान-बूझकर लिया गया निर्णय नहीं है, “बस, मैं अपने काम में इतनी व्यस्त रही कि शादी करने का ख्याल ही नहीं आया।”

तर्जनी मानती हैं कि सफलता का अर्थ अव्वल रहना नहीं है। सही लक्ष्यों की प्राप्ति ही सफलता है। लक्ष्य की गुणवत्ता ही सफलता की कुंजी है। सफलता का अर्थ विनम्र रहना भी है और सफलता पाने के बाद भी अहंकार न करना ही सफलता है।



नीलम धवन



भारत की पहली आईटी महिला

मैनेजिंग डायरेक्टर, हेवलेट पैकर्ड, इंडिया

“कोई भी काम बहुत कठिन नहीं होता। हमें केवल कोशिश करनी चाहिए और किसी भी कार्य को जब पूर्ण समर्पण के साथ किया जाता है तो सकारात्मक परिणाम द्वये हमारे सामने आ जाते हैं। ताकत का अर्थ होता है—सोच व नए विचारों का प्रभाव।”

भारतीय आई.टी. क्षेत्र में इन दिनों महिलाओं का उसमेंशामिल होना और एक मजबूत उपस्थिति दर्ज कराना चर्चा का विषय और बहस का मुद्दा बन चुका है। महिला सी.ई.ओ. होना जहाँ भारत में आज एक स्वीकार्य तथ्य बन चुका है, वहीं आई.टी. सेक्टर में उनका पदार्पण जहाँ कुछ सालों पहले तक हैरानी पैदा करने की बात होती थी और उनका बॉस बनना आसानी से स्वीकार्य नहीं था। लेकिन आज स्थितियाँ बिलकुल बदल चुकी हैं।

अपने प्रोफेशनल कैरियर में माइक्रोसॉफ्ट इंडिया की पहली महिला नीलम धवन को इस क्षेत्र की बारीकियाँ सीखने और अपनी योग्यता को प्रमाणित करने के लिए अनेक उतार-चढ़ावों का सामना करना पड़ा। पर इसके बावजूद आई.टी. इंडस्ट्री की बड़ी-बड़ी कंपनियों के साथ उच्च पदों पर काम करने का उन्हें मौका मिला जिसने उनके अंदर आत्मविश्वास के ऐसे अंकुर डाले, जिनके पल्लवित-पुष्पित होने के साथ-साथ वह भी ग्रो करती गई। और जब कदम-कदम पर कठिनाइयाँ आईं तो भी वह अपने चेहरे पर मुसकान लिए आगे बढ़ती गई। तनाव को कभी अपने पास आने की अनुमति न देनेवाली नीलम के लिए विपरीत स्थितियों में भी सहज रहना एक सहज सी बात है। नीलम की उपलब्धियों की सूची भी बहुत लंबी है। उन्होंने पिछले दशक में न सिर्फ एक, बल्कि दुनिया की दो सबसे विशालतम तकनीकी कंपनियों के भारतीय ऑपरेशंस को संभाला है।

बचपन की उपलब्धि

एक मध्य वर्गीय परिवार से संबंधित नीलम के माता-पिता बहुत ही प्रगतिशील व आजाद ख्यालों के थे, जिनके लिए बेटी की पढ़ाई उतनी ही महत्वपूर्ण थी जितनी कि बेटे की। नीलम का जन्म 22 अक्टूबर, 1960 को नई दिल्ली में एक बहुत ही सुसंस्कृत व खुले विचारोंवाले परिवार में हुआ था। उनके पिता दर्शन कुमार की जीवन-शैली बहुत व्यस्त थी और अक्सर वह परिवार के लिए समय नहीं निकाल पाते थे। इसके बावजूद वह इस बात से अवगत रहते थे कि उनके दोनों बच्चे क्या कर रहे हैं। साथ ही वह अपने बेटे और बेटी दोनों को ही लेकर बहुत ज्यादा महत्वाकांक्षी भी थे। घर का माहौल इस तरह का था कि नीलम को कभी एहसास ही नहीं हुआ कि लड़की होने के कारण समाज के नियमों के अनुसार उन्हें कुछ पाबंदियों के तहत रहना होगा और कुछ नियमों का पालन करना होगा। पिता ही नहीं, उनकी माँ कैलाश का भी उन पर बहुत प्रभाव पड़ा, जिन्होंने खुद '50 के दशक में ग्रेजुएशन किया था और साहित्य पढ़ने की शौकीन थीं, अंग्रेजी-हिंदी साहित्य को पढ़ने के अलावा उन्होंने खुद बच्चों के लिए किताबें लिखी थीं।

दिल्ली में पैदा हुई एवं पली-बढ़ी नीलम ने अपनी शिक्षा भी यहींपूरी की और कैरियर की शुरु आत भी। स्कूल में नीलम उच्च श्रेणी पानेवालों में से थीं और वह उनकी जिंदगी की सबसे पहली उपलब्धि थी, जिसे पाकर उन्हें पूर्णता का एहसास हुआ था। उन जैसी लड़की के लिए, जिसने पढ़ाई को हर चीज से ज्यादा महत्व दिया था और गंभीरता से भी लिया था, उसके लिए टॉप करना किसी सपने के सच होने से कम नहीं था। उस बार नीलम ने पहली बार अपना नाम अखबार में देखा था; पर तब उन्हें नहीं पता था कि आनेवाले समय में उनके नाम के साथ अनगिनत उपलब्धियाँ जुड़ जाएँगी और अखबारों में नाम आना भी

आम बात हो जाएगी। उन्होंने तब इस बात की कल्पना तक नहीं की थी कि वह देश की सफलतम महिलाओं की श्रेणी में अपनी उपस्थिति दर्ज कराएँगी।

अंकुरण महत्वाकांक्षा के बीजों का

नीलम के माता-पिता चाहते थे कि वह डॉक्टर बनें, पर जब नीलम ने विज्ञान विषयों के प्रति दिलचस्पी नहीं दिखाई तो उन्हें बहुत निराशा हुई। हालाँकि स्कूल में वही ऐसी एकमात्र छात्रा थीं, जिन्हें 'जूनियर साइंस टैलेंट' अवार्ड मिला था। फिर भी नीलम को उनके माता-पिता ने बाध्य नहीं किया कि वह साइंस लें। छठी कक्षा तक आते-आते नीलम में एक कंपिटीशन की भावना आ गई थी और क्लास में टॉप आना जैसे उनका लक्ष्य बन गया था।

वह कहती हैं, “मेरी माँ मानती थीं कि औरतों का आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होना बहुत जरूरी है, हालाँकि उन्हें खुद को कभी काम करने का अवसर नहीं मिला था। वह आज इस दुनिया में नहीं हैं, पर उनकी हर बात आज के संदर्भ में सटीक बैठती है। उनके अनुसार, अगर औरत आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होगी तो भावनात्मक, सांस्कृतिक व सामाजिक आत्मनिर्भरता अपने आप आ जाएगी। इसीलिए वह हमेशा मुझे कैरियर बनाने के लिए प्रोत्साहित करती रहती थीं।” माता-पिता से मिले प्रोत्साहन के कारण ही उनके अंदर महत्वाकांक्षा के बीज अंकुरित हो गए थे। उनके पिता का लड़के-लड़की में भेदभाव न करना और माँ की बौद्धिक प्रवृत्ति दोनों ही नीलम के लिए कुछ आधार बने।

खुले दरवाजे

दिल्ली के सेंट स्टीफेंस कॉलेज से सन् 1980 में इकोनॉमिक्स में ग्रेजुएशन करने के बाद उन्होंने फैकल्टी ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज (एफ.एम.सी.) से बिजनेस मैनेजमेंट में पोस्ट ग्रेजुएशन किया। नीलम ने मैनेजमेंट कोर्स में बेहतर प्रदर्शन किया और मार्केटिंग व ऑपरेशनल रिसर्च में स्पेशलाइजेशन किया। लेकिन जब प्लेसमेंट की बात आई और कंपनियाँ नियुक्ति करने के लिए कैंपस में आने लगीं तो आत्मविश्वासी नीलम को एक झटका लगा। उनसे कम होनहार छात्रों को नियुक्ति पत्र मिल रहे थे, पर नीलम के मार्केटिंग में स्पेशलाइजेशन को लेकर नियोक्ता उन्हें लेने को तैयार नहीं थे।

आई.टी. नीलम की प्राथमिकताओं की सूची में पहले नंबर पर नहीं था। सन् 1982 में एफ.एम.सी. के बाद, अन्य बी-स्कूल स्नातकों की तरह, वह हिंदुस्तान लीवर और एशियन पेंट्स जैसे प्रमुख एफ.एम.सी.जी. में काम करने की इच्छुक थीं। जब महिलाएँ कॉरपोरेट सेक्टर में पैठ बना चुकी थीं, महिलाओं की नियुक्ति सेल्स व मार्केटिंग में करने को लेकर

कंपनियाँ आशंकाग्रस्त थीं। '80 के दशक में सेल्स और मार्केटिंग जैसे पुरुषों के आधिपत्यवाले कार्यों में महिलाओं का प्रवेश एकदम ही नहीं था। दोनों कंपनियों ने नीलम को लेने से इनकार कर दिया, क्योंकि मार्केटिंग के लिए वह किसी महिला को लेकर किसी तरह का जोखिम उठाने को तैयार नहीं थे।

हताश नीलम के सामने बैंक में नौकरी करने के सिवाय और कोई विकल्प नहीं था, फिर भी उन्होंने ए.एन.जे. ग्रिंडले बैंक के ऑफर को ठुकरा दिया, क्योंकि वह एक क्लर्क नहीं बनना चाहती थीं। पर तभी सूचना तकनीक के सिरमौर एच.सी.एल. ने सेल्स और मार्केटिंग के लिए आवेदन माँगे। वह उस क्षेत्र की एक नई कंपनी थी और महिलाओं के लिए उनके दरवाजे खुले थे। वह कहती हैं, “उस समय सूचना व प्रौद्योगिकी क्षेत्र अपनी शैशवावस्था में था; पर मुझे बैंक के बजाय, जहाँ पहले ही महिलाएँ अपनी पहचान बना चुकी थीं, ज्यादा चुनौतीपूर्ण लगा। उस समय महिलाओं का आई.टी. क्षेत्र में आना हैरत की बात थी।”

उस समय एच.सी.एल. में उनके अतिरिक्त एक और ही अन्य महिला थीं। कुछ डीलों के साइन कराने के बाद वहाँ लोगों ने उन्हें स्वीकारना शुरू कर दिया। कुछ वर्षों बाद उन्हें भारत में पी.सी. बेचने की जिम्मेदारी सैंपी गई, जिसमें कंपनी के करोड़ों रुपए लगे थे उस प्रोजेक्ट की सफलता के बल पर ही नीलम ने उस कंपनी में 13 वर्ष गुजारे। ग्रेजुएशन सन् 1995 में उन्होंने आई.बी.एम. को जॉइन कर लिया और कंपनी के लिए पी.सी. बिजनेस की प्रमुख की हैसियत से काम करने लगीं। उन्हें जब कॉम्पेक इंडिया से अच्छा ऑफर मिला तो वह वहाँ चली गई; पर हेवलेट पैकर्ड (एच.पी.) ने जब कॉम्पेक के विलयन की बात की तो वह वक्त नीलम व उनके सहयोगियों और मातहतों के लिए किसी बुरे सपने से कम नहीं था। सभी अपने भविष्य को लेकर चितित हो गए। पर एच.पी. में भी नीलम ने अपनी काबिलियत का परिचय दे अपनी जगह बना ली।

आसान नहीं थी राह

एच.सी.एल. टेक्नोलॉजी से नीलम का आई.टी. की दुनिया में आगमन हुआ और वहाँ बिताए 14 वर्षों में उन्होंने सेल्स व मार्केटिंग की बारीकियों को सीखा और समझा। एच.सी.एल. में काम करना उनके लिए एक नई दुनिया में प्रवेश करने से कम नहीं था। उन्हें इस बात का भी एहसास हुआ कि डेस्कटॉप या अन्य हार्डवेयर बेचने में उनकी निपुणता ज्यादा बेहतर ढंग से काम कर सकती है। सन् 1995 में आई.बी.एम. में उन्होंने वाइस प्रेसीडेंट सेल्स एंड मार्केटिंग के रूप में 4 साल बिताए और फिर कॉम्पेक जॉइन कर लिया। सन् 2005 में माइक्रोसॉफ्ट के मैनेजिंग डायरेक्टर का उन्होंने कार्यभार संभाला। माइक्रोसॉफ्ट में नीलम की भूमिका मंय व्यापक परिवर्तन आया और चुनौतियाँ तो थीं हीं।

हार्डवेयर की तुलना में सॉफ्टवेयर की तकनीकी अलग तो होती ही है। वह कहती हैं, “हार्डवेयर की तुलना में सॉफ्टवेयर का भाग बहुत ज्यादा अलग है। माइक्रोसॉफ्ट में जाने के बाद मेरे सामने सबसे बड़ी चुनौती थी इस बिजनेस की बारीकियों को समझना और साथ-ही-साथ उसे सुगमता व प्रभावी ढंग से चलाते भी रहना। मेरे लिए उस समय अपनी टीम से परिचित होना, अपने ग्राहकों को जानना आवश्यक था। मुझे लगता है कि काम को सही ढंग से करने के लिए टाइम मैनेजमेंट सबसे बड़ी कुंजी है।”

उनकी योग्यताओं को उस समय आई.टी. की दुनिया के सरताज माइक्रोसॉफ्ट ने समझा और इसके साथ ही सॉफ्टवेयर की दुनिया में नीलम का पदार्पण हुआ। वह अब तक हार्डवेयर की बारीकियों में ही पारंगत थीं। मैनेजिंग डायरेक्टर के पद पर आसीन नीलम ने जब जून 2008 में माइक्रोसॉफ्ट को छोड़ एच.पी. में जाने का फैसला किया तो यह बात चर्चा का विषय बन गई।

किरण देती हैं प्रोत्साहन

किरण बेदी को अपना रोल मॉडल माननेवाली नीलम कहती हैं कि आई.टी. जैसे क्षेत्र में, जिसमें पुरुषों का पूरी तरह से वर्चस्व था, अपनी जगह बनाना आसान काम नहीं था; पर जब-जब मैं किसी दुविधा से घिरती, मुझे ख्याल आता कि कैसे किरण बेदी ने निडरता से अपने मन की बात सुन पुरुषों के सबसे दुर्लभ क्षेत्र में अपने को बेहतर साबित किया था। उनके सामने मजबूत दिल-दिमागवाला पुरुष भी आकर थर्रने लगता था।

माँ के आग्रह पर वार ऐंड पीस, गोन विद द विंड और प्राइड ऐंड प्रीज्यूडिस जैसे क्लासिक पढ़कर अपनी एक दिशा तय करते हुए बड़ी नीलम का एक शौक गरमियों की दोपहर में छत पर अपने चचेरे-ममेरे भाई-बहनों के साथ नाटक करना भी था। हालाँकि बेहतर संप्रेषण कला न होने के कारण उन्हें थिएटर में काम करने का मौका नहीं मिला और सेंट स्टीफेंस कॉलेज में पढ़ते हुए उन्हें एहसास हुआ कि अभिव्यक्ति सही ढंग से न कर पाने पर किस तरह कहाँ-कहाँ असफलताओं का सामना करना पड़ सकता है। तब नीलम ने ठान लिया कि उन्हें पब्लिक स्पीकिंग में स्वयं को तराशना ही होगा और उनकी एक टीचर ने तब इसमें उनकी मदद की। उसके बाद तो वह अपने बोलने के ढंग व शब्दों की प्रस्तुति सही ढंग से करने में जुट गई। उनकी वह कम्युनिकेशन ट्रेनिंग आनेवाले समय में उनके बहुत काम आई।

कौशिश करते रहना चाहिए

भारतीय आई.टी. की रानी नीलम मानती हैं कि एच.पी. में आने के बाद उन्हें अपनी निपुणताओं के बारे में ज्यादा बेहतर ढंग से पता लगा। उन्हें एहसास हुआ कि वह डेस्कटॉप या अन्य हार्डवेयर बेचने के बजाय सॉल्यूशंस ज्यादा कुशलता से बेच सकती हैं। वह कहती हैं कि एच.सी.एल. में सबसे महत्त्वपूर्ण चीज जो उन्होंने सीखी वह थी सही लोगों के प्रबंधन की निपुणता। ‘फॉर्च्यून’ की सन् 2009 के लिए बिजनेस में 50 सबसे ताकतवर महिलाओं की सूची में 37वें नंबर पर सूचीबद्ध नीलम की सफलता का मंत्र है, “आपकी एक महत्त्वाकांक्षा होनी चाहिए, संघटन करने की क्षमता और ताकत को सँभालने की निपुणता होनी चाहिए।” अपनी टीम पर पूरा भरोसा करनेवाली नीलम उनकी गलती पर तुरंत उसे सुधारने और उन्हें अपना आत्मविश्वास कायम रखने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए उनके साथ खड़ी हो जाती हैं।

सफलता प्राप्त करने का उनका मंत्र बहुत सरल है। वह कहती हैं कि कोई भी काम बहुत कठिन नहीं होता, हमें केवल कोशिश करनी चाहिए। और किसी भी कार्य को जब पूर्ण समर्पण के साथ किया जाता है तो सकारात्मक परिणाम स्वयं हमारे सामने आ जाते हैं। उनकी ताकत की परिभाषा क्या समय के साथ बदली है, इसके पर उनका कहना है कि ताकत की परिभाषा समय के साथ बदलती ही है। उनके ख्याल से ताकत का अर्थ होता है —सोच व नए विचारों का प्रभाव। दो दशकों से अधिक के अपने कॅरियर के समय में नीलम भारतीय आई.टी. वर्ल्ड के उच्चतम शिखर पर पहुँच चुकी हैं। हालाँकि अभी भी केवल 20 प्रतिशत महिलाएँ ही आई.टी. क्षेत्र में हैं। एच.पी. की मैनेजिंग डायरेक्टर होने के नाते उनका दायित्व है भारत में कंपनी की सेल, मार्केटिंग और बिजनेस को बढ़ाना।

परिवार है प्राथमिकता

23 वर्षों से भी ज्यादा आई.टी. इंडस्ट्री में अपना खास मुकाम बनानेवाली नीलम अपनी सफलता व उपलब्धियों का श्रेय अपने माता-पिता को देती हैं, जिन्होंने कभी भी उनमें और उनके भाई में अंतर नहीं किया था। वह कहती हैं कि अपनी सास की वजह से वह निश्चिंत होकर नौकरी कर पा रही हैं, जिन्होंने उनकी बड़ी बेटी के जन्म के बाद अपनी नौकरी छोड़ दी थी, ताकि बच्चों को सँभालने की वजह से नीलम के काम पर कोई असर न पड़े। वह अपने पति अतुल धवन को भी इसका श्रेय देती हैं, जिन्होंने हर कदम पर उनका साथ और प्रोत्साहन दिया। अगर हर सफल पुरुष के पीछे एक औरत का हाथ होता है तो इतनी सफल नीलम धवन की सफलता के पीछे किसका हाथ है? वह कहती हैं कि उनके पति अतुल धवन का, जिन्होंने उन्हें हमेशा सहयोग दिया, पर उनकी सास ने भी उन्हें भरपूर सहयोग दिया।

अपनी दोनों बेटियों पर गर्व करनेवाली नीलम की जीवन-शैली अत्यंत व्यस्त है; पर परिवार उनकी पहली प्राथमिकता है। जब भी समय मिलता है, वह पति व बेटियों के साथ घूमने निकल जाती हैं। उन्हें जगह-जगह की यात्राएँ करना बेहद पसंद है—खासतौर पर गोआ, ऑस्ट्रेलिया और यूरोप में लंदन उनका पसंदीदा पर्यटक स्थल है। वह कहती हैं कि बहुत लोग कहते हैं कि वह बहुत भीड़भाड़ वाली जगह है; पर मुझे भीड़ पसंद है। वहाँ की संस्कृति मुझे आकर्षित करती है। मुझे वहाँ जाकर बोरियत महसूस नहीं होती।

संतुलन बनाकर चलती हैं

अपने प्रोफेशनल जीवन में बुलंदियों को छूनेवाली नीलम अपने निजी जीवन में भी संतुलन बनाए रखने में निपुण हैं। वह मानती हैं कि हमें अपनी प्राथमिकताओं को जरूर रतों के हिसाब से संतुलित करना चाहिए। सहनशीलता और शांत बने रहने की उनकी प्रवृत्ति ने उन्हें कैरियर में आनेवाली स्थितियों का सामना करने की हिम्मत दी।

अपनी ड्रेसिंग के प्रति सजग नीलम ध्वन मानती हैं कि आप किस तरह के परिधान पहनती हैं और कितने सलीके से रहती हैं, इस बात से भी कॉन्फार्डेंस लेवल बढ़ता है। तनाव और भागती-दौड़ती जिंदगी के बीच भी वह पढ़ना नहीं भूलती हैं। चाहे बिजनेस की किताबें हों या मैनेजमेंट या फिर उपन्यास—तनाव-मुक्ति का बेहतर साधन होते हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें पुराने हिंदी गाने भी सुनना पसंद है। पजल और क्रॉसवर्ड सुलझाने वाली नीलम को खाने बनाने का भी बहुत शौक है, खासतौर पर जापानी फूड। रविवार को जब वह घर पर होती हैं तो एक समय खाना अवश्य बनाती हैं। नीलम मानती हैं कि इनसान को अपने पर विश्वास रखना चाहिए, खासकर महिलाओं को और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास अंत तक करना चाहिए।



नैना लाल किदवई



लीडरशिप है ताकत

सी.ई.ओ., एच.एस.बी.सी.

“जो भी काम करो उसे पूरे मनोयोग से करना चाहिए, फिर मुँहकर देखने की आवश्यकता नहीं रहती। जो अच्छा लगता है वही करो। किसी ऐसे काम को करने से जिससे बाद में पछतावा हो, कोई कायदा नहीं। हम तभी अपनी सफलता को सफलता कह सकते हैं जब हम उसमें अपना जीवन व आत्मा डाल दें।”

Yह बात तो साबित हो चुकी है कि चाहे कार्यक्षेत्र के हों या घर के, दबावों को झेलने एवं मुश्किलों में काम करने में महिलाएँ कहींज्यादा बेहतर व सक्षम होती हैं। किसी भी कठिन परिस्थिति से कैसे बाहर आना है, यह बात भारतीय महिलाओं को शायद बचपन से ही सिखानी आरंभ कर दी जाती है और यही वजह है कि जब वे उसे पार कर निकलती हैं तो एक बेहतरीन लीडर बन सबके सामने आती हैं। इसमें कोई संशय नहीं रहा कि दुनिया अब

भारतीय महिलाओं की ताकत व काबिलियत का लोहा मान रही है और खासकर वर्तीय जगत् में। इसमें महिलाओं का प्रवेश निरंतर बढ़ता जा रहा है और वे कामयाबी के परचम भी लहरा रही हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था में उछाल आने, निजी क्षेत्रों की बढ़ती भूमिका और बहुराष्ट्रीय कंपनियों की बढ़ती संख्या के कारण महिला प्रबंधकों व उद्यमियों की संख्या में भी काफी बढ़ोतरी हुई है। एच.एस.बी.सी. की सी.ई.ओ. नैना लाल किदवर्ड पहली एकमात्र भारतीय महिला हैं, जिन्होंने प्रतिष्ठित हार्वर्ड बिजनेस स्कूल से ग्रेजुएशन किया। वह दस शीर्ष बिजनेस वूमैन में से एक हैं और भारत में किसी विदेशी बैंक के ऑपरेशंस का संचालन करनेवाली पहली महिला हैं। उनके असाधारण कार्यों के लिए उन्हें वर्ष 2007 में ‘पद्मश्री’ से सम्मानित किया गया। ‘फॉच्यून’ मैगजीन ने सन् 2000 से लेकर 2003 तक में दुनिया की 50 शीर्ष कॉरपोरेट महिलाओं में सूचीबद्ध किया।

हमेशा प्रथम रहने की चाह

बेस्ट प्रोफेशनल विजेता की तरह सम्मानित 16 अप्रैल, 1957 को जन्मींनैना लाल ने सन् 1977 में दिल्ली के लेडी श्रीराम कॉलेज से इकोनॉमिक्स ऑनर्स से स्नातक की डिग्री हासिल करने के बाद इंस्टिट्यूट ऑफ चार्टर्ड एकाउंटेंट्स से चार्टर्ड एकाउंटेट (1977-80) की पढ़ाई की और फिर हार्वर्ड ग्रेजुएट स्कूल ऑफ बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन से सन् 1992 में बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन में मास्टर्स किया। भारत के सबसे प्रभावी इन्वेस्टमेंट बैंकर बनने के रूप में अपना कैरियर बनाने के लिए उन्हें बचपन से ही सही आधार मिला। मुंबई और दिल्ली में पली-बढ़ी नैना की स्कूली शिक्षा शिमला में हुई। वह हर क्लास में टॉप करतीं और उनकी योग्यता से प्रभावित होकर उन्हें स्कूल कैप्टन बना दिया गया। अच्छी लड़कियाँ हमेशा प्रथम आती हैं, घुट्टी की तरह बचपन से ही इस बात को पीने के कारण उन्हें कभी दूसरे स्थान पर आना पसंद नहीं था। हमेशा आगे रहने और नेतृत्व करने की चाह ने उनके अंदर बचपन में ही लीडरशिप के बीज अंकुरित कर दिए थे, जो आगे चलकर किस तरह से पल्लवित हुए, यह बात सबके सामने है। दिल्ली यूनिवर्सिटी से जब वह बी.ए. कर रही थींतो उन्हें स्टूडेंट यूनियन की प्रेसीडेंट चुना गया। उन्होंने यूनिवर्सिटी से लीडरशिप अवार्ड भी जीता।

मिले सही संस्कार और मूल्य

उनके पिता सुरेंद्र लाल एक इंश्योरेंस कंपनी में एजीक्यूटिव थे। वे अपनी दोनों बेटियों—नैना व नोनिता के साथ डिनर टेबल पर लंबी-लंबी चर्चाएँ किया करते थे। जीतने की महत्ता और अपनी गलतियों से सीखने के पाठ वह पढ़ाया करते। जब भी वह अपने पिता के

ऑफिस जातीं तो उनके मन में भी ख्याल आता कि उनका भी पिता की तरह एक बड़ा सा ऑफिस होगा और वह बॉस बनेंगी। पिता की सीखों का यह नतीजा हुआ कि नैना बचपन में जीवन की दो सच्चाइयों—सफलता और हार के प्रति सहनशील होना सीख गई थीं। उनके पिता गोल्फ खिलाड़ी थे और उनका यह शौक उनकी बहन ने भी अपनाया। उनकी बहन नैनिता लाल कुरैशी सन् 1989 की ‘अर्जुन अवार्ड’ विजेता हैं। वह कहती हैं, “मुझे लगता है कि बचपन में जो प्रभाव हमारे जीवन पर पड़ता है, वह आगे चलकर बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है और जो हम अपने को बनाना चाहते हैं, उसमें मदद करता है। मेरी माँ एक स्मार्ट होममेकर और धार्मिक प्रवृत्ति की थीं और घर का काम करने के बाद जो समय मिलता था, वह दूसरों की मदद व सामाजिक कार्यों में बिताती थीं। उनके वे गुण मुझमें और मेरी बहन में भी आए। अपने पिता की वित्तीय कुशाग्रता ने, जो मैंने विरासत में पाई है, उसने मुझे इस मुकाम पर पहुँचाने में मदद की है।”

दिया कुशाग्रता का परिचय

कलकत्ता में जनमीनैना की परवरिश और पढ़ाई मुंबई, शिमला व दिल्ली में हुई। शिमला के लोरेटो कॉन्वेंट स्कूल से विज्ञान व गणित में विशेष योग्यता के साथ उन्होंने सेकेंड्री स्कूल की हर परीक्षा टॉपर की तरह उत्तीर्ण की। वाद-विवाद व खेलकूद में भी अपने स्कूल का प्रतिनिधित्व किया। वहाँ वह हेड गर्ल भी बनीं और जब सन् 1974 में नैना लाल ने इकोनॉमिक्स में लेडी श्रीराम कॉलेज से ग्रेजुएशन करने के लिए उन्होंने दाखिला लिया तो वहाँ भी इंटर कॉलेज कल्चरल शो में अपनी लीडरशिप गुणों का परिचय दिया जिसका संचालन उन्होंने कॉलेज की सेक्रेट्री होने के नाते किया था। बाद में वह कॉलेज स्टूडेंट यूनियन की प्रेसीडेंट बना दी गई।

ग्रेजुएशन करने के बाद 19 वर्ष की उम्र में नैना ने बिजनेस मैनेजमेंट की डिग्री हासिल करने के लिए जब विदेश जाने की इच्छा जाहिर की तो इस बात को लेकर उनकी माँ पहले तो राजी नहीं हुई, पर पिता ने उन्हें समर्थन दिया और माँ से यह वादा कर कि वह अपने संस्कारों को कभी नहीं भूलेंगी, उन्हें मना लिया। पिता ने कहा कि अगर उन्हें टॉप पाँच बिजनेस स्कूलों में से किसी एक में दाखिला मिल गया तो वह उन्हें एम.बी.ए. करने की अनुमति दे देंगे। पर तब उन्हें निराशा का सामना करना पड़ा जब उन्हें कहा गया कि मैनेजमेंट प्रोग्राम में दाखिला लेने के लिए उनकी उम्र कम है। तब उन्होंने चार्टर्ड एकाउंटेंसी में प्रवेश लेने का निर्णय किया। साथ ही ट्रेनी की हैसियत से प्राइस वाटरहाउस को जॉइन किया। वह उन पहली तीन महिलाओं में से एक थीं जिन्होंने सन् 1977 में प्राइस वाटरहाउस को जॉइन किया था। प्राइस वाटरहाउस में इंटरव्यू के दौरान जब उनसे कहा गया कि उन्होंने कभी किसी महिला को नियुक्त नहीं किया है तो नैना का जवाब था कि यह

आपकी समस्या है, मेरी नहीं। नैना लाल ने बहुत जल्दी ही कंपनी के क्लाइंट्स के एकाउंट्स व फाइनेंस रिकॉर्ड्स का स्वतंत्र ऑडिट कर अपने प्रति सारे संशयों को ध्वस्त कर अपनी कार्यकुशलता व कुशाग्रता का परिचय दिया। तीन साल तक नैना लाल ने प्राइस वाटरहाउस में न सिर्फ एकाउंट्स की बारीकियाँ सीखीं, वरन् संबंधित नीतियों व कानूनों का भी अध्ययन किया।

रखा एक अलग दुनिया में कदम

23 वर्ष की उम्र में पहली भारतीय महिला के रूप में उन्होंने अमेरिका के हार्वर्ड बिजनेस स्कूल में कदम रखा। वह कहती हैं, “इससे पहले मैं कभी अमेरिका नहीं गई थी और इसलिए यहाँ के तौर-तरीकों से पूर्णतया अपरिचित थी। मैंने धीरे-धीरे ए.टी.एम. का प्रयोग करना और सुपर मार्केट में खरीदारी करना सीखा। रैक पर रखे अनगिनत ब्रांडों में से किसी एक को चुनना मेरे लिए सहज बात नहीं थी। उस समय हार्वर्ड जो स्टडी ग्रुप बनाता है, वह मेरे लिए मददगार साबित हुआ। उसने मुझे सिखाया कि कैसे सबसे अच्छे और सबसे सस्ते को चुना जाए।” नैना वहाँ क्लास में सबसे छोटी उम्र की छात्रा भी थीं। लेकिन वहाँ के छात्रों ने नैना की भरपूर मदद की और फिर उन्होंने एक अलग ही दुनिया में कदम रखा। उन्हें बहुत अच्छे टीचर तो मिले ही, साथ ही कंपिटीटिव स्ट्रेटिजी के गुरु मिशेल पोर्टर के अंतर्गत काम करने का अवसर भी मिला। वहाँ रहकर उन्होंने सीखा कि कैसे दिए गए ऑकड़ों से सूचना निकाली जाती है और किस तरह से उसे प्रभावी ढंग से विश्लेषित और दूसरों तक भेजा जा सकता है। हार्वर्ड में मिले प्रशिक्षण ने नैना को जिंदगी के उन पाठों से अवगत कराया, जो प्रोफेशनल लाइफ को बेहतरीन बनाने के काम आते हैं।

जब कैंपस नियुक्ति का समय आया तो नैना को लगा कि उन्हें वहाँ रहकर अपने कैरियर को पंख देने चाहिए। उनका मैनहाटन और न्यूयॉर्क की कंपनियों के लिए इंटरव्यू लिया गया। लेकिन नैना, जो अपने परिवार के साथ रहने को अब तक व्याकुल हो उठी थीं, उन्होंने भारत वापस लौटने का निश्चय किया। सिटी बैंक ने जब उनका इंटरव्यू लिया तो उन्होंने भारत में काम करने की इच्छा जाहिर की। वह नौकरी उन्हें मिल गई, पर लौटते हुए लंदन में वह गिर्डलेज बैंक के लिए इंटरव्यू देने के लिए रुकीं और वह नौकरी भी उन्हें मिल गई। तब नैना ने भारत वापस आकर गिर्डलेज बैंक से अपना कैरियर आरंभ करने का निर्णय किया।

बढ़ती गई तेज कदमों से

सन् 1977 में जब उन्होंने अपना कैरियर आरंभ किया तो उन्होंने सबसे पहली नौकरी एक एसोसिएट की तरह प्राइस वाटरहाउस में की। फिर सन् 1982 में वह ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक (जो अब स्टैंडर्ड चार्टर्ड है) के साथ जुड़ गई। एक प्रोफेशनल की तरह उन्हें पहला पाठ अपने पिता से ही मिला था, जो एक अग्रणी इंश्योरेंस कंपनी के सी.ई.ओ. थे। तीन वर्षों के अंदर ही वह इन्वेस्टमेंट बैंकिंग के लिए ग्रिंडलेज के वेस्टर्न रीजनल ऑपरेशंस को हेड करने लगी। सन् 1989 में उन्हें पूरे डिवीजन का हेड बना दिया गया। वह कहती हैं, “वह उस संगठन में किसी आश्वर्यजनक घटना से कम नहीं था, जहाँ किसी भी सीनियर पद पर कोई महिला आसीन नहीं थी और न ही इतनी कम उम्र में कोई सीनियर पद पर पहुँचने वाला था। मेरे सीनियर सारे पके बालों वाले थे, जिनके पास 15 साल या अधिक का अनुभव था। इसलिए, मुझे महिला होने की वजह से नहीं वरन् उम्र की वजह से हमेशा सतर्क रहना पड़ता था। भाग्यवश, उस समय संगठन विकासोन्मुख था और वह समय काम करने के लिए सबसे उपयुक्त था।”

सन् 1994 में अमेरिकन इन्वेस्टमेंट बैंकिंग कंपनी मोर्गन स्टेनली जॉइन करने से पहले ए.एन.जे. में उन्होंने मर्चेट, रिटेल और इन्वेस्टमेंट बैंकिंग से संबंधित अनगिनत असाइनमेंट्स पूरे किए। यहाँ तक कि हार्वर्ड में भी नैना इस बात को लेकर बिलकुल दृढ़ थींकि उन्हें भारत में ही काम करना है। सिर्फ इसलिए नहीं कि वहाँ उनका घर था, बल्कि वह मानती थींकि इन्वेस्टमेंट बैंकिंग और निजीकरण में काम के द्वारा भारत की प्रगति में योगदान दे सकती हैं। मोर्गन स्टेनली में उन्होंने विप्रो को एन.वाई.एल.ई. में सूचीबद्ध करने और टाटा व बिड़ला ग्रुप के टेलीकॉम बिजनेस को आइडिया सेल्यूलर में समन्वित करने में अग्रणी भूमिका निभाई।

आई सुर्खियों में

सन् 1994 में नैना लाल किंदवर्ड तब पहली बार सुर्खियों में आई, जब उन्होंने ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक से त्यागपत्र देकर मोर्गन स्टेनली को जॉइन किया और वह भारत में सबसे अधिक वेतन पानेवाली महिला एजीक्यूटिव के रूप में मीडिया में चर्चित हो गई। उदारीकरण के बाद मोर्गन स्टेनली भारत में इन्वेस्टमेंट बैंकिंग आरंभ करना चाहता था और इसके लिए उन्होंने जब नैना से संपर्क किया तो महत्वाकांक्षी और कुछ नया और चुनौतीपूर्ण करने की इच्छा से वशीभूत नैना तुरंत ग्लोबल फाइनेंशियल इंस्टिट्यूट से बतौर वाइस चेयरमैन जुड़ गई और इस तरह उनकी इन्वेस्टमेंट बैंकिंग में भी वापसी हुई तथा भारत में भी। हालाँकि नैना लाल, जो 13 वर्षों से ग्रिंडलेज से जुड़ी थीं, के लिए उससे अलग होने का फैसला करना आसान नहीं था। वह कहती हैं, “इस संगठन से खुद को अलग करना मेरे लिए बहुत कठिन था; लेकिन जो बात मेरे दिमाग में हमेशा रहती थी, वह

थी कि यहाँ विदेशियों व भारतीयों के वेतन में बहुत असमानता थी। मैं उच्च शिक्षित थी और कार्य-कुशलता में भी किसी से कम नहीं थी, पर मेरे सहयोगी विदेशियों और मेरे वेतन में बहुत अंतर था। मोर्गन स्टेनली से जुड़ने का एकमात्र कारण यही था कि मैंने प्रस्ताव रखा था कि मुझे भी विदेशी कर्मचारियों के समकक्ष वेतन मिलेगा, जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया था। यह एक सिद्धांत की बात है और मुझे लगता है कि इनसान को अपने सिद्धांतों पर अडिग रहना चाहिए।”

काम को लिया चुनौती की तरह

मोर्गन स्टेनली में हालाँकि उन्हें हर चीज को एक नए सिरे से आरंभ करना था और छोटे से कारोबार को एक नई दिशा देनी थी, इसलिए नैना ने इसे चुनौती के रूप में लिया और अपने नेतृत्व करने के गुण का इस्तेमाल करते हुए जी-जान से कंपनी को अग्रणी बनाने में जुट गई। सबसे पहले उन्होंने निवेश कंपनी के साथ जे.एम. फाइनेशियल ग्रुप के साथ गठबंधन किया। परिणामतः उनकी हर बिजनेस डील उद्योग जगत् में चर्चा और सराहना का विषय बनने लगी। निवेश, विनिवेश, विलयन, अधिग्रहण और रणनीतिक गठबंधन की नैना किंदवर्ड ने उस समय इतनी डील करवाई कि देखते-देखते जे.एम. मार्गन स्टेनली देश की सबसे बड़ी मर्चेंट बैंकर बन गई। पर नैना ने तो जैसे ठान लिया था कि वह निरंतर मंजिलें तय करती रहेंगी और एक और राह पर कदम रखने तथा उसे भी एक नई दिशा देने की चुनौती के साथ नैना ने सन् 2002 में मोर्गन स्टेनली के बेहतरीन वेतन पाने की नौकरी छोड़ एच.एस.बी.सी. को (हांगकांग एंड शंघाई बैंकिंग कॉरपोरेशन) जॉइन कर लिया।

एच.एस.बी.सी. के सिक्योरिटीज और कैपिटल मार्केट डिवीजन जो इन्वेस्टमेंट बैंकिंग, इक्विटी और कैपिटल मार्केट व ब्रोकिंग में डील करता था, के प्रमुख के रूप में काम करने का अवसर उन्हें इसलिए भी लुभाया, क्योंकि तब तक इस तरह के बिजनेस को सँभालने में नैना खुद को बहुत सहज महसूस करने लगी थीं। वह कहती हैं, “मेरी कमजोरी है लीडरशिप और मैं उस समय जिस मुकाम पर थी, वहाँ मेरे लिए पैसे से ज्यादा पद की ज्यादा महत्ता थी। इसलिए मैंने जॉइन करने के बाद साफ शब्दों में पूछा था कि क्या बैंक की सी.ई.ओ. बनने की मेरी कोई संभावना है। पर बैंक के 150 वर्ष के इतिहास में एच.एस.बी.सी. में कोई भी भारतीय प्रमुख नहीं था और दुनिया में किसी भी देश में किसी महिला ने बैंक के किसी शीर्ष स्थान पर काम तक नहीं किया था। लेकिन फिर भी मैं एक कोशिश करना चाहती थी।”

एच.एस.बी.सी. में जिस डील को लेकर नैना को सबसे ज्यादा गर्व है वह है मारुती आई.पी.ओ. की, जिसमें उन्हें लगातार बैंक की इक्विटी बैंकिंग और कॉरपोरेट फाइनेंस शाखाओं के साथ काम करना पड़ा था। हमेशा एक टीम प्लेयर के रूप में जानी जानेवाली

नैना का मानना है कि इन्वेस्टमेंट बैंकिंग का अर्थ है विभिन्न आयामों व निपुणताओंवाले लोगों को एकत्रित करना। इस समय वह एच.एस.बी.सी. के दो नए प्रोजेक्ट—इंश्योरेंस जॉइंट वेंचर और आई.एल.एंड. एफ.एस. इन्वेस्टमेंट ब्रोकरेज के अधिग्रहण को विकसित करने में जुटी हुई हैं। एच.एस.बी.सी. अब हर तरह से फाइनेशियल सर्विसेज प्रदान करता है। उनके अंतर्गत इस समय 35,000 लोग काम कर रहे हैं। वह कहती हैं कि इस समय उस 35,000 की ताकत को सँभालना और उनसे बेहतर काम लेना ही सबसे बड़ी चुनौती है।

गढ़े सफलता के नए आयाम

यह उनका अटल विश्वास, दृढ़ता या भाग्य का प्रतिफल था कि उनके जॉइन करने के बाद समय की लहर ने अपना रुख बदलना शुरू कर दिया और महिलाओं को उच्च पदों पर आसीन करने की परंपरा का शुभारंभ हो गया। एच.एस.बी.सी. सिक्योरिटीज और कैपिटल मार्केट्स की वाइस प्रेसीडेंट एवं मैनेजिंग डायरेक्टर बनने के बाद उन्हें एच.एस.बी.सी. में डिप्टी सी.ई.ओ. बनने का अवसर मिला और फिर मार्च 2006 में वह भारत में उसके अनगिनत ऑपरेशंस के साथ एच.एस.बी.सी. की कंट्री हेड और एच.एस.बी.सी. (इंडिया) की सी.ई.ओ. बन गई; उसी वर्ष अक्टूबर 2006 में वह ग्रुप जनरल मैनेजर बन गई। विश्वव्यापक रूप से बैंक में 40 शीर्ष व्यक्तियों में से एक, लीडरशिप को अपनी ताकत माननेवाली नैना ने मर्चेंट बैंकर के रूप में अपने इतने लंबे कैरियर में भारतीय उद्योग को न सिर्फ ऊँचाइयों पर पहुँचाया, वरन् उसके लिए अरबों रुपए भी एकत्र कर कर्ड भारतीय कंपनियों को विश्वस्तरीय बनाने में मदद की, उनकी इस सफलता और कार्य-कुशलता को उन्हें मिले अनगिनत सम्मानों से भी आँका जा सकता है। फॉर्च्यून मैगजीन की सन् 2000, 2002, 2003 और 2006 की 50 कॉरपोरेट वूमन सूची में एशिया की सर्वाधिक प्रभावशाली महिलाओं में तीसरे स्थान उन्हें सूचीबद्ध किया गया। सन् 2002 में ‘टाइम’ मैगजीन ने उन्हें दुनिया की 15 प्रभावशाली हस्तियों में शामिल किया। ‘वॉल स्ट्रीट जर्नल’ ने सन् 2004 में दुनिया की 50 सर्वोच्च बिजनेस वूमैन सूची में उन्हें 34वें स्थान पर सूचीबद्ध किया और 2006 में प्रकाशित रिपोर्ट 50 वूमैन टू वाच में शामिल किया। ‘बिजनेस टुडे’ की 25 ताकतवर भारतीय महिला उद्यमी की तरह तीन बार सूचीबद्ध। सन् 2007 में भारत सरकार ने उन्हें ‘पद्मश्री’ से सम्मानित किया।

काम का जुनून

हार्वर्ड बिजनेस स्कूल से ग्रेजुएट करनेवाली पहली भारतीय महिला होने के साथ-साथ नैना लाल मल्टीनेशनल नेस्ले के बोर्ड में बैठनेवाली पहली भारतीय महिला भी हैं। अपने लक्ष्यों को निर्धारित करते रहने की सलाह देने और उस पर अंडिग रहनेवाली नैना लाल कॉरपोरेट वर्ल्ड की एक प्रतिष्ठित हस्ती होने के साथ-साथ भारत में विदेशी बैंक के कार्यों का मार्गदर्शन करनेवाली पहली महिला भी हैं।

नैना लाल किंदवर्ड के लिए काम किसी जुनून से कम नहीं है। यही वजह है कि 16 घंटे काम करने के बावजूद न तो वह थकावट महसूस करती हैं, न झँझलाती हैं। काम के प्रति उनके कमिटमेंट का इस बात से भी अंदाजा लगाया जा सकता है कि जब वह 8 माह की गर्भवती थीं तब भी भाग-दौड़ कर रही थीं और जिस दिन राजीव गांधी की हत्या हुई थी, तमाम अवरोधों के बावजूद वह प्लेन पकड़ने के लिए एयरपोर्ट पहुँच गई थीं; क्योंकि दुबई में 45 मैनेजर एक ट्रेनिंग प्रोग्राम के लिए उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे और नैना चूँकि उस प्रोग्राम की लीडर थीं, उनका वहाँ पहुँचना आवश्यक था।

भारतीय शास्त्रीय व पश्चिमी शास्त्रीय संगीत दोनों की ही दीवानी नैना अपने काम में इतनी तल्लीन रहती थीं कि 33 वर्ष की हो जाने पर भी उनके मन में विवाह करने का ख्याल नहीं आया। फिर उनकी मुलाकात रशीद किंदवर्ड से हुई, जिनसे मिलने के बाद उन्हें लगा कि आदर्श लाइफ-पार्टनर के रूप में उनसे बेहतर कोई हो ही नहीं सकता है। वह कहती हैं, “मुझे महसूस हुआ कि रशीद मैं जैसी हूँ, उसी तरह मुझे अपनाने को तैयार हूँ और वह समझते हैं कि काम मेरे लिए क्या अहमियत रखता है। मेरा यह सोचना सही साबित भी हुआ। रशीद ने कदम-कदम पर मुझे प्रोत्साहित किया है। 30 सालों तक खुद कॉरपोरेट की दुनिया में काम करने के कारण वह बिजनेस की भाषा को बखूबी समझते हैं। इसलिए काम के मेरे अनियमित घंटों को लेकर उन्होंने कभी विपरीत प्रतिक्रिया नहीं दिखाई।”

लेकिन एक मुसलमान व्यक्ति से शादी करने के लिए अपने माता-पिता को समझाना उनके लिए बेहद आसान भी नहीं था। खुले विचारों के होने के बावजूद उनके माता-पिता को इस रिश्ते को स्वीकारने में कुछ समय लगा, क्योंकि हिंदू परिवार की लड़की का मुसलमान से शादी करना समाज व धर्म दोनों की ही नजर में सही नहीं था। हालाँकि रशीद के घरवालों ने बिना किसी विरोध के नैना को अपना लिया। वह कहती हैं, “मेरे पिता का परिवार उत्तर प्रदेश (मसूरी) से था और मेरी माँ का पंजाब (लुधियाना) से। हिंदू के घर जनमी और सिक्खों के खून की धारा भी मेरे अंदर प्रवाहित होती है। मैं ईसाई बोर्डिंग स्कूल में पढ़ी और शादी मुसलमान से हुई। मैं स्वयं को उस भारत का समन्वय मानती हूँ, जिसमें अलग-अलग प्रांत के लोग एक सूत्र में बँधकर रहते हैं। यह समय जाति, रंग या किसी धर्म का भेद करने का नहीं है। मुझे गर्व है कि मैं एक भारतीय हूँ।”

दो बच्चों की माँ नैना घर और कार्यक्षेत्र के बीच संतुलन कायम करना बखूबी जानती हैं। वह कहती हैं कि अगर आपके बच्चे को स्कूल में कोई परेशानी आ जाती है तो आपको वहाँ जाना ही होगा। इसलिए जो उस पल के लिए सही हो, वह करने से हमारी जिंदगी हमारे नियंत्रण में रहती है। “जब मेरे बच्चों—बेटी केमाया और बेटे रु मान—को मेरी आवश्यकता हो तब मेरी उपस्थिति मायने रखती है। कॅरियर के लिए कोई परिवार को नहीं छोड़ता है। वह केवल अपनी पसंद व दिलचस्पियों के साथ समझौता और उनका त्याग करता है, जिन्हें पूरा करने के लिए उसे समय नहीं मिल पाता।”

मनोयोग से करो काम

खाली समय में अपने परिवार के साथ वाइल्ड लाइफ के टूर पर निकल जाने वाली और वाइल्ड लाइफ फोटोग्राफी का शौक रखनेवाली नैना यह बात स्वीकार करती हैं कि इन्वेस्टमेंट बैंकिंग को आज तक पुरुषों का क्षेत्र माना जाता है; लेकिन अपने ईर्द-गिर्द पुरुषों को देख वह कभी न तो हतोत्साहित हुई, न ही उनका आत्मविश्वास डिगा। फिर भी वह इस बात को लेकर सजग हैं कि पुरुषों की दुनिया में किसी महिला का आधिपत्य होना इतनी भी बुरी बात नहीं है। हालाँकि इसके लिए उन्हें अधिक मेहनत से काम करने और सबसे आगे निकल जाने का प्रयास निरंतर करना पड़ा। पर आज स्थिति अलग हो चुकी है, शायद अब उनके पुरुष सहयोगियों को अधिक मेहनत कर उन्हें पछाड़ने का प्रयास निरंतर करते रहना होगा? लेकिन अगर उनसे यह पूछा जाए कि क्या वह पुरुषों की बजाय महिला उम्मीदवार की नियुक्ति को प्राथमिकता देंगी, तो उनका जवाब होता है कि अगर वह उससे ज्यादा योग्य हुई तो वह मानती हैं कि अहमियत किसी का पुरुष या महिला होना नहीं लगता है, बल्कि उसकी प्रोफेशनल कामयाबी पर केंद्रित कर फैसले लेने चाहिए। वह मानती हैं कि जो भी काम करो उसे पूरे मनोयोग से करना चाहिए, फिर मुड़कर देखने की आवश्यकता नहीं रहती। जो अच्छा लगता है, वही करो। किसी ऐसे काम को करने से, जिससे बाद में पछतावा हो, कोई फायदा नहीं। हम तभी अपनी सफलता को सफलता कह सकते हैं, जब हम उसमें अपना जीवन व आत्मा डाल दें।

प्रकृति-प्रेमी

प्रकृति-प्रेमी और ट्रैकिंग पर हिमालय जाने को हमेशा तत्पर रहनेवाली नैना के लिए हमेशा फर्स्ट रहना कोई संयोग नहीं है, बल्कि नियति का ही करिश्मा है। नैना लाल किदवई की रोल मॉडल ग्रामीण गुजरात की महिलाएँ, जो अपने हक के लिए खड़ी होने लगी हैं, से लेकर मुंबई की चाय की दुकान की वे महिलाएँ तक हैं जिन्होंने मुंबई में आई बाढ़ के दौरान

मुफ्त बिस्कुट बाँटे थे। वे सब उन्हें प्रभावित व प्रेरित करती हैं। चॉकलेट खाने की शौकीन नैना को मैनेजमेंट संबंधी किताबें, बिजनेस मैगजीन और हार्वर्ड बिजनेस रिव्यू पढ़ना पसंद है। बिजनेस के गहन उतार-चढ़ावों में डूबी रहनेवाली नैना लाल किदवई कविताएँ पढ़ने का भी शौक रखती हैं। केवल बिजनेस की गहन नीतियों में ही नहीं, नैना की दिलचस्पी अन्य गतिविधियों में भी है। अनेक गैर-सरकारी संगठनों को स्ट्रेटिजी, फाइनेंस और मार्केटिंग पर सलाह देने के अतिरिक्त वह ‘सेवा’ जैसी संस्थाओं को भी अपना वक्त देती हैं। वह आई.सी.टी. नामक एन.जी.ओ. से भी जुड़ी हैं, जो ग्रामीण जनता को तकनीकी सहायता प्रदान करता है। रिटायरमेंट के बाद वह समाज-सेवा से ही जुड़ने का इरादा रखती हैं, ताकि ग्रामीण स्त्रियों के जीवन को सुधारने की ओर काम कर सकें।



पिया सिंह



रियल एस्टेट का बदला रूप

चेयरपर्सन, डी.एल.एफ. रिटेल डेवलपर्स लिमिटेड

“एक बड़े ऊरोगपति की बेटी होने का फायदा छू कहम पर मिलता है; पर सफलता केवल कड़ी मेहनत करने से ही मिलती है। बिना अपनी स्वतंत्र सौच करवे आगे बढ़ना नामुमकिन है।”

भारतीय अरबपति और डी.एल.एफ. ग्रुप के चेयरमैन के.पी. सिंह की बेटी पिया सिंह ‘फोबर्स’ की सूची में विश्व की अमीर महिलाओं में से एक हैं। डी.एल.एफ. ग्रुप के वाइस चेयरमैन राजीव सिंह की बहन पिया ग्रुप के एंटरटेनमेंट बिजनेस, डी.टी. सिनेमा और रिटेल बिजनेस डी.एल.एफ. रिटेल डेवलपर्स लिमिटेड को सँभालती हैं।

देश की विशालतम रियल एस्टेट कंपनियों में से एक डी.एल.एफ. की 41 वर्षीया चेयरपर्सन पिया सिंह की मेहनत और दूरदर्शिता की वजह से कंपनी आज पूरे देश में आधुनिकतम

जीवन-शैली का पर्याय बन चुकी है। आलीशान शॉपिंग मॉल्स, आधुनिक एवं नवीनतम तकनीकों व सुविधाओं से युक्त घर तथा व्यावसायिक स्थल, गुच्छी, बुलवगरी और लुई विटन जैसे अंतरराष्ट्रीय ब्रांड्स को एक ही छत के नीचे लाने जैसे ऐसे कुछ काम हैं, जो पिया सिंह ने किए हैं। डी.एल.एफ., डी.एल.एफ. प्लेस, एंपोरिया और सिटी सेंटर के नाम से उत्तर भारत में उच्च स्तरीय मार्केट मॉल्स चलाता है।

रिटेल इंडस्ट्री को समझा

रिटेल के क्षेत्र में भारत में आनेवाले समय में काफी बढ़ोतरी होगी, यह बात शायद पिया ने समझ ली है। तभी उन्होंने अपना सारा ध्यान रिटेल पर केंद्रित कर लिया है और देश भर में रिटेल की उपस्थिति दर्ज कराने के लिए डी.एल.एफ. की यात्रा का आरंभ कर दिया है। कई आउटलेट्स इस समय संचालन, निष्पादन और विकास के विभिन्न चरणों में हैं।

डी.एल.एफ. अपनी जमीनों पर नियमित रूप से प्रदर्शनियाँ लगाता है और फैशन वीक जैसे महत्वपूर्ण आयोजन करता है। प्रचार और दिखावे से दूर रहनेवाली पिया, जिन्होंने न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी से छह हफ्ते का फिल्म बनाने का अध्ययन किया है, मीडिया से दूर रहने एवं प्रचार में पीछे रहनेवाली, कंपनी को हमेशा आगे रखने में अग्रसर रहती हैं। उनका मुख्य लक्ष्य है देश भर में डी.एल.एफ. रिटेल की उपस्थिति को सुदृढ़ करना। यह पद बेशक उन्हें विरासत में मिला है, पर अपनी कड़ी मेहनत व दृढ़ता से उन्होंने साबित कर दिया है कि वह वास्तव में इस पद के लायक हैं।

डी.एल.एफ. का हर मॉल यह ध्यान में रखकर बनाया गया है कि स्थानीय लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके। कोई भी मॉल खोलने से पहले पिया विस्तृत रिसर्च करती हैं और लोगों के रहन-सहन व पसंद के बारे में सर्वेक्षण करती हैं। और यही वजह है कि डी.एल.एफ. के मॉल्स की सफलता से आनेवाले वर्षों में 60 जगहों पर लगभग 100 मॉल बनाने की उनकी योजना है। और इसकी आवश्यकता इसलिए महसूस की गई है, क्योंकि रिटेल इंडस्ट्री में लगातार बढ़ोतरी हो रही है।

फिल्मों के प्रति लगाव

व्हार्टन स्कूल, यूनिवर्सिटी ऑफ पेंसिल्वेनिया से ग्रेजुएशन करनेवाली पिया ने अपना ग्रुप जॉइन करने से पहले जी.ई. कैपिटल के रिस्क अंडरराइटिंग विभाग में कार्य किया, डी.एल.एफ. गोल्फ व कंट्री क्लब का निर्माण करवाया और डिजिटल टॉकीज (डी.टी. सिनेमा) चलाए। जी.ई. कैपिटल में काम करना उनके लिए एक बेहतरीन अनुभव साबित हुआ। उसके बाद डी.टी. सिनेमा से जुड़ना भी किसी दिलचस्प घटना से कम नहीं है।

अलग-अलग क्षेत्रों से जुड़े तीन लोग जब उनके साथ जुड़े—उद्योगपति हरि भरतिया, सुहेल सेठ और निर्देशक शेखर कपूर—तब बेहतरीन मनोरंजन उपलब्ध कराने के लिए पिया के दिमाग में एक लक्ष्य था—डिजिटल फिल्म निर्माण के उपकरणों का प्रयोग करते हुए उच्च स्तरीय मनोरंजन प्रस्तुतियाँ तैयार करना और उनके अंदर इस विचार के पनपने के ठीक एक साल बाद डी.टी. दिल्ली में चलने लगा। उसके बाद गुड़गाँव में डी.एल.एफ. सिटी सेंटर में पहला मल्टीप्लेक्स खुला। मल्टीप्लेक्स खोलने और फिल्मों की दुनिया के प्रति लगाव पिया का तब से है जब से उन्होंने न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी से फिल्म बनाने का कोर्स किया था।

सन् 2009 में डी.एल.एफ. ने अपने सिनेमा बिजनेस डी.टी. सिनेमा को थिएटर ऑपरेटर पी.वी.आर. को 22 करोड़ नकद और पी.वी.आर. के 2.56 करोड़ इक्विटी शेयर में बेच दिया। पिया सिंह कहती हैं, “पी.वी.आर. के साथ भागीदारी करने से यह हमें रिटेल एस्टेट के अपने मुख्य बिजनेस पर पूरी तरह से ध्यान केंद्रित करने का अवसर देगा और साथ-साथ ही हमें यह भी तसल्ली रहेगी कि अपने ग्राहकों को हम उच्च स्तरीय मनोरंजन डी.एल.एफ. के मानकों के अनुसार उपलब्ध कराने में भी सफल हो पाएँगे।”

लाई मल्टीप्लेक्स की अवधारणा

बदलती जीवन-शैली और स्तरीय मनोरंजन की माँग इस समूह के लिए फायदेमंद साबित हो रही है। और पिया से यह बात छिपी नहीं है कि आज का ग्राहक बेहतर सुविधाएँ पाने के लिए पैसा खर्चने को तैयार है। इसीलिए वह मनोरंजन और रिटेल से जुड़े हर क्षेत्र पर नजर रखे हुए हैं। जैसे कि डी.टी. सिनेमा के मल्टीप्लेक्स में मनोरंजन के साथ खाने को जोड़ा गया, ताकि फिल्म देखने आनेवाले लोगों को किसी तरह की परेशानी न हो और फूड कोर्ट की अवधारणा को लोगों ने बहुत पसंद किया, क्योंकि एक ही जगह अलग-अलग तरह का खाना मिल रहा था। उसके बाद डी.टी. डाइनर्स ने इन फूड कोर्ट्स के चलन में इजाफा किया, जहाँ अंतरराष्ट्रीय स्तर का भोजन परोसा जाता है।

इसके अतिरिक्त इन मल्टीप्लेक्स में बुक शॉप, कुकी वैकेंडी काउंटर, फूलों की दुकान और म्यूजिक शॉप भी हैं। फूड कोर्ट में लगे बड़े-बड़े स्क्रीन पर दिखाए जानेवाले क्रिकेट मैच और वीडियो ने इन जगहों के रोमांच में बढ़ोतरी की है। यही नहीं, लोगों का भरपूर मनोरंजन करने के लिए यहाँ हर शाम लाइव म्यूजिकल प्रोग्राम होते हैं और समय-समय पर फूड फेस्टिवलों का आयोजन भी किया जाता है। इसके अतिरिक्त बच्चों के लिए झूले, वीडियो गेम्स बाउलिंग एरिया भी है, जिसने मनोरंजन की पूरी अवधारणा को बदल दिया है और लोगों की पहली पसंद भी बना दिया है।

डी.एल.एफ. रिटेल का मॉल बनाने में प्रवेश करना समूह की डी.टी. सिनेमा और मनोरंजन उद्योग में गतिविधियों के साथ पूर्णतया मेल खाता है। पिया सिंह ने समय के साथ न सिर्फ स्वयं के फ़िल्मों तथा फ़िल्म बनाने के शौक को खुद के बनाए एकदम नए मार्ग से न सिर्फ विकसित किया है, बल्कि उसमें खरीदारी व सुविधा का समन्वय कर अपनी एक अलग पहचान भी बनाई है।



प्रिया पॉल



आदर-सत्कार की लिखी नई परिभाषा

चेयरपर्सन, ए.पी.जे. पार्क होटल्स

“पर्फैक्शन पाने में बहुमात्र लगते हैं, पर एक बार आप जब उस अवश्या में पहुँच जाते हैं तो आप उसे बनाए दृश्यने व बघाने में लगे रुहते हैं।”

प्रिया पॉल ऐसी शख्सियत हैं, जिन्होंने हॉस्पिटैलिटी इंडस्ट्री में ‘लक्जरी’ (ऐशो-आराम) की अवधारणा को पुन : परिभाषित किया है और हमेशा परिवर्तन को अपनाने में धीमी गति रखनेवाले इस उद्योग में नवीनतम प्रयोग करके उसे एक रोचक व रोमांचक उद्योग में तब्दील कर दिया। अपनी विशिष्ट रचनात्मकता और शैली के अनोखे मिश्रण से इस कर्मठ महिला उद्यमी ने देश भर में पार्क होटल्स ग्रुप के हिस्से के रूप में ट्रेंडी, खास और कलात्मक लक्जरी बुटीक होटलों को स्थापित कर इस क्षेत्र को नया आयाम दिया। प्रिया के

लिए जीवन हमेशा कुछ करते जाने का नाम है और इसीलिए वह अपने होटलों की शूंखलाओं को बढ़ाते हुए हमेशा एक नया अध्याय लिखने में व्यस्त रहती हैं।

नेतृत्व करने का गुण

30 अप्रैल, 1966 को कलकत्ता में एक पारंपरिक संयुक्त परिवार में जन्मीप्रिया का बचपन वहीं बीता। संयुक्त परिवार व भारतीय मूल्यों का सम्मान करनेवाला होने के बावजूद उनका परिवार बहुत प्रगतिशील था। पंजाबी संस्कृति और परंपराओं के हिसाब से उनका पोषण व परवरिश हुई। उनके पिता सुरेंद्र पाल सात भाई-बहनों में सबसे छोटे थे। उनकी माँ शीरीन सिंधी परिवार से थीं। चार भाई-बहनों में प्रिया सबसे बड़ी थीं और बचपन में बहन प्रीति व भाई करण तथा आनंद के साथ बिताए सुनहरे पल आज भी उन चारों को आत्मीयता के सूत्र में पिरोए हुए हैं।

कलकत्ता के लोरेटो हाउस और ला मार्टीनेरे स्कूल में उन्होंने पढ़ाई की। स्कूल में ही उनके अंदर निहित नेतृत्व करने का गुण परिलक्षित होने लगा था। जब दसवींकक्षा में उन्होंने लोरेटो हाउस को छोड़ ला मार्टीनेरे में प्रवेश लिया तो ‘हेड गर्ल’ होने का गर्व भी उनके साथ था। बारहवीं कक्षा में उन्हें विशिष्ट प्रदर्शन के लिए ‘गुड कंडक्ट मेडल’ मिला और मात्र दो बरसों में ही उस स्कूल में उन्होंने अपनी एक खास छाप छोड़ी। वह आगे पढ़ने को और अपनी योग्यता दिखाने को तैयार थीं। उनके पिता ने उन्हें बेहतर शिक्षा एवं उनके बहुमुखी विकास के लिए बोस्टन के वेलसले कॉलेज में पढ़ने के लिए प्रेरित किया।

सन् 1984 में इकोनॉमिक्स का कोर्स करने के लिए वह बोस्टन पहुँच गई। वह कहती हैं, “अमेरिका में बिताए उन चार सालों ने मुझे सही दिशा में सोचने और जीवन की जटिलतम स्थितियों का सामना करने लगा उनसे निबटने के लिए एक ठोस आधार प्रदान किया।”

समन्वय करने की कला

कुछ समय के लिए लिबरल आर्ट्स कॉलेज से फ्रेंच सीखने के लिए प्रिया फ्रांस में रहीं। इकोनॉमिक्स में ग्रेजुएशन करने के बावजूद 18 वर्षीया प्रिया ने खगोलशास्त्र, पुरातत्त्व विज्ञान, कला और फ्रेंच भाषा के अद्भुत समन्वय का चयन कर उनका अध्ययन किया। लिबरल आर्ट्स कॉलेज में किन्हीं भी विषयों को चुनने की स्वतंत्रता थी और उस समय उनके लिए यह छूट किसी वरदान की तरह थी, जो यह नहीं जानती थीं कि अपने कॅरियर के रूप में वह किस धारा को अपनाना चाहती हैं। वहाँ रहकर उनकी क्षमता का विस्तार तो हुआ ही, साथ ही सीखने के अनगिनत अवसर भी मिले।

भारत लौटने से पहले वह चाहती थीं कि अमेरिका में ही कुछ समय के लिए काम करें। लेकिन उनके पिता ने उन्हें सुझाव दिया कि वह परिवार के होटलों में उनके मार्गदर्शन में काम करें। वर्ष 1988 में बीस वर्ष की उम्र में आरंभ हुआ उनका होटल इंडस्ट्री में वह आरंभिक सफर आज उन्हें वहाँ ले आया है, जहाँ उनकी मेहनत व काबिलियत की मिसाल दी जाती है, जहाँ कामयाबी इसलिए उनके कदम चूमती है क्योंकि उनमें प्रतिभा है, इसलिए नहीं क्योंकि उनके पिता ने विरासत में उन्हें साम्राज्य सौंपा था।

परिस्थितियों को चुनौती की तरह स्वीकारा

जब उनके पिता ने उन्हें परिवार का बिजनेस सँभालने को कहा तो उस समय बाजार मंदी के दौर से गुजर रहा था और उन्हें महसूस हुआ कि वह इस जिम्मेदारी को उठाने में असमर्थ हैं, क्योंकि स्थितियाँ कठिन हैं और उनकी जैसी अनुभवहीन 22 वर्षीया युवती के लिए उन्हें सँभालना कठिन होगा। तब उनके पिता ने समझाया कि जब सबकुछ ठीक हो तब सफलता प्राप्त करना सबसे आसान बात है, लेकिन जब परिस्थितियाँ कठिन हों और हर चीज उस ढंग से न हो जैसी कि आपने सोची है, तब सफलता प्राप्त करना कठिन होता है। कठिन समय में डटे रहो और धैर्य, क्योंकि परिस्थितियाँ स्वयं समाधान ढूँढ़ लेती हैं। तब बेटी ने पिता की सलाह को मानते हुए कठिन परिस्थितियों को चुनौती की तरह स्वीकार कर लिया और आज परिणाम सबके सामने है।

दृढ़ निश्चय और प्रतिबद्धता को जीवन का मूलमंत्र मानते हुए, अपनी रचनात्मकता और कल्पना-शक्ति का प्रयोग करते हुए उन्होंने भारत के होटल उद्योग को गुणवत्ता व नएपन की परिभाषा दी। आज वह 300 करोड़ से अधिक के ए.पी.जी. सुरेंद्र पार्क होटल्स लि. की चेयरपर्सन हैं और पुरुष-प्रधान उद्योग को मजबूती से थामे नए प्रतिमान गढ़ रही हैं।

जब सन् 1986 में दिल्ली में पार्क होटल बना तो उनके माता-पिता दिल्ली आ बसे। प्रिया के लिए यह एक बहुत बड़ा बदलाव था, क्योंकि कलकत्ता में ही उनके सारे मित्र थे और उन्हें उनसे दूर होना पड़ा। यह वह समय भी था जब आर्थिक मंदी ने बाजार को अपने घेरे में ले लिया था। धीरे-धीरे अपने पिता के मार्गदर्शन में बिक्री और विपणन की बारीकियों को सीखते हुए सन् 1989 से प्रिया ने होटल के संचालन को अपने हाथ में ले लिया।

दर्द को ताकत बनाया

होटल उद्योग के दौँव-पेंचों और बाजार की माँग के अनुसार नीतियों में बदलाव लाने को प्रतिबद्ध प्रिया ने स्वयं को पूरी तरह से उस क्षेत्र में ढाल लिया था, जो उनके पिता का सबसे

प्रिय सपना था; पर जीवन निर्बाध गति से चले, यह शायद नियति को मंजूर नहीं था। तभी तो सन् 1989 में एक कार दुर्घटना ने 17 वर्ष की उम्र में उनके भाई आनंद को छीन लिया। उस हादसे से परिवार अभी उबर भी नहीं पाया था कि अप्रैल 1990 में असम में एक आतंकवादी ने उनके पिता की हत्या कर दी। उनकी माँ ने चेयरपर्सन की तरह होटल का काम सँभाला और उनके चाचा जीत पॉल ने एडवाइजरी की जिम्मेदारी सँभाली। उनके पिता के समय में ही पारिवारिक बिजनेस का बँटवारा हो गया था, इसलिए बँटवारे को लेकर कोई झगड़ा-विवाद होने का तो सवाल ही नहीं उठता था।

पिता और भाई की मृत्यु के बाद अपने दुःख के साथ जीने का भी उन्हें वक्त नहीं मिला, क्योंकि बहुत सारी जिम्मेदारियाँ उन्हें उठानी थीं और उस दुःख ने जहाँ एक तरफ उनके वजूद को हिलाकर रख दिया वहीं एक मजबूती भी प्रदान की। शायद दर्द में इतनी ताकत होती है कि वह इनसान को जहाँ एक पल के लिए बिखेर देता है, वहींदूसरे पल उसे वज्र जैसा कठोर भी बना देता है। वह कहती हैं कि उस समय अपने निजी आघातों पर मरहम लगाने का मेरे पास समय नहीं था, क्योंकि 30,000 लोगों का जीवन हम पर निर्भर था और हम सबकुछ भूलकर घर के किसी कोने में आँसू बहाते नहीं बैठे रह सकते थे।

24 वर्ष की उम्र में तीन होटलों के प्रमुख की जिम्मेदारी लेना प्रिया की जिंदगी में रातोरात लाया। उस समय उनका छोटा भाई करण कॉलेज में पढ़ रहा था और बहन प्रीति ग्रेजुएशन पूरी करने के बाद परिवार के शिपिंग बिजनेस को लंदन में सँभालने में व्यस्त थी। वह कहती हैं, “मेरे जीवन में निजी व प्रोफेशनल दोनों पहलुओं में एक नाटकीय मोड़ आया।” लेकिन दर्द और दुःख के उठते ज्वार को अपने ही भीतर छिपाकर वह काम सँभालने में जुट गई। उन्होंने बिजनेस में व्याप्त कमियों को बहुत ही बेहतरीन ढंग से दूर किया। वह समझ गई थी कि कस्टमर अपने पैसे के बदले बेहतर सुविधाएँ प्राप्त करने की इच्छा रखता है।

बुटीक होटलों का गठन

’90 के दशक के आरंभिक दौर में भारत का होटल उद्योग उतना व्यवस्थित व सुगठित नहीं था जितना कि आज के समय में है। तब ताज व ओबेराय जैसे बड़े-बड़े होटलों का आधिपत्य था, इसलिए प्रिया को अपने होटल की एक जगह बनाने के लिए ऐसा कुछ करना था जिससे वह प्रतिद्वंद्वियों को हराता हुआ एक अग्रणी ब्रांड की तरह स्थापित हो जाए।

वह इसी सोच-विचार में लगी रहतीं कि किस तरह से अपने होटलों को ज्यादा रोचक व दिलचस्प रहने की जगह बनाया जा सके, ताकि लोग होटलों की ओर आकर्षित हों। वह

अमेरिका के कुछ होटलों से इतना प्रभावित हुई कि उन्होंने उस अवधारणा को भारत में लाने का निश्चय किया। उन्हें लगा कि होटल केवल सोने या आराम करने की जगह होने के बजाय एक ऐसा स्थान होना चाहिए, जिसमें जाकर ग्राहकों को अपनेपन व अपने खास होने का एहसास भी हो।

सबसे पहले भारत में उन्होंने बुटीक होटलों की पहल कर होटल इंडस्ट्री में एक नया बदलाव किया। पर्यटक या कस्टमर बरसों से चले आ रहे होटलों के वातावरण और सज्जा से उकता चुका है, इसी बात को ध्यान में रखते हुए उन्होंने चीजों व सुविधाओं को पेश करने के लिए अभिनव प्रयोग शामिल किए। डिजाइन, सुविधा और व्यक्ति की आवश्यकताओं के हिसाब से सेवाएँ और उनके साथ आत्मीयता का स्पर्श उन्होंने अपने होटल को दिया। पार्क होटलों का नया रूप सबको खूब भाया—नए वास्तुशिल्प, सज्जा और लोगों की पसंद को ध्यान में रखते हुए किए गए उनके प्रयोगों ने ग्राहकों को यह एहसास कराया कि वे किसी राजा से कम नहीं हैं। खास कलात्मक सज्जा उनके होटलों को विशिष्टता की कतार में ला खड़ा करती है। उनके लग्जरी बुटीक होटल स्टाइल, वैभव और आत्मीयता का मिला-जुला आभास देते हैं। यही वजह है कि आज का युवा पार्क होटल्स को अपनी पहली पसंद मानता है।

बनींउपहास का पात्र

प्रिया जिस मिशन पर निकली थीं, वह आसान नहीं था, पर अपनी कलात्मकता और हर चीज को बारीकी से परखने की आदत ने उन्हें होटलों को इस तरह से सुसज्जित करने में मदद की, जो वास्तव में किसी मिसाल से कम साबित नहीं हुए। होटलों की लॉबी में कलाकृतियों को लगाने और हर होटल को एक खास टच देने का श्रेय उन्हींको जाता है।

सन् 1991 में जब भारतीय अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण हुआ तब होटल उद्योग में पैर रखे प्रिया को मात्र तीन वर्ष ही हुए थे। लेकिन वह समझ गई थीं कि भारत के परंपरागत हॉस्पिटैलिटी उद्योग में व्यापक बदलाव आकर ही रहेगा और घरेलू व विदेशी दोनों ही पर्यटकों की संख्या में बढ़ोतरी होगी। उन्हें संतुष्ट रखने के लिए होटल को विश्व स्तरीय बनाना होगा। इसी सोच के साथ प्रिया पार्क होटल्स समूह के नवीनीकरण और बेहतर सुविधाएँ देने के प्रयास में जुट गई। उन्होंने जब लीक से हटकर पार्क होटलों को लुक देना आरंभ किया तो लोगों ने उनका उपहास तक उड़ाया। लोगों की यही राय थी कि अतिथि ग्राहकों की सोच व होटल के प्रति मन में बसी छवि को होटल के लुक या सज्जा में बदलाव देकर बदला नहीं जा सकता है। बड़े ही बेहतर होते हैं—इस धारणा को गलत साबित करते

हुए जब प्रिया ने छोटे लग्जरी होटल बनाकर बुटीक होटल्स की मान्यता प्राप्त कर ली तो इस बदलाव से इस क्षेत्र से जुड़े लोगों का चौंकना स्वाभाविक ही था।

सम्मान

भारतीय हॉस्पिटैलिटी क्षेत्र और पर्यटकों तथा स्थानीय लोगों के लिए निर्मित सुविधा की अवधारणा में दिए उनके योगदान के लिए उन्हें अनेक पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया है। उनकी सदस्यता पर आधारित ‘प्रेफेरड एट द पार्क’ प्रोग्राम के लिए इंस्टिट्यूट ऑफ डायरेक्टर्स ने उन्हें सन् 1999-2000 में प्रतिष्ठित पीकॉक इनोवेटिक प्रोडक्ट/सर्विस अवार्ड से सम्मानित किया। भारत में विभिन्न शहरों में 3,000 से भी अधिक सदस्यों वाला यह अनोखा लॉयल्टी प्रोग्राम एफ ऐंड बी आउटलेट्स में उन्हें उपहार तो देता ही है, साथ ही उन्हें पॉइंट्स भी मिलते हैं। कोलकाता का पार्क होटल आई.आई.एम., अहमदाबाद में होटल बिजनेस के वर्ग में एकमात्र केस स्टडी के रूप में पढ़ाया जाता है।

अंतर्राष्ट्रीय फलक पर भी ब्रिटेन की टेटलर मैगजीन ने बंगलौर के द पार्क को सन् 2003 में विश्व के 101 बेहतरीन होटलों में शामिल किया। वर्ल्ड डिजाइन की पत्रिका ‘वॉलपेपर’ ने दिल्ली के द पार्क के रेस्तराँ फायर और लाउंज बार अग्नि को उसके रोचक नमूनों के लिए बेहतरीन मौज-मस्ती करने की जगह की संज्ञा दी। सन् 1999-2000 के फेडरेशन ऑफ होटल्स ऐंड रेस्टोरेंट्स ऑफ इंडिया द्वारा प्रिया को यंग एंटनप्रेन्योर ऑफ द ईयर अवार्ड से नवाजा और 2000-03 और सन् 2003-04 के लिए इकोनोमिक्स टाइम्स ने उन्हें ‘बिजनेस पर्सन ऑफ द ईयर’ के रूप में मनोनीत किया। सन् 2006 में ‘फोर्ब्स ऑनलाइन’ ने उन्हें भारत की 100 अधिकतम ताकतवर महिलाओं की सूची में दर्ज किया।

प्रिया होटल एसोसिएशन ऑफ इंडिया की वाइस प्रेसीडेंट भी हैं और वर्ल्ड ट्रैवल टूरिज्म काउंसिल की संस्थापक सदस्य तथा इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट (आई.आई.एम.), लखनऊ के एडवाइजरी बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स की सदस्य भी हैं। कला और संस्कृति के प्रति लगाव ने उन्हें कई संगठनों के साथ जोड़ा जैसे इंडियन फाउंडेशन फॉर दि आर्ट्स।

प्रभावशाली व्यक्तित्व

गोआ प्रिया का सबसे बेहतरीन पर्यटन स्थल है। मेडिटेशन और पढ़ने की शौकीन प्रिया को संगीत सुनना भी पसंद है। अपने पिता से अगर उन्होंने बिजनेस की बारीकियाँ सीखींतो माँ से एक साथ बहुत सारे काम करने की कला। यही वजह है कि वह आज गुप्त के आठ होटलों और अपने परिवार दोनों के लिए समय निकाल पाती हैं। अपने जटिल काम और

व्यस्तताओं के बावजूद प्रिया शांत रहती हैं। इसकी वजह वह मेडिटेशन और योगा को मानती हैं, जिन्हें वह पिछले कई वर्षों से सीख रही हैं।

उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली होने के साथ-साथ उनकी सोच भी बहुत परिष्कृत है और वह जो करती हैं, उसका पूरा आनंद उठाती हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि आनेवाले समय में वह भारतीय होटल उद्योग में एक नया इतिहास रचेंगी।

आनेवाले वर्षों में और नए होटलों को लॉज्च करने की उम्मीद रखनेवाली प्रिया हर समय कुछ नया सीखने को प्रयत्नशील रहती हैं। यह सीखने की चाह खाने से लेकर होटल के रेस्तराँओं में नए किस्म के पेय पदार्थ सर्व करने तक कुछ भी हो सकती है।

वह कहती हैं, “हमारा परिवार सदा मानव-कल्याण से जुड़ा रहा है। हमने कई ट्रस्ट व संस्थानों की भी स्थापना की है। मुझे लगता है कि प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक कंपनी व कॉरपोरेट के लिए यह आवश्यक है कि वह जिस ढंग से चाहे समाज में योगदान दे। मैं केवल पैसे की बात नहीं कर रही हूँ। हमने पश्चिम बंगाल में कई स्कूल स्थापित किए हैं और असम में चाय बागानों में ट्यूबवेल प्रोजेक्ट्स स्थापित किए हैं।

“मैंने कुछ दोस्तों के साथ मिलकर दिल्ली के पार्क होटल में एक सीड शॉप खोली, क्योंकि मुझे लगता है कि ऑर्गेनिक व प्राकृतिक उत्पादों की इस समय बेहद आवश्यकता है और अगर वे एक ही जगह पर उपलब्ध हो जाएँ तो लोगों को आराम हो जाएगा।”

जीती हैं हर पल को

सन् 2004 में प्रिया ने चेन्नई के बिजनेसमैन सेतु वैद्यनाथन से विवाह किया। विवाह बेशक उन्होंने देर से किया, लेकिन उसने उनकी जिंदगी में एक नया आयाम जोड़ा। पत्नी और माँ बनने के साथ उनकी प्राथमिकताएँ तो बदली ही हैं, साथ ही उन्होंने यह भी सीखा कि किस तरह एक कामकाजी महिला को घर और कार्यक्षेत्र की जिम्मेदारी निभाने के लिए सामंजस्य बिठाना होता है। प्रिया की जिंदगी दिल्ली और चेन्नई के बीच चक्कर लगाती रहती है, क्योंकि उनके पति वहाँ रहते हैं। परिवार के साथ कैरम खेलना या बेटे को कुछ पढ़कर सुनाना या फिर दोस्तों के साथ बाहर घूमने जाना उनके जीवन के वे आनंददायक पल हैं जिन्हें वे बार-बार जीना चाहती हैं। वह कहती हैं, “मैं जिन चीजों को पसंद करती हूँ, उन सबको आज ही करना चाहती हूँ, न कि रिटायरमेंट तक के लिए उन्हें स्थगित करना चाहती हूँ।”

आप जो भी कर रहे हैं, उसका पूरा आनंद उठाएँ: क्योंकि अगर आप आनंद का अनुभव नहीं कर पा रहे हैं तो इसका अर्थ है कि कुछ गलत हो रहा है। के दर्शन का पालन करनेवाली प्रिया को परिवार व काम के बीच संतुलन कायम करने के लिए बहुत मेहनत नहीं करनी पड़ती, क्योंकि अपने पति का उन्हें पूरा समर्थन मिलता है।

वह कहती हैं, “महिला को हर कदम पर एक तनी हुई रस्सी पर चलना होता है। ऐसे में छोटा सा प्रोत्साहन या समर्थन भी कामकाजी महिलाओं के लिए पर्याप्त होता है और वे अपने कॅरियर पर ध्यान दे पाती हैं। फिर चाहे वह फ्लैक्सिबल काम के घंटे ही क्यों न हों। पार्क होटल में कार्यरत महिलाओं के लिए होनेवाले नेटवर्किंग इवेंट्स और निजी विकास कार्यक्रमों में उन्हें भाग लेने का अवसर मिलता है, जिससे उनकी कार्यक्षमता में सुधार आने के साथ-साथ आत्मविश्वास में भी बढ़ोतरी होती है।



प्रीथा रेहुजी



हैल्थकेयर को समर्पित

मैनेजिंग डायरेक्टर, अपोलो हॉस्पिटल्स, चेन्नई

“सफलता पाने का कोर्ड शॉर्टकट नहीं होता। आपको पूछा चक्कर लेना ही होता है। बेहतर होगा कि अपने लक्ष्यों पर डटे रहें और प्राथमिकताएँ भी तय कर लें।”

हैल्थ केयर के क्षेत्र में पूरी तरह समर्पित प्रीथा रेहुजी की लोगों के प्रति असीमित सहदयता और बच्चों से जुड़ाव ने अपोलो अस्पतालों को उच्चतम शिखर पर पहुँचाने में मदद की। सन् 1983 में उनके पिता डॉ. प्रताप सी. रेहुजी ने अपोलो हॉस्पिटल्स की नींव डाली थी। प्रीथा रेहुजी, रेहुजी पुत्रियों में सबसे बड़ी थीं, जिन्होंने अपने पिता से विरासत में अपोलो हॉस्पिटल्स की अध्यक्षता को पाया है। उनके पाँव इतनी बुलंदियों को छूने के बाद भी दृढ़ता से जमीन पर टिके हैं। वह प्रतिदिन चेन्नई अस्पताल का चक्कर लगाती हैं और सही निर्णय लेने के लिए व्यापारिक सूझ-बूझ के साथ अपने अंतस की आवाज पर भी भरोसा करती हैं।

डॉ. रेड्डी ने अपनी चारों पुत्रियों की नैसर्जिक प्रतिभा एवं उनके स्वभाव को पहचान उन्हें बिजनेस के गुर सिखाए और फिर उन्हें अलग-अलग जिम्मेदारियाँ सौंपीं। प्रीथा कहती हैं, “हम बहनें जब छोटी थीं तो पापा ने हमें स्वीमिंग पूल में धक्का देकर तैरना सिखाया था। वह तब भी हमारे आसपास होते थे, आज भी हैं। हमने तो केवल उनके नीति-निर्देशों व निर्णयों को क्रियान्वित किया है। उनके लिए हैल्थ केयर एक तपस्या है, हमारे लिए तरंग।”

चिकित्सक बनने की चाह

सन् 1957 में हैदराबाद में जनमीप्रीथा की स्कूल और कॉलेज की पढ़ाई चेन्नई में हुई। बेसेंट अरुण्डेल स्कूल की छात्रा प्रीथा ने रुकमणी देवी अरुण्डेल की छाँव में कला क्षेत्र से ग्रेजुएशन किया। प्रीथा का स्वप्न था पिता की तरह चिकित्सक बनना। स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद अपनी इस महत्वाकांक्षा के बारे में जब उन्होंने अपने पिता को बताया तो उन्होंने उन्हें कड़ाई से उत्तर दिया कि वह मेडिकल कॉलेज में प्रवेश करवाने में उनकी कोई मदद नहीं करेंगे। पर प्रीथा अपने निर्णय पर अडिग व लक्ष्य के प्रति सचेत थीं, इसलिए मेडिकल कॉलेज की प्रवेश परीक्षा उन्होंने 96 प्रतिशत अंक से उत्तीर्ण कर मद्रास मेडिकल कॉलेज में सीट प्राप्त कर ली। लेकिन उनके पिता ने कहा कि वह नहीं चाहते कि उनकी बेटी डॉक्टर बने। यह सुनकर वह इतनी निराश हुई कि उन्होंने रुकमणी अरुण्डेल के डांस स्कूल में दाखिला लेकर नृत्य सीखना आरंभ कर दिया।

जब उनका विवाह 19 वर्ष की उम्र में कर दिया गया तो उन्होंने मान लिया कि गृहिणी बनना ही उनकी नियति है। यह सोचकर वह परंपरागत बहू और पत्नी की भूमिका निभाने में जी-जान से जुट गई। हालाँकि चिकित्सक बनने की चाह उन्हें अकसर कचोटती रहती। उद्योगपति विजय कुमार रेड्डी से विवाह होने के बाद उन्होंने चेन्नई के स्टेला मेरिस कॉलेज से रसायन-शास्त्र में ग्रेजुएशन किया। उस समय उनकी बहन संगीता पिता की प्रमुख सहयोगी थीं, जिन्हें विवाह के बाद हैदराबाद शिफ्ट होना पड़ा। तब उनके पिता ने उनसे संगीता का काम सँभालने को कहा।

एक स्तंभ की तरह हैं

हालाँकि उस समय कैरियर को लेकर उनके मन में कोई निश्चित धारणा नहीं थी, क्योंकि उनके पिता चाहते थे कि वह एक सुखी विवाहित जीवन जीएँ। लेकिन जब पिता को अस्पताल में अपना हाथ बँटाने के लिए किसी की आवश्यकता महसूस हुई तो उन्हें प्रीथा ही इसके लिए उपयुक्त लगीं और सन् 1989 में वह उनसे जुड़ गई और तब से आज तक एक स्तंभ की तरह उन्होंने अस्पताल के काम को सँभाला हुआ है। अपनी ममता मरीजों पर

लुटातींप्रीथा अपने मरीजों के लिए किसी दया की मूर्ति से कम नहीं हैं। डॉ. रेड्डी की चारों बेटियाँ (प्रीथा, शोभना, संगीता व सुनीता) आज चिकित्सीय कंपनी को उचित देखभाल और कार्य-कुशलता से चला रही हैं।

जिस समय प्रीथा अपोलो से जुड़ीं, उस समय उनकी मनोदशा ऐसी थी कि वह लोगों के सामने बात करने से भी डरती थीं। लेकिन जब जिम्मेदारी कंधों पर पड़ी तो तो उनमें उन्हें निभाने की हिम्मत भी स्वत : आ गई और तब उन्हें यह भी समझ में आया कि उनके पिता ने उन्हें मेडिकल कॉलेज में पढ़ाई करने की अनुमति क्यों नहीं दी थी। वह डॉक्टर बन जातीं तो उनका ध्यान और व्यस्तता मेडिको प्रैक्टिस तक ही सीमित रह जाती; जबकि पिता चाहते थे कि उनकी बेटी का एक बार गृहस्थ जीवन सही ढंग से बस जाए तो वह उनसे ऐसे चिकित्सा सेवा समूह का संचालन करवाएँ, जहाँ एक नहीं, हजारों चिकित्सक कार्यरत हों।

समय के साथ प्राप्त की निपुणता

अपने कॅरियर के आरंभिक चरण में मैनेजिंग डायरेक्टर की अपनी भूमिका को कुशलता से निभाने के लिए उन्हें बहुत संघर्ष करना पड़ा, क्योंकि उससे पहले उनके पास चिकित्सा क्षेत्र में काम करने का कोई अनुभव नहीं था। कुछ समय के लिए उन्होंने एक एडवरटाइजिंग एजेंसी में ही काम किया था और अपोलो में आने के लिए कोई तैयारी भी नहीं की थी। वैसे भी उनका अपोलो से जुड़ना कोई पूर्व नियोजित तो था नहीं। अपने पिता से इस पेशे से जुड़ी निपुणताओं को सीखने के बावजूद समय के साथ उन्होंने उत्कृष्टता व विशिष्टता हासिल की। स्टेनफोर्ड यूनिवर्सिटी में मेडिको मैनेजमेंट के उन्होंने अल्पावधि के कोर्स किए, पर वास्तविक प्रशिक्षण जहाँ प्राप्त किया वह था अपोलो हॉस्पिटल।

अपोलो हॉस्पिटल्स ने अन्य अस्पतालों की तुलना में हमेशा एक अनोखा रास्ता अपनाया है। असंख्य विदेशी मरीज वहाँ इलाज कराने आते हैं। पूरी निष्ठा व पेशेवर ढंग से मरीजों का इलाज करने को प्रतिबद्ध अपोलो का इंटरनेशनल प्रोग्राम मरीजों व उनके परिवारजनों को पूर्ण सहयोग देता है, जिनका सामना भारत आकर नए माहौल व नए चेहरों से होता है। अपने घर से दूर होते हुए भी उन्हें वहाँ आकर अजनबी या पराए होने का एहसास न हो।

प्रीथा ने टी.एल.सी. (टेंडर लिविंग केयर) का मंत्र अपनाया हुआ है, जिसे बहुत स्नेहमयी ढंग से वह हर मरीज पर लागू करती हैं। कुछ समय पहले मिले व्यक्ति से वह इस तरह व्यवहार करती हैं, मानो उन्हें बरसों से जानती हों। प्रीथा के नेतृत्व में अपोलो स्पेशोलिटी हॉस्पिटल ने एशिया में बतौर मुख्य ऑनकोलॉजी रेफरेल सेंटर की तरह अपनी पहचान स्थापित कर ली है। एशिया में यह यूनिट उन कुछ केंद्रों में से एक है जहाँ बोन मैरो ट्रांसप्लांटेशन की

सुविधा है। भारत में कोर्ड ब्लड ट्रांसप्लांटेशन करनेवाला पहला यूनिट होने के कारण यूनिट कैंसर के मरीजों को बेहतरीन इलाज व देखभाल उपलब्ध कराता है।

अपोलो जैसे कॉरपोरेट हॉस्पिटल्स की बेहतरीन सुविधाओं और नित नए किए जानेवाले प्रयोगों के कारण ही भारत में मेडिकल टूरिज्म तीव्र गति से बढ़ रहा है। मैकेंजी की एक रिपोर्ट के अनुसार, सन् 2012 में भारतीय हैल्थ केयर मार्केट का आकार 3,20,000 करोड़ रुपए का हो जाएगा।

नए-नए प्रयोग

आम चिकित्सा के साथ प्रीथा ने अपने मरीजों के लिए प्राणिक हीलिंग और आयुर्वेदिक इलाज को भी अपनाया हुआ है। नए-नए प्रयोग करते रहना अपोलो ग्रुप की न सिर्फ नीति है, वरन् इस बात को भी दरशाती है कि अपने मरीजों के हितों व इलाज के प्रति व्यावसायिक सोच रखने के बजाय ये ग्रुप एक स्नेहमयी दृष्टिकोण रखता है। अपनी बीसवींवर्षगाँठ पर अपोलो ने मेडिकल म्यूजिकल थेरैपी कोर्स की शुरू आत की। प्रीथा मानती हैं कि मरीजों पर संगीत का बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है।

अपोलो हॉस्पिटल्स कई स्वास्थ्य संबंधी प्रयासों से भी जुड़ा है। करोड़ों रुपए पी.ई.टी.-सी.टी. स्कैन में लगे हैं ताकि आरंभिक अवस्था में ही डॉक्टर कैंसर के बारे में पता लगा सकें। सन् 1999 में रुरल टेलीमेडीसिन सेंटर स्थापित करनेवाला अपोलो अस्पताल भारत में सबसे विशालतम टेलीमेडीसन सॉल्यूशन प्रोवाइडर के रूप में उभरा है। इस समय उसका टेली नेटवर्क भारत व विदेशों में 33 स्थानों में फैला हुआ है।

वह हैल्थकेयर संगठनों को व्यावसायिक उद्यमों की तरह बनाने में यकीन नहीं रखती हैं। वह चाहती हैं कि लोग स्वस्थ रहें, इसलिए 'वेलनेस' की धारणा को बढ़ावा देने में लगी हुई हैं। यही वजह है कि अस्पताल धूम्रपान-निषेध अभियान व स्वस्थ पौष्टिक आदतों जैसे अभियान समय-समय पर चलाता रहता है। टॉय बैंक उनका एक ऐसा प्रयास है, जिसकी शुरू आत उन्होंने नहे मरीजों के लिए की है, ताकि वे अपने मनपसंद खिलौनों के साथ खेल सकें। कैंसर-पीड़ित बच्चों के लिए खिलौने दान करने के लिए उनके अस्पताल का हर कर्मचारी आगे आया, जिससे प्रीथा का हौसला बढ़ा।

धार्मिक आस्था व प्रोफेशनल सोच

पूरा रेड्डी परिवार बहुत धार्मिक है और यही वजह है कि उनके अस्पतालों में मंदिर भी निर्मित हैं। वह कहती हैं, "हम मानते हैं कि ईश्वर हमारा मार्गदर्शन करेगा और मुश्किल

स्थितियों का सामना करने में मदद करेगा।” अपनी धार्मिक आस्था की वजह से ही प्रीथा लगातार चुनौतियों का सामना करते हुए आगे बढ़ती रही हैं। प्रीथा अक्सर तिरुपति जाती हैं। साथ ही वह जैनधर्म, बौद्ध धर्म व शिरडी के सॉई बाबा की भी भक्त हैं।

वह कहती हैं कि जब मैं अस्पताल के काम से जुड़ी थी तो उस समय इस पर पूर्णतया पुरुषों का आधिपत्य था। हैल्थकेयर के क्षेत्र में एक प्रोफेशनल सोच विकसित करने में मुझे बहुत सारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा; लेकिन मैं इस बात को बहुत जल्दी समझ गई थी कि बदलाव केवल धैर्य और दृढ़ता से ही लाया जा सकता है। चिकित्सा और चिकित्सा विज्ञान का क्षेत्र भारत में परंपरागत रूप से पुरुष-प्रधान है, फिर भी प्रीथा हैल्थकेयर के नए आयामों को विकसित करने के लिए अवसर निर्मित करने एवं चिकित्सा के पारंपरिक तरीकों के बीच प्रगतिशील व आधुनिक तकनीकों को लागू करने में सफल हो पाई। हालाँकि वह मानती हैं कि आज के समय व स्थितियों को देखते हुए पुरुष व महिलाओं के बीच का अंतर बहुत क्षीण हो गया है। यही वजह है कि हैल्थकेयर इंडस्ट्री में अनगिनत महिलाएँ प्रवेश कर चुकी हैं और बहुत कुशलता से अपना योगदान दे रही हैं।

प्रीथा रेडी रविवार को भी काम करती हैं। वह कहती हैं कि हमारे पिता कहते हैं कि बीमारी की कभी छुट्टी नहीं होती है।

उन्होंने चेन्नई में अपना खुद का पहला प्रोजेक्ट अपोलो पिडयाएट्रिक अस्पताल खोला। खुलने के चार दिनों के पश्चात् ही अस्पताल गंभीर व जटिल ऑपरेशन करने में जुट गया। दिल के वॉल्व से लेकर बोन मैरो ट्रांसप्लांटेशन तक 12 ऑपरेशन कर दिए। अस्पताल का लेआउट तैयार करने से लेकर डिजाइनिंग, बेड, ऑपरेशन थिएटर का साइज तक उन्होंने खुद तय किया है। वे मरीजों की सुविधाओं का पूरा ध्यान रखती हैं। उनकी बहन सुनीता का कहना है कि “चीजों को समझने की दृष्टि सब में हो सकती है, लेकिन चीजों का निष्पादन करने की क्षमता सब में नहीं होती, पर प्रीथा ने अपनी निष्पादन क्षमता को अनेक बार प्रदर्शित किया है और ग्रुप को आगे ले जाने में उनका बड़ा हाथ है। यही नहीं प्रीथा हम सबके बच्चों की माँ की तरह हैं। उनके अंदर निहित मातृत्व की भावना मरीजों के प्रति भी दिखाई देती है।”

संतुलन आवश्यक है

प्रोफेशनल स्तर पर ही नहीं, निजी जीवन में भी अपने परिवार के प्रति पूर्णतया समर्पित एवं उसे प्राथमिकता देनेवाली प्रीथा में हर स्थिति को स्वीकारने व उसका सामना करने की काबिलियत है। अपने पति व ससुरालवालों से कदम-कदम पर सहयोग मिलने के कारण ही

उनके लिए अपनी तमाम जिम्मेदारियों को संतुलित ढंग से निभाना संभव हो पाया है। वह मानती हैं कि अपनी जिम्मेदारियों के बीच संतुलन करना अति आवश्यक है। हालाँकि संतुलन करना आसान नहीं होता, पर हम में संतुलन करने की काबिलियत होनी चाहिए।

पुस्तकें पढ़ने, खासकर सिडी शेल्डन, डेन ब्राउन, रॉबर्ट लुडविग और रॉबिन कुक के उपन्यास पढ़ने की शौकीन प्रीथा को इटालियन व थाई खाना पसंद है और ‘द लास्ट समुराई’ उनकी पसंदीदा फ़िल्म है।

सफेद, क्रीम या नीले रंग के परिधानों में अकसर देखी जानेवाली प्रीथा प्रकृति-प्रेमी होने के साथ-साथ कला व संस्कृति के प्रति भी लगाव रखती हैं।

उनकी नजरों में ताकत का अर्थ है लोगों की जिंदगी में बेहतर परिवर्तन करने की क्षमता होना। ‘न’ शब्द उनकी जिंदगी के शब्दकोश में कभी नहीं रहा और इसका सारा श्रेय वह अपने पिता को देती हैं, जिन्होंने बचपन में उन्हें सदा यहीं सीख दी कि ‘कुछ भी असंभव नहीं है, कोशिश करो और सब हो जाएगा।’ अपनी माँ सुचित्रा से उन्होंने धैर्य एवं लोगों से व्यवहार करने की निपुणता सीखी। उनके माता-पिता ने अपनी चारों बेटियों के अंदर एक-दूसरे की देखभाल करने के संस्कार इतने कूट-कूटकर भरे हैं कि रेण्डी बहनों को देखकर हर कोई यहीं कहता है कि ‘उनमें अत्यधिक निकटता है और हर संभव तरीके से एक-दूसरे को प्रभावित करती हैं।’

वह मानती हैं कि अपनी सोच व्यापक रखना आवश्यक है और अपने में एक दृढ़ता विकसित करना भी निहायत जरूरी है। वह कहती हैं, “भविष्य में अगर आपको कोई बड़ी चीज हासिल करनी है तो अपने अंतिम लक्ष्य तक पहुँचने के लिए आपको अपने लक्ष्यों को समझना होगा। कोई भी निर्णय लेने से पहले दस कदम आगे की ओर देखें और समझें कि तब आपका भविष्य कैसा होगा।”



फाल्गुनी नायर



आर्थिक क्षेत्र को किया नए ढंग से परिभाषित

मैनेजिंग डायरेक्टर, कोटक महिंद्रा कैपिटल

“महिलाओं को अपने चुने हुए क्षेत्रों में भाग लेने का इच्छुक होना चाहिए और उस पर चलकर ही अपनी यात्रा कर्जी चाहिए। किसी भी औरका को जिसे अनगिनत प्राथमिकताओं में संतुलन बिठाकर चलना होता है, उसा समय आता है जो कठिनाइयों से भगा होता है और उसे एक विकल्प चुनने के बजाय बहुत सारे विकल्प चुनने होते हैं। तब उन्हें अपनी प्राथमिकताओं को तय करना चाहिए और उसके अनुसार ही लक्ष्य निर्धारित करना तथा उन्हें पाने का प्रयास करना चाहिए। तब कठिनाइयों भगा समय बहुत जल्दी गुजार जाता है।”

फाल्गुनी उन महिलाओं में से हैं जिन्होंने आर्थिक क्षेत्र को एक नए ढंग से परिभाषित किया और दुनिया के सामने यह प्रमाणित कर दिया कि उनके अंदर प्रबंधन करने की स्वाभाविक क्षमता है। वह बहुत कुशलता से उन क्षेत्रों को भी सँभाल सकती हैं, जिन पर आज तक पुरुषों का अधिकार रहा है। वह उन महिलाओं में से एक हैं, जिन्होंने सदियों से चले रहे सामाजिक ढाँचे के विरुद्ध आवाज उठाकर अपनी पहचान व काबिलियत समाज में दर्ज कराने के लिए लंबी लड़ाई लड़ी और महिला बैंकरों की आनेवाली पीढ़ी के लिए इस क्षेत्र में एक सुगम राह बनाई है।

दिलचस्पी ने खोली अलग राह

एक मध्यम वर्गीय परिवार में 19 फरवरी, 1963 को जन्मीफाल्गुनी नायर ने मुंबई यूनिवर्सिटी के सिडनेहम कॉलेज ऑफ कॉर्मर्स एंड इकोनॉमिक्स से बी.कॉम. की डिग्री हासिल करने के बाद अहमदाबाद के इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट से फाइनेंस में एम.बी.ए. किया। कॉलेज खत्म करने के बाद से उनके अंदर शेयर बाजार और उसमें निवेश करने के प्रति दिलचस्पी पैदा हो गई थी। ऐसा इसलिए हुआ था, क्योंकि उनके पिता उसमें निवेश करते रहते थे और वहाँ रोज होनेवाले उतार-चढ़ाव उनमें उत्सुकता जगाते। यहाँ तक कि वह रोज अखबारों में शेयरों के प्रॉफिट व अरेनिंग मार्जिन का अध्ययन भी करतीं। उसी दौरान उन्होंने ठान लिया था कि वह एम.बी.ए. करेंगी और आई.आई.एम. से बेहतर जगह उन्हें कोई नहीं लगी। अपने कोर्स में उन्हें आनंद आ रहा था। पर बहुत जल्दी ही उन्होंने फैसला लिया कि वह फाइनेंस में स्पेशलाइजेशन करेंगी। सन् 1985 में वह उस समय देश की सबसे बड़ी कंसल्टेंसी फर्म ए.एफ. फर्गुसन एंड कंपनी के साथ जुड़ गई। यहाँ उन्हें वित्त क्षेत्र में मार्केटिंग व संगठनात्मक रणनीति की जिम्मेदारी सौंपी गई। मेहनत और ईमानदारी से अपने दायित्वों का निर्वाह करने की आदत की वजह से वह बहुत जल्दी ही मैनेजर के स्तर पर पहुँच गई। इससे उन्हें स्वतंत्र रूप से बिजनेस खोलने और उसे कार्यान्वित करने का अधिकार प्राप्त हो गया। वह मानती हैं कि वहाँ उन्हें मैनेजमेंट के सारे पहलुओं को सीखने का अवसर व दक्षता प्राप्त हुई। सन् 1993 में उस समय उनकी जिंदगी में एक व्यापक मोड़ आया जब एम. एंड ए. एवं कॉरपोरेट एडवाइजरी को सँभालने के लिए उन्हें कोटक महिंद्रा फाइनेंस से जुड़ने का अवसर मिला।

एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा था, “90' के दशक में कोटक ने एक इनवेस्टमेंट बैंकिंग डिवीजन लगाया था और वे बहुत ज्यादा इक्विटी डील्स कर रहे थे। वे एक मजबूत एम. एंड ए. विभाग का संगठन करना चाहते थे और उन्हें लगा कि उसे लगाने की उचित निपुणता मेरे अंदर है। इसलिए मुझे वहाँ से आरंभ करना पड़ा। और यह मेरा सौभाग्य था कि छह

महीने के अंदर ही मुझे लंदन भेज दिया गया और मैं इक्विटी बिजनेस में आ गई तथा ब्रिटेन में मजबूत क्लाइंट्स आधार स्थापित किया। विदेशी निवेशकों की भारतीय कंपनियों की इक्विटी में दिलचस्पी बढ़ाई। फिर उसके बाद शायद उदय कोटक को मेरे अंदर छिपी संभावनाएँ और बेहतर ढंग से दिखाई देने लगीं और मुझे अमेरिका भेज दिया गया। वहाँ भी मैंने एक ऑफिस खोला। इस तरह मेरे कैरियर में लगातार प्रगति होती रही।”

रहीं साथ-साथ

कैरियर में जहाँ फाल्गुनी ने तेजी से छलाँग लगाई, वहींउनका निजी जीवन भी कम रोचक नहीं है। अपने पति संजय नायर के साथ रहने के लिए ही उन्होंने लंदन जाने का फैसला लिया था। संजय नायर, जो आज सिटी ग्रुप (इंडिया) के सी.ई.ओ. हैं, के साथ उनकी मुलाकात पहले दिल्ली यूनिवर्सिटी में हुई और फिर आई.आई.एम. के कैंपस में वे मिले। फाइनेंस की पढ़ाई साथ-साथ करने के बाद दोनों ने अपनी-अपनी राहें चुन लीं, पर संपर्क कायम रहा। संजय ने इंग्लैंड में डिजाइन इंजीनियरिंग की हैसियत से अपना कैरियर आरंभ किया पर बहुत जल्दी ही वह फाइनेंस मार्केट से जुड़ गए। सिटी बैंक से जब वह जुड़े तो उन्हें कॉरपोरेट व ट्रांजेक्शन का कार्यभार सौंपा गया। फाल्गुनी की तरह उन्होंने भी बहुत तेजी से तरक्की की और वह कॉरपोरेट फाइनेंस व कैपिटल मार्केट हेड बन गए।

सन् 1994 में फाल्गुनी और संजय ने विवाह कर लिया। तब तक फाल्गुनी कोटक से जुड़ चुकी थीं। संजय के लंदन जाने के बाद उन्होंने भी वहाँ जाने का निर्णय किया, क्योंकि वह मानती हैं कि पति-पत्नी दोनों को साथ-साथ रहना चाहिए। कैरियर के साथ परिवार व रिश्तों को अहमियत देनेवाली फाल्गुनी को तब इंग्लैंड में कोटक इंस्टिट्यूशनल इक्विटीज फ्रेंजाइज की स्थापना करने का अवसर मिला। फाल्गुनी ने अपनी राह में आनेवाली हर कठिनाई का सामना किया और इसमें उनका साथ दिया उनके पति ने। विदेशी धरती पर, जहाँ आज से चार दशक पूर्व भारतीय कॉरपोरेट व भारतीय उत्पादों को दुनिया के मार्केट में कमतर ओँका जाता था, वहाँ उन्हीं के प्रयासों से आज कोटक महिंद्रा यू.के. लिमिटेड ब्रिटेन की भारत केंद्रित प्रमुख रजिस्टर्ड ब्रोकर व मनी-मैनेजर फर्म है।

ईमानदारी को बनाया मूल मंत्र

संजय सन् 1996 में अमेरिका चले गए तो फाल्गुनी नायर भी वहाँ पहुँच गई। सन् 1997 में अमेरिका में उन्हें 6 महीने गोल्डमेन शेक के साथ काम करने का अवसर मिला। फिर कोटक महिंद्रा ने भारतीय कंपनियों की इक्विटी वहाँ बेचने तथा वहाँ के स्टॉक एक्सचेंज में सूचीबद्ध होने के लिए अपना कार्यालय वहाँ स्थापित करने का निर्णय लिया। इसका

दायित्व सौंपा गया फाल्गुनी को और साथ ही उन्हें कंपनी के नियंत्रक मंडल में भी शामिल कर लिया गया। उस समय उनकी उम्र थी केवल 34 वर्ष और वह भारत की एक अग्रणी निवेश व मर्चेट बैंकर कंपनी के अमेरिकन कारोबार की सी.ई.ओ. बन चुकी थीं। अमेरिका में उन्हें वॉल स्ट्रीट के बड़े नाम ए.बी. जोसेफ कोहेन से मिलने का अवसर मिला, जिनसे वह बहुत प्रभावित हुई। वह कहती हैं, “1998 के आसपास ए.बी. जोसेफ वॉल स्ट्रीट का एक बड़ा नाम थीं और उन्हें सुनना किसी रोमांचक अनुभव से कम नहीं होता था। मैं यह कहूँगी कि मैं वृद्धि में यकीन करती हूँ और मैं भौतिक वृद्धि में यकीन रखती हूँ और मैं उनकी इस बात की कायल थी कि अत्यधिक मूल्यांकन के बावजूद अमेरिका वृद्धि की ओर अग्रसर है।”

सन् 2000 में बिजनेस अपनी गति व फैलाव पकड़ चुका था और तब संजय व फाल्गुनी दोनों ने ही भारत आने का निर्णय लिया। यहाँ पहुँचने पर उन्हें कोटक इंस्टिट्यूशनल इक्विटी बिजनेस का प्रमुख बना दिया गया। फिर वर्ष 2005 में उनसे कंपनी के इन्वेस्टमेंट बैंक का प्रमुख बनने को कहा गया। असल में उस समय इन्वेस्टमेंट बैंक के शीर्ष पद के लिए उपयुक्त व्यक्ति की खोज की जा रही थी, फाल्गुनी के उस पद के लिए उपयुक्त होने के बावजूद उन्हें उम्मीद नहीं थी कि वह उन्हें दिया जा सकता है। इसलिए उन्होंने न तो इसके लिए कोई प्रयास ही किया, न ही कोई आशा रखी थी। फाल्गुनी यही मानती हैं कि चुनौतियाँ हमेशा कायम रहती हैं, इसलिए आपको जीवन में जीतने के मंत्र को ढूँढ़ना और उस पर टिका रहना चाहिए। और उनका मंत्र है कि जो भी करो, पूरे मन से करो—“आप जो भी करते हैं, उसके हर क्षण का भरपूर आनंद लें। इसके लिए निश्चित तौर पर कड़ी मेहनत व ईमानदारी दोनों का साथ थामे रहना चाहिए।” और उनके इसी मंत्र ने उन्हें आज यहाँ तक पहुँचाया है, जहाँ तक पहुँचना आसान तो कर्तई नहीं था, पर उन्होंने हार नहीं मानी।

प्राथमिकताएँ तय करें

‘बिजनेस टुडे’ की देश की 25 ताकतवर महिलाओं की सूची में शामिल फाल्गुनी कहती हैं कि कैपिटल मार्केट आज की बात होती है, जबकि इन्वेस्टमेंट बैंकिंग का अर्थ होता है आनेवाले पाँच वर्षों के लिए व्यापारिक नीतियों को विकसित करना। और यह काम किसी बड़ी चुनौती से कम नहीं होता है। उनके अनुसार, ग्राहक की जरूरत सबसे महत्वपूर्ण है और हर काम ग्राहक को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए और उन्हें बेहतर परिणाम देने चाहिए। उनकी जरूरतों को पूरा करना ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए। अपनी टीम को संगठित करने की क्षमता उनकी सबसे बड़ी ताकत और सफलता का आधार है। वह एक

तरफ जहाँ अपनी टीम को प्रेरित करती हैं वहीं दूसरी ओर प्राथमिकताओं को तय करने पर जोर देती हैं, जिससे उन्हें पूरे दिन में कभी ऐसा नहीं लगता कि कोई क्षण बरबाद हुआ है।

फाल्गुनी मानती हैं कि महिलाओं को अपने चुने हुए क्षेत्रों में भाग लेने का इच्छुक होना चाहिए और उस पर चलकर ही अपनी यात्रा करनी चाहिए। किसी भी औरत को, जिसे अनगिनत प्राथमिकताओं में संतुलन बिठाकर चलना होता है, ऐसा समय आता है, जो कठिनाइयों भरा होता है और उसे एक विकल्प चुनने के बजाय बहुत सारे विकल्प चुनने होते हैं, तब उन्हें अपनी प्राथमिकताओं को तय करना चाहिए और उसके अनुसार ही लक्ष्य निर्धारित करना और उन्हें पाने का प्रयास करना चाहिए। तब कठिनाइयों भरा समय बहुत जल्दी गुजर जाता है।

एक बेटा व बेटी, दो जुड़वाँ बच्चों की माँ फाल्गुनी जितनी कार्य-कुशलता से अपनी कंपनी के काम को संभालती हैं, उतनी ही दक्षता से घर-परिवार के दायित्वों को निभाती हैं। वह कहती हैं, “मैं जानती हूँ कि कैसे काफी दबाव डालना है और किस तरह उसे वहाँ तक नहीं खींचना है जहाँ तनाव पैदा हो जाए।” हालाँकि काम फाल्गुनी की सबसे पहली प्राथमिकता है, फिर भी वह अपने बच्चों की उपेक्षा नहीं करतीं। वह मानती हैं कि जब अपने बच्चों पर ध्यान देने की आवश्यकता कम हो जाएगी, तब वह अधिक समय कॅरियर को देंगी।

चलना है मीलों आगे

स्वीमिंग की शौकीन फाल्गुनी फिल्में देखना भी पसंद करती हैं और ट्रैकिंग पर जाना उनका पसंदीदा शौक है। अपने को फिट रखने के लिए वह टेनिस भी खेलती हैं। बस, उन्हें इस बात का अफसोस है कि वह अभी अपनी व्यस्तताओं के चलते सोशल वर्क करने की अपनी चाह को पूरा वक्त नहीं दे पा रही हैं। जब वह आई.आई.एम. में थींटो ब्लाइंड स्कूल जाकर बच्चों को पाठ पढ़कर सुनाया करती थीं। वह किसी रचनात्मक कार्य में अपना समय लगाना चाहती हैं। फाल्गुनी मानती हैं कि अभी तो उन्हें मीलों आगे चलना है और अनगिनत सपनों को पूरा करना है। वह कहती हैं, “हर समय 100 प्रतिशत कार्य नहीं किया जा सकता है। यह जानना महत्वपूर्ण है कि आप क्या पाना चाहते हैं। उसी के बाद आप अपने लक्ष्यों को प्राथमिकता देना आरंभ करते हैं। आपके लिए क्या महत्वपूर्ण है, उस पर ध्यान केंद्रित करें और उसमें अपनी पूरी ऊर्जा लगा दें।”

फाल्गुनी इस बात को लेकर पूर्णतया स्पष्ट हैं कि मातृत्व कभी भी किसी की राह का रोड़ा नहीं बन सकता है। वह मानती हैं कि माँ बनना आपकी प्रबंधन क्षमताओं को सुदृढ़ करता है। एक बार उनकी बेटी ने उनसे पूछा कि आप टीचर क्यों नहीं बनीं? पर आज वह उन्हें

अपना आदर्श मानती है। उनके बच्चों को उन पर गर्व है और इसे ही वह अपनी सबसे बड़ी कामयाबी मानती हैं।

कामयाबी का शिखर छू लेने के बावजूद फाल्गुनी को परिवार के साथ समय बिताना सबसे ज्यादा पसंद है। अगर खाली समय मिलता है तो वह पहाड़ों व नई जगहों पर जाना पसंद करती हैं। उनके 20 वर्षीय जुड़वाँ बच्चे भी इन्वेस्टमेंट बैंकिंग के क्षेत्र में आना चाहते हैं। हालाँकि वह चाहती थींकि वे कुछ और करें, ताकि नए अनुभव मिल सकें, पर वे इसे ही कैरियर बनाना चाहते हैं तो फाल्गुनी और उनके पति संजय दोनों हर समय उनकी मदद व मार्गदर्शन करने को तत्पर हैं।

ऐसे क्षेत्र में, जहाँ शुरू आत करने पर आपका काम आपके सबसे ज्यादा समय की माँग करता है, स्थिति बहुत थकानेवाली हो सकती है। फाल्गुनी नायर के साथ भी ऐसा ही हुआ। लेकिन मदद लेने से वह कभी हिचकिचाई नहीं। वह कहती हैं, “अपनी नौकरी छोड़ देना कहने में बहुत सही निर्णय लगता है, पर असली चुनौती तो वह होती है जब आप अपने कैरियर के प्रति पूर्णतया समर्पित होकर उससे जुड़ी माँगों से हताश व परेशान न हों। अपने क्रोध पर संयम रखना और तनाव-मुक्त रहना केवल धैर्य से ही सीखा जा सकता है।”

हमारे देश में कामकाजी महिला का जीवन बहुत आसान नहीं होता है, इसलिए फाल्गुनी का मानना है कि मजबूत सपोर्ट सिस्टम होने पर ही कोई औरत दोनों क्षेत्रों को बखूबी सँभाल पाती है। लेकिन सच यह भी है कि सदियों से अपनी कमाई को औरतों के हाथ में सैंप घर के दायित्वों से मुक्त रहनेवाले पुरुष को फाल्गुनी जैसी महिलाओं ने यह दिखा दिया है कि अब संपूर्ण देश की बैंक व्यवस्था इन्हीं महिलाओं के कंधों पर टिकी है और उनका पैसा न सिर्फ उनके हाथों में सुरक्षित है, वरन् बढ़ भी रहा है।



मलिका श्रीनिवासन



एक ताकतवर उद्यमी

वाइस चेयरमैन, टेफे इंडिया

“अपनी शक्तियों को समझें और वही करें जिसे आप बेहतर ढंग से कर सकते हैं। इसके साथ ही एक लचीली सोच होना अनिवार्य है, जिससे जीवन एक प्रवाह के साथ चलता है।”

वह भारत की जानी-मानी उद्यमी हैं। उन्होंने आकाश की ऊँचाइयों को छूने के लिए हमेशा कड़ी मेहनत की, पर उनके पैर फिर भी जमीन पर ही टिके रहे। वह दृढ़ इच्छा-शक्ति से युक्त ऐसी कर्मठ महिला हैं, जो ऐसी कंपनी को सँभाल रही हैं, जिसमें ट्रैक्टर निर्माण जैसा पुरुषोचित बिजनेस होता है। मशीनों और कल-पुरजों की गुणवत्ता से जिसमें रात-दिन जूझना पड़ता है। लेकिन ऐसे बिजनेस में वह आज की प्रतियोगी दुनिया में सबसे अलग हटकर उभरीं और अपनी एक पहचान कायम की। 2,900 करोड़ के बहुत सारी कंपनियों से युक्त ग्रुप टेफे (ट्रैक्टर्स एंड फार्म इक्वीपमेंट) की डायरेक्टर भारत की सफलतम महिला

सी.ई.ओ. में से एक हैं। समाज जिन आम कार्यक्षेत्रों को महिलाओं के लिए उपयुक्त मानता है, उनमें महिलाएँ असाधारण कामयाबी पाती हैं, पर ट्रैक्टर निर्माण जैसी कंपनी की ड्राइविंग सीट पर बैठकर उसका संचालन करना एवं नेतृत्व क्षमता का प्रदर्शन करना एक अद्भुत बात और समाज की महिलाओं को लेकर बनी सोच के लिए एक उदाहरण है।

लक्ष्यों को पाने में जुटीं

जब मल्लिका ने सन् 1986 में कंपनी को जॉइन किया था तो उसका वार्षिक टर्नओवर 85 करोड़ रुपए था और आज टेफे व उससे जुड़ी कंपनियों का टर्नओवर बढ़कर लगभग 2,900 करोड़ हो चुका है। उनका लक्ष्य है—अब आनेवाले तीन वर्षों में कई कंपनियों का अधिग्रहण करना। हालाँकि वह मानती हैं कि आय कितनी है, उससे संगठन की वास्तविक सफलता का अंदाजा नहीं होता है, बल्कि उसे पाने के तरीके कितने सही हैं, यह बात महत्वपूर्ण है। उनके अनुसार, लाभ कमाने के साथ विस्तृत सामाजिक उद्देश्य को पाने के लिए बिजनेस व कंपनियों में सही मूल्यों को समाहित करना अनिवार्य है। वह कहती हैं, “एक ही चीज को करने के भिन्न तरीके, सोच व मत हो सकते हैं; पर जब बात मूल्यों की आती है तो कोई भी दो तरीके नहीं हो सकते, जिन्हें चुना जाए। लाभ महत्वपूर्ण है, पर केवल बिजनेस को कायम रखने के लिए। किसी बिजनेस को चलाने के लिए आपको पैसे से प्यार करने की आवश्यकता नहीं है। आपको एक संस्थान को निर्मित करने के लिए, एक उत्कृष्टता का केंद्र निर्मित करने के लिए, एक बेहतरीन टीम निर्मित करने के लिए आपके पास एक सपना होना चाहिए। बिजनेस का उद्देश्य इससे कहींव्यापक है और उसे पूरा करने के लिए लगाई गई पूँजी पर मिलनेवाला लाभ महत्वपूर्ण है।”

पिता का मार्गदर्शन

एमालगेमेशंस ग्रुप के चेयरमैन उद्योगपति ए. सिवासेलम और उनके छोटे भाई को विरासत में मिलीं तीन दर्जन से ज्यादा कंपनियाँ, जो एक दर्जन से ज्यादा औद्योगिक गतिविधियों में संलग्न थीं। सिवासेलम की दो पुत्रियों में से सबसे बड़ी बेटी मल्लिका श्रीनिवासन का जन्म 19 नवंबर, 1959 को हुआ था। अपने माता-पिता की ऊँछों का तारा होने के साथ-साथ वे उनके माता-पिता होने पर स्वयं को गौरवान्वित मानते थे। इकनोमेट्रिक्स में मद्रास यूनिवर्सिटी से एम.ए. करने के बाद पेंसिल्वेनिया यूनिवर्सिटी के व्हार्टन स्कूल से उन्होंने एम.बी.ए. किया। सन् 1986 में जब उन्होंने पारिवारिक बिजनेस में आने का निर्णय लिया तो उन्हें टेफे कंपनी का जनरल मैनेजर नियुक्त किया गया। आर्थिक संपत्ति और व्यापार को बढ़ाने का भार जब उन्होंने लिया तो कंपनी का टर्नओवर 85 करोड़ था। अपने पिता के

मार्गदर्शन और टीम से मिलनेवाले पूर्ण सहयोग की वजह से वह व्यापक बदलाव लाने में सक्षम हो पाई। उन्होंने टेफे को अत्याधिक आधुनिक तकनीकी कंपनी बना दिया, जिससे किसानों की वह पहली पसंद बन गई।

वह कहती हैं, “मेरे पास बहुत सी अन्य चीजों को चुनने की स्वतंत्रता थी, पर काम करने के क्षेत्र में नहीं, खासकर अपने पिता के बिजनेस में। वह मानते थे कि मुझे वहाँ बहुत कुछ सीखने को मिल सकता है।” आरंभिक दिनों में, अक्सर वह मार्गदर्शन के लिए पिता पर ही निर्भर रहती थीं। “अगर कोई दिक्कत आ जाए तो कोई होना चाहिए, जिससे मदद माँगी जा सके। और चूँकि मेरे पिता बहुत कम बोलते थे, पर चीजों को सही ढंग से समझने में उनकी सलाह ने हमेशा मेरी मदद की।” वह कहती हैं। और पिता की बात को सच करते हुए उन्होंने वहाँ सीखा भी बहुत। अगर उनके पिता ने उन्हें इस बिजनेस में आने को बाध्य नहीं किया होता तो शायद उनकी जिंदगी व कंपनी किसी और ही दिशा में जाती।

सूझ-बूझ का प्रदर्शन

वह जानती थीं कि एक ताकतवर औद्योगिक व तकनीकी सेवाओं का आर्थिक माध्यम होने के बावजूद भारत अनिवार्य रूप से एक कृषि-प्रधान देश है। पर इसका अर्थ यह नहीं था कि टेफे के ट्रैक्टर पुरानी तकनीक के हों, क्योंकि किसान भी नए व अत्याधुनिक उपकरण इस्तेमाल करना चाहते हैं। इसलिए मल्लिका ने पैसा अनुसंधान व विकास पर लगाया। जैसे कि कार कंपनियाँ करती हैं वैसे ही लगभग हर साल टेफे ने ट्रैक्टरों के नए मॉडल बाजार में उतारे। उन्होंने उनकी प्रक्रियाओं को पुनः गढ़ा और एंटरप्राइज रिसोर्स प्लानिंग पर भारी मात्रा में निवेश किया और उसका लाभ उन्हें मिला। उसके बाद मल्लिका ने प्रतिद्वंद्वी कंपनी का अधिग्रहण करने की योजना बनाई। इस समय भारत में शेयर मार्केट में इसके शेयर दूसरे नंबर पर हैं और उन किसानों की पहली पसंद बन चुका है, जो नए व तकनीकी रूप से आधुनिक उत्पादों की चाह रखते हैं।

मल्लिका ने जब कंपनी में पहला कदम रखा था तो वह मात्र 27 वर्ष की थीं। लेकिन अपनी सूझ-बूझ व कारोबारी रणनीति से सबसे पहले उन्होंने इस बात पर ध्यान केंद्रित किया कि किसान किस तरह के ट्रैक्टर चाहते हैं। यह जानने के लिए उन्होंने सारे देश में कस्टमर केयर सेंटर स्थापित किए और वहाँ से मिलनेवाली प्रतिक्रियाओं को गंभीरता से लागू किया। साथ ही उन्हें इस बात का भी ध्यान रखना था कि ट्रैक्टरों की सालों पुरानी तकनीक, डिजाइन व मॉडल को बदलते हुए लागत व मूल्य न बढ़े। मल्लिका ने जब ट्रैक्टर उद्योग में प्रवेश किया था तब 21 से 30 हार्स पावर के ट्रैक्टरों की माँग थी; पर उन्होंने एक ही उत्पाद की श्रेणी पर निर्भर रहने के बजाय टेफे का उत्पाद पोर्टफोलियो बढ़ाया और टेफे में 75 हार्स पावर के ट्रैक्टर बनने लगे। '90 के दशक में मंदी की वजह से जब ट्रैक्टर उद्योग पर भी

उसका असर पड़ा तो बिक्री बढ़ाने पर जोर देने के बजाय मल्लिका ने उत्पाद घटा दिया। अपने डीलर्स पर बिक्री करने का दबाव बनाने के बजाय उन्होंने उन्हें धैर्य बँधाया कि वह मुश्किल समय में हिम्मत हारने के बजाय चुनौतियों का सामना मिलकर करें। कर्ज को बढ़ाने के बजाय प्राप्तियों पर नियंत्रण रखते हुए टेफे ने अपनी कमाई को बनाए रखा।

दृढ़ व्यक्तित्व

कंपनी ने समय-समय पर अनेक उत्तर-चढ़ाव झेले, पर इस साहसी महिला की दृढ़ता की वजह से धीरे-धीरे कंपनी कामयाबी की सीढ़ियों पर कदम रखती गई। आज न केवल एक अग्रणी ट्रैक्टर निर्माता कंपनी के रूप में कंपनी ने अपनी एक पहचान कायम कर ली है, वरन् अपने संचालन के क्षेत्रों को भी व्यापक कर लिया है। वह इंजीनियरिंग प्लास्टिक्स, पैनल इंस्ट्रुमेंट्स, ऑटोमोटिव बैटरीज गेर्स, हाइड्रोक्लोरिक पंप्स आदि जैसे अन्य उद्यमों में भी प्रवेश कर चुकी हैं। कंपनी का मैसी फर्गुसन के साथ भी लंबा करार है, जो अब एगको का हिस्सा है। अंतर्मुखी किंतु दृढ़ व्यक्तित्व व सोच रखनेवाली मल्लिका का अमेरिका की एगको कॉरपोरेशन के साथ गठबंधन भी उनकी दूरदर्शिता का प्रतीक है। यह कंपनी विश्व स्तर के ट्रैक्टर बनाने में कुशल है।

यह आश्वर्यजनक बात नहीं लगती कि टेफे अस्पताल व स्कूल चलाता है, पर मल्लिका उन्हें दान का कार्य नहीं मानती हैं।

वह मानती हैं कि बिजनेस शिक्षित व स्वस्थ लोगों के सामाजिक संदर्भ में ही बेहतरीन ढंग से संचालित हो सकता है। इसलिए यह दान व व्यापारिक समझ का समन्वय है। वह व्यापार में मानवीय मूल्यों को समाहित करने में यकीन रखती हैं और साथ ही महिला शक्ति का सम्मान करने के लिए उन्होंने अपनी फैक्ट्रियों में महिला इंजीनियरों की नियुक्ति भी बड़ी संख्या में की हुई है। महिला शक्ति की पक्षधर मल्लिका कहती हैं कि समाज में महिलाओं के योगदान को अक्सर महत्त्व नहीं दिया जाता है। वह कहती हैं कि महिलाएँ जो भूमिका कॉरपोरेट जगत् में निभाती हैं, वह उनके समाज व देश को दिए जानेवाले सहयोग को नापनेवाला बहुत ही छोटा पैमाना है। जो भूमिका वे बच्चों को शिक्षित करने में निभाती हैं, उसे कमतर नहीं आँकना चाहिए।

शांत और सहनशीलता न खोनेवाली मल्लिका केवल एक प्रश्न से चिढ़ जाती हैं और वह यह है कि ट्रैक्टर जैसे बिजनेस में, जो पुरुषों के हिसाब से तो ठीक है, आप कैसे अपनी पहचान बनाने में सफल हुई हैं? वह झुँझलाते हुए जवाब देती हैं कि उनकी नजरों में यह एक बहुत ही मूर्खतापूर्ण व निरर्थक सवाल है। उनके चेहरे पर छाई झुँझलाहट देखउन्हें

जाननेवालों को हैरानी हो सकती है, पर वह ऐसी ही हैं। विनम्र व हमेशा एक मनमोहक मुस्कराहट के साथ आपसे बात करनेवाली दो बच्चों की माँ मल्लिका इतनी सौम्य हैं कि उनकी इस तरह की प्रतिक्रिया अविश्वसनीय ही लगती है।

मल्लिका के लिए ताकत का अर्थ है बिना सत्ता का प्रयोग किए लोगों को प्रभावित करना। कार्यक्षेत्र के जीवन को संतुलित करने का उनका मूलमंत्र है अपनी शक्तियों को समझें और वही करें, जिसे आप बेहतर ढंग से कर सकते हैं। इसके साथ ही एक लचीली सोच होना अनिवार्य है, जिससे जीवन एक प्रवाह के साथ चलता है।

क्रांतिकारी से कम नहीं

मल्लिका किसी क्रांतिकारी से कम नहीं हैं। वह उस समय व्हार्टन यूनिवर्सिटी में पढ़ने गई थीं, जब उनकी बेटी मात्र 10 माह की थी। लेकिन वह ऐसा अपने पति व माँ के सहयोग के कारण ही कर पाई। उनके इस बारे में दृढ़ विचार हैं कि लोगों को जीवन में क्या करना चाहिए। वह इस बात पर जोर देती हैं कि यह जानना आवश्यक है कि कौन सी चीज किसके लिए उपयुक्त है और फिर चाहे कितनी ही चुनौतियाँ क्यों न आ जाएँ, बिना मित्रों या माता-पिता के किसी तरह के प्रभाव में आए उसे अपना लेना चाहिए। अपने जिम जाने की दिनचर्या में बाधा आना वह पसंद नहीं करती हैं और रोमांचक यात्राओं पर जाने का शौक रखती हैं, जैसे अलास्का में आइसबर्ग में कैंप में रहना।

मल्लिका व वेणु श्रीनिवासन पति-पत्नी के रूप में एक-दूसरे के पूरक हैं और एक-दूसरे को सहयोग देने के साथ-साथ इतनी अच्छी तरह से समझते हैं कि दोनों के बीच कभी भी अपने कार्यक्षेत्र या परिवार से जुड़े मुद्दों को लेकर मतभेद नहीं हुए। बल्कि वे तो अपने दोनों बच्चों (एक बेटी और एक बेटा) की परवरिश इस तरह कर रहे हैं कि उन्हें जीवन में किसी तरह का भी फैसला लेने में कभी कोई दिक्कत न आए। उनकी बेटी लक्ष्मी श्रीनिवासन टी.वी.एस. मोटर्स में बतौर मैनेजमेंट ट्रेनी कार्य कर रही हैं।

वर्ष 2006 का ‘इकोनॉमिक्स टाइम्स बिजनेस वूमैन ईयर अवार्ड’ मिलने पर उनके पति ऑटोमोबाइल के बादशाह वेणु श्रीनिवासन, टी.वी.एस. मोटर्स के सी.एम.डी.—जो उनको सहयोग देनेवाले स्तंभ की तरह हैं, ने कहा, “मुझे गर्व है कि मल्लिका को यह अवार्ड मिला। आज बिजनेस की दुनिया में ई.टी. अवार्ड सबसे अधिक मान्य अवार्ड है। यह किसी के भी कैरियर में मील के पथर से कम नहीं है।”

ट्रैक्टर मैन्युफैक्चरर्स एसोसिएशन एवं मद्रास मैनेजमेंट एसोसिएशन जैसे निकायों की प्रेसीडेंट मल्लिका मद्रास चैंबर ऑफ कामर्स एंड इंडस्ट्री की प्रेसीडेंट का पद ग्रहण

करनेवाली पहली महिला हैं। वह हैदराबाद के इंडियन स्कूल ऑफ बिजनेस की गवर्निंग बोर्ड की एक सदस्य भी हैं। राजस्थान सरकार के ट्रेड एंड इकोनॉमिक डेवलपमेंट बोर्ड की भी वह मनोनीत सदस्य हैं।



मीरा सान्याल



दूसरों की प्रेरणा-स्रोत

चेयरपर्सन व कंट्री एजीक्यूटिव, एबीएन-एमरो/आर.बी.एस. बैंक, इंडिया

“लगातार जिंदगी के अहम पाठों को सीखने के दौरान मुझे अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ा और बहुत कुशलता एवं विचार करने के बाद ही उनका मुकाबला करना संभव हुआ है। हर चीज को गल्लार्ड से पढ़ना बहुत आवश्यक होता है, तभी कामयाबी पर पहुँचा जा सकता है।”

एक बैंकर होने के नाते मीरा सान्याल का जीवन व कार्यक्षेत्र में योगदान जहाँ उदाहरणीय है, वहीं उनकी सोच व चीजों को सही परिप्रेक्ष्य में देखने की प्रवृत्ति किसी प्रेरणा से कम नहीं है। अपने क्षेत्र में सफलता की उच्चतम सीढ़ी पर खड़ी मीरा मानती हैं कि सफल होने के लिए आपको लोगों की देखभाल करने का दायित्व उठाना चाहिए। एक प्रमुख बहुराष्ट्रीय बैंक के कार्य की जिम्मेदारी और भारत में 24 शहरों में 40 जगहों पर 10,500 से भी अधिक

कर्मचारियों की जवाबदेही रखनेवाली मीरा सान्याल ने अपने लंबे बैंकिंग जीवन के 27 वर्षों में से 19 वर्ष ए.बी.एन. एमरो बैंक के साथ अब तक गुजार दिए हैं। एशिया पैसेफिक रीजन की सी.ओ.ओ. से लेकर एशिया के लिए कॉरपोरेट फाइनेंशियल, एडवाइजरी की अध्यक्ष, बैंक की ग्लोबल आई.टी. कंपनी ए.सी.ई.एस. की सी.ई.ओ. और भारत में इन्वेस्टमेंट बैंक की प्रमुख की तरह विभिन्न पदों पर उन्होंने काम किया। उनके विस्तृत व अलग-अलग तरह के अनुभवों ने उन्हें भारत तथा दुनिया के वित्त व अर्थव्यवस्था को गहराई से समझने का मौका दिया। ए.बी.एन. के साथ जुड़ने से पहले वह लेजार्ड व ग्रिंडलेज बैंक में काम कर चुकी थीं।

मीरा की आर्थिक व सामाजिक विकास मामलों में गहन दिलचस्पी है और बैंक के माइक्रो फाइनेंस प्रोग्राम व स्थिरता, गरीबी कम करने तथा जलवायु परिवर्तन से संबंधित परियोजनाओं का प्रबंधन सँभालती हैं। उन्हें अनेक अवार्ड प्राप्त हो चुके हैं। सन् 2006 में उन्हें इंडियन मर्चेंट्स चैंबर ने ‘वूमैन बैंकर ऑफ द ईयर’ अवार्ड से सम्मानित किया। सन् 2008 में उन्हें ‘कर्मवीर अवार्ड’ से नवाजा गया, जो सामाजिक विकास के लिए गैर-सरकारी संगठनों के देशव्यापी संगठन आईकौंगो द्वारा दिया जाता है।

अप्रैल 2009 में मीरा ने दक्षिण मुंबई से बतौर स्वतंत्र उम्मीदवार राष्ट्रीय संसदीय चुनाव लड़े। वह वर्तमान में इंडियन लिबरल ग्रुप की प्रेसीडेंट हैं, जो ऐसा विचार मंच है, जो आर्थिक व सामाजिक बदलाव संबंधी मुद्दों पर सक्रिय नागरिकता व जन बहस करने के लिए एक प्लेटफॉर्म है।

अनुभवों ने दी गंभीरता

15 अक्टूबर, 1961 में कोचीन में जनमीमीरा के पिता नौ सेना के अफसर थे। बचपन में ही उन्हें स्थितियों के साथ तादात्म्य बिठाना और हर परिस्थिति में स्वयं को ढालना सिखाया गया। ये सीख बैंकिंग में उनके पूरे कैरियर में किसी मंत्र की तरह काम आई। कंज्यूमर, कर्मशियल व इन्वेस्टमेंट बैंकिंग में एक लंबा वक्त बितानेवाली अपनी ही तरह की मीरा अपने समय के आई.आई.एम. या किसी अमेरिका की यूनिवर्सिटी में जाने के ट्रेंड का अनुसरण नहीं करना चाहती थीं। वह कुछ अलग करना चाहती थीं। वह कहती हैं, “अमेरिका जाना बहुत आउटडेटेड लगता था मुझे। मैं यूरोप के किसी देश में जाकर वहाँ का अनुभव लेना चाहती थी। इसलिए मैंने फ्रांस के फाउंटेनब्ला से आई.एन.एस.ई.ए.डी. किया। सन् 1992 में मैंने बैंक में पहली नौकरी की और फिर 1997 में बतौर कॉरपोरेट फाइनेंस एडवाइजर सिंगापुर से बाहर एक एशियाई बैंक में मेरी नियुक्ति हो गई।”

उनकी पढ़ाई मुंबई, दिल्ली, कोलकाता, पेरिस व बोस्टन में हुई। उन्होंने मुंबई के सिडेहम कॉलेज से कॉमर्स व इकोनॉमिक्स में स्नातक की डिग्री लेने के बाद फ्रांस के इनसीड से एम.बी.ए. किया। हार्वर्ड बिजनेस स्कूल से उन्होंने एडवांस मैनेजमेंट प्रोग्राम भी किया। हमेशा अद्भुत छात्रा व टॉप 10 में आने के कारण उनका शैक्षिक जीवन हमेशा अनुकरणीय ही रहा। मीरा धारा-प्रवाह अंग्रेजी, हिंदी, बँगला, सिंधी व फ्रेंच बोलती हैं और थोड़ा-बहुत ज्ञान उन्हें रूसी व जर्मन भाषा का भी है। उन्होंने मैडेरियन व जापानी भाषाओं का भी अध्ययन किया है।

वह कहती हैं, “मैं अपने आपको इस बात के लिए भाग्यशाली मानती हूँ कि मुझे असाधारण माता-पिता मिले। मेरे पिता एडमिरल हीरानंदानी मेरे मार्गदर्शक थे। उनकी यह सलाह कि तुम्हें अपने देश की सेवा करनी चाहिए, क्योंकि हमारे देश के लोग सचमुच बेहतर पाने के हकदार हैं, मुझे सदा देश के लिए कुछ करने की प्रेरणा देती रही। मेरी माँ वकील थीं, जिन्होंने सदा अपना एक मत बनाने और सही ढंग से उस पर चलने के लिए प्रोत्साहित किया। उस समय में एक नौसेना अधिकारी की पत्नी होने के नाते जिस समय वेतन बहुत मामूली हुआ करता था, उन्होंने बचत करने एवं अपने हाथ से काम करने की महत्ता के मूल्य हम में रोपे। अपने माता-पिता के मार्गदर्शन व सलाह को आज भी मैं बहुत महत्वपूर्ण मान उसका पालन करने का प्रयास करती हूँ। मेरे दादा-दादी रामकृष्ण मिशन व शारदा मठ के भक्त थे और स्वामी रंगनाथानंद के शिष्य व मित्र थे, जिसकी वजह से हिंदुत्व के सार वेदांत के बारे में घर में चर्चा व पालन किया जाता था। स्वामी विवेकानंद की जीवनी में एक पंक्ति है, जिसमें वह कहते हैं कि ‘जब तक किसी एक भी भारतीय की आँखों में आँसू हैं, तब तक उसके लिए हर भारतीय को मैं जिम्मेदार मानूँगा’ मेरे मन में छप गई। पिता के नौ सेना में होने के कारण हमें जगह-जगह जाने का मौका मिला। मेरा जन्म व विवाह कोचीन में हुआ और अधिकतम बचपन दिल्ली व मुंबई में गुजरा। बहुत जल्दी ही हम मित्र बना लेते थे और नई जगह को भी अपना लेते थे। इस वजह से जहाँ मित्रों का दायरा बढ़ता गया, मेरी सोच में भी एक तरह की प्रखरता व परिपक्वता आती गई।”

सीखिं अर्थव्यवस्था की बारीकियाँ

उनके पिता के रूस के एक छोटे से शहर जॉर्जिया में स्थानांतरण होने के कारण वहाँ शिक्षा ग्रहण करना उनके लिए अनिवार्य हो गया था और उस समय चूँकि वह कॉलेज में थीं, पूरी शिक्षा-प्रणाली को बदल पाना उनके लिए आसान नहीं था। इसलिए रूस में रहते हुए उन्होंने पत्राचार से मुंबई युनिवर्सिटी से बी.कॉम. का पहला वर्ष करने का निर्णय किया। वह कहती हैं कि वह उनके लिए बहुत ही अनोखा व आश्वर्यजनक अनुभव था। वहाँ रहते हुए जहाँ उन्हें एक तरफ रूसी भाषा सीखने का मौका मिला, वहाँ सोवियत संघ के जीवन को

समझने का भी मौका मिला। उसी दौरान उन्हें मुक्त अर्थव्यवस्था की बारीकियों और उस पर विश्वास करने का आधार बना। वह कहती हैं कि मुझे एहसास हुआ कि सतह के नीचे हर जगह लोग एक जैसे ही हैं। समान कारणों की वजह से ही हम डरते, खुश होते व रोते हैं। हमारी राजनीतिक व्यवस्था और राजनेताओं को आम लोगों के लिए इस बात को संभव बनाना है कि वे असाधारण सपनों को पूरा कर सकें और वह भी इस ढंग से कि मानव के सम्मान पर कोई आँच न आए।

मिर्लींचुनौतियाँ

माता-पिता से मिले संस्कारों और जगह-जगह जाने से मिले अनुभवों ने उनकी सोच में जो गंभीरता ला दी, उसी ने उन्हें कदम-कदम पर दूसरों के लिए प्रेरणा बनने का उन्हें साहस दिया। लगातार जिंदगी के अहम पाठों को सीखते रहनेवाली मीरा के जीवन में अनेक चुनौतियाँ भी आईं, जिनका सामना उन्होंने बहुत कुशलता व विचार करते हुए किया। हर चीज को गहराई से परखने की उनकी आदत ने आज उन्हें जिस कामयाबी पर पहुँचाया है, उसके लिए उन्हें प्रयास व मेहनत नहीं करनी पड़ी, ऐसा नहीं है।

बी.कॉम. पूरा करने के बाद उन्होंने आई.आई.एम., कोलकाता में दाखिला ले लिया। लेकिन कुछ ही समय बाद उन्हें फ्रांस में इनसीड में स्कॉलरशिप मिल गई। वहाँ से ग्रेजुएशन करने के बाद उन्हें पेरिस व स्टॉकहोम से नौकरी के ऑफर आए, पर वह भारत लौटना चाहती थीं, पर भारत लौटने के बाद उन्हें नौकरी ढूँढ़ने में अपेक्षा से अधिक दिक्कतों का सामना करना पड़ा। उन दिनों जब जो भारत से बाहर जाने का अवसर मिलने पर वापस लौटना नहीं चाहता था, उनका भारत लौट आना लोगों के लिए आश्चर्य की बात थी। वह जहाँ भी इंटरव्यू देने जातीं, लोग आश्चर्यजनक आँखें से उन्हें देखते। वह कहती हैं, “वह बहुत कठिन पर एक ऐसा समय था, जिसने मुझे बहुत कुछ सिखाया। उसके बाद मैंने कभी भी नौकरी के महत्त्व को कम नहीं आँका और यह भी जान लिया कि एक बार भारत के उच्च संस्थानों से बाहर होने के बाद नौकरी पाना कितना मुश्किल होता है।” कोलकाता के ग्रिंडलेज बैंक में नौकरी कर उन्होंने अपने कॅरियर की शुरु आत की। बैंकिंग के हर पहलू को जानने-समझने का अवसर उन्हें वहीं मिला। उन्होंने वहाँ काम करते हुए जाना कि वास्तव में मैनेजमेंट का अर्थ क्या होता है। उनका मानना है कि किताबें व केस स्टडीज पढ़कर मैनेजमेंट के बारे में उतना नहीं जान पाई थी जितना कि वहाँ काम करते हुए मैंने सीखा।

जिस दौरान उन्होंने सिडनहेम कॉलेज में दाखिला लिया, उसी समय उनके आई.आई.टी., दिल्ली के कुछ साथी छात्रों ने उन्हें इकोनॉमिक्स व कॉमर्स के छात्रों के लिए एक इंटरनेशनल एसोसिएशन (ए.आई.एस.ई.सी.) की शुरु आत करने के लिए आमंत्रित किया।

वह मानती हैं कि ए.आई.एस.ई.सी. उनके लिए सीखने के हिसाब से बहुत ही बेहतरीन अनुभव साबित हुआ।

“हमें अपनी पढ़ाई जारी रखते हुए संगठन का गठन, धनराशि जुटानी, छात्रों व कोरपोरेशंस दोनों के लिए संगठन का प्रचार करना और विदेश जानेवाले भारतीय छात्रों के लिए वीजा का प्रबंध करना होता था।”

आगे बढ़ते गए कदम

कोलकाता में लगभग 4 साल काम करने के बाद वह ‘क्रेडिट कैपिटल’ नामक इन्वेस्टमेंट बैंक से जुड़ गई। सन् 1992 में ग्रिंडलेज बैंक के पूर्व जनरल मैनेजर अशोक कपूर ने उनसे ए.बी.एन. एमरो बैंक के लिए इन्वेस्टमेंट बैंकिंग डिवीजन का गठन करने के लिए कहा। वह उनके कॉरियर में सीखने का सबसे बड़ा समय था। सन् 1997 तक प्राइवेट सेक्टर में ए.बी.एन. एमरो बैंक देश का प्रमुख इन्फ्रास्ट्रक्चर बैंक बन चुका था और वह टेलीकॉम, पावर व ऑयल व गैस में '90 के दशक के आरंभ में अधिकतम इन्फ्रास्ट्रक्चर प्रोजेक्ट्स का अग्रणी एडवाइजर व फाइनेंसर था। सन् 1997 में उन्हें सिंगापुर स्थित एशिया के कॉरपोरेट फाइनेंस एडवाइजरी का प्रमुख बनाकर भेजा गया। सन् 1999 में वह भारत लौट आई। उसी समय ए.बी.एन. एमरो बैंक ने बैंक ऑफ अमेरिका भारत, सिंगापुर व ताइवान के संचालनों पर अधिकरण किया था और उन्हें बैंक ऑफ अमेरिका के एकीकरण को सँभालने का उत्तरदायित्व सौंपा गया। वर्ष 2001 में मीरा ने ए.बी.एन. के लिए बी.पी.ओ. (ए.सी.ई.एस.) का गठन किया। बहुत जल्दी ही ए.सी.ई.एस. बैंक के वैश्विक व्यापार व इन्वेस्टमेंट बैंकिंग ऑपरेशंस को करने लगा।

सन् 2006 में उन्हें एशिया के लिए चीफ ऑपरेटिंग ऑफिसर का कार्यभार सौंपा गया, जिसके अंतर्गत जापान और दुबई से लेकर 17 देश आते थे। सन् 2007 में ए.बी.एन. एमरो को रॉयल बैंक ऑफ स्कॉटलैंड (आर.बी.एस.) के समूहों ने अधिकृत कर लिया और मीरा को उसी वर्ष भारत में बैंक का सी.ई.ओ. बना दिया गया। गरीबी दूर करने की परियोजनाओं के तहत बैंक ने 2.21 करोड़ परिवारों को माइक्रो ऋण प्रदान किए और उसमें मीरा ने बहुत उत्साहित हो अपनी भूमिका निभाई। वह अकसर सेल्फ हेल्प ग्रुप्स का दौरा करती हैं और उन्हें यह देखकर खुशी होती है कि जिन महिलाओं की उन्होंने वित्तीय सहायता की थी, वे आज एक बेहतरीन उद्यमी बन चुकी हैं।

जन-हित के कार्यों से जुड़ी

सन् 2009 में बैंकिंग में लगभग 25 साल गुजारने के बाद मीरा ने तय किया कि लोगों की सेवा व जन-हित के कार्यों में उन्हें अब अपना समय लगाना चाहिए। उन्हें लगता था कि प्रोफेशनल बैंकर के रूप में योगदान देकर वह इस कार्य को कर सकती हैं, पर फिर समाज की व्यवस्था देख एहसास हुआ कि प्रजातांत्रिक व्यवस्था में परिवर्तन केवल चुनावी प्रक्रिया के माध्यम से ही लाया जा सकता है। ऐसे देश में जहाँ प्रतिभाओं की कोई कमी नहीं है, भारत में राजनीतिक नेतृत्व की वर्तमान रिक्तता ने उन्हें यह यकीन करने को बाध्य किया कि उनके जैसे लोगों को देश के प्रशासन में एक सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए और वही ऐसा कर भी सकते हैं। लोकसभा चुनावों में खड़ा होना उनके लिए जहाँ एक तरफ रोमांचक अनुभव रहा, वहींइंडियन लिबरल ग्रुप के साथ मिलकर लोगों के लिए कार्य करने की यात्रा का भी आरंभ हुआ।

सन् 2007 से मीरा टेरी सी.ई.ओ. मंडल की सदस्य हैं और कोपेनहेगन में हुए जलवायु सम्मेलन में टेरी के प्रतिनिधि के रूप में उन्होंने हिस्सा भी लिया था। पर दो बच्चों की माँ मीरा सान्याल को कॉरपोरेट सामाजिक गतिविधियाँ ज्यादा पसंद हैं। वह एक एन.जी.ओ. से जुड़ी हुई हैं, जो एच.आई.वी. पॉजिटिव व गलियों में रहने वाले नशे के आदी बच्चों के लिए काम करता है।



मेहर पद्मजी



नेतृत्व कौशल में गुणी

चेयरपर्सन, थर्मेक्स

“मैं अपने काम को पसंद करती हूँ और मैं यहाँ इसलिए पढ़ूँची हूँ, क्योंकि मैं अपनी कंपनी, अपनी टीम से प्यार करती हूँ और चाहती हूँ कि दुनिया में थर्मेक्स एक अलग पहचान बनाएँ।”

सन् 2004 से पुणे स्थित थर्मेक्स, एनर्जी व इन्वायरनमेंट मैनेजमेंट में भारत की अग्रणी कंपनियों में से एक, की 43 वर्षीय चेयरपर्सन मेहर भारत की ताकतवर बिजनेस वूमन में से एक हैं। जब से वह सन् 1996 से थर्मेक्स से जुड़ी हैं, तब से अपनी माँ अनु आगा के मार्गदर्शन में बिजनेस को बढ़ाने, उसे विश्व स्तरीय मुकाम दिलाने में एक सशक्त भूमिका निभाती आई हैं। यह कंपनी जो हीटिंग, कूलिंग, केपटिव पावर, वाटर व वेस्ट मैनेजमेंट, एयर पॉल्यूशन व केमिकल्स में समन्वित नए समाधान प्रदान करती है, को इतने आगे ले जाने में मेहर का बड़ा हाथ है।

असाधारण नेतृत्व क्षमता

उनके असाधारण नेतृत्व में थर्मेक्स अपने शेयर की कीमतों को गिरने से बचा पाया और उनकी कंपनी 100 करोड़ अमेरिकी डॉलर से बढ़कर 800 करोड़ अमेरिकी डॉलर की हो गई और इसके लिए सन् 2009 में उन्हें बिजनेस स्टैंडर्ड के ‘सी.ई.ओ. ऑफ द ईयर’ अवार्ड से सम्मानित किया गया। उनके प्रशंसनीय कार्यों की सूची यहींतक सीमित नहीं है। जब से उन्होंने थर्मेक्स की कमान सँभाली है, तब से थर्मेक्स लगातार ‘फोर्ब्स एशिया’ मैगजीन में 200 अरब रुपए की कंपनी में दर्ज होती आ रही है और सन् 2007 में ‘बिजनेस टुडे’ ने भारत की सबसे महत्वपूर्ण 500 कंपनियों में से एक के रूप में सूचीबद्ध किया। सन् 2005 में भारत की श्रेष्ठ सफलतम महिलाओं में से एक के रूप में उन्हें इंडिया टुडे ने चुना। सन् 2006 में उन्हें फाइनेंशियल एक्सप्रेस के ‘वूमैन इन बिजनेस यंग एचीवर अवार्ड’ से सम्मानित किया गया और ओसाका में केवल एकमात्र भारतीय की हैसियत से उन्हें एशियन बिजनेस वूमेंस कॉन्फ्रेंस में प्रतिनिधि वक्ता के रूप में आमंत्रित किया गया।

यही नहीं, अपनी योग्यता व दूरदर्शिता के कारण वह थर्मेक्स को दक्षिण एशिया, मध्य पूर्व, अफ्रीका, यूरोप, चीन व उत्तरी अमेरिका जैसे 17 देशों तक ले जाने में सफल हो पाई। सामाजिक दायित्व की पक्षधर मेहर ने कॉरपोरेट एथिक्स के संदर्भ में थर्मेक्स को प्रतिष्ठित कंपनियों में से एक बना दिया है। बल्कि मेहर अपनी असाधारण सफलता के बावजूद बहुत सौम्य व विनम्र हैं। वह कहती हैं, “मेरे लिए सफलता का अर्थ मात्र एक सफल बिजनेस वूमैन होना ही नहीं है, बल्कि इसका अर्थ है एक अच्छी माँ, पत्नी व बेटी होना और अपने परिवार, मित्रों व समाज को सहयोग देना तथा उनके काम आना है। मेरी सफलता की यह यात्रा दुविधा व भय से गुजरते हुए स्पष्टता व रोमांच की है।”

हफ्ते के छह दिन और बिना एक भी क्षण व्यर्थ किए काम में जुटे रहना और घर व कार्यक्षेत्र में मिलनेवाले सहयोग के आधार पर मेहर पद्मजी प्रोफेशनल मैनेजर, पत्नी व माँ की भूमिकाओं को निभाती हैं और उनकी कार्य क्षमता को देखते हुए यह कहना कठई गलत नहीं होगा कि वह इन सब भूमिकाओं में खरी उतरती हैं।

योग्यता के बल पर हासिल पद

मजे की बात तो यह है कि जिस वर्ष मेहर का जन्म हुआ था, उसी वर्ष उनके नाना व पिता ने ‘वैंसन इंडिया’ नाम से एक कंपनी आरंभ की थी, जिसे बाद में सन् 1980 में ‘थर्मेक्स’ नाम दिया गया था। मूल्यों व संस्कारों के मजबूत आधार के साथ होने वाली परवरिश के कारण मेहर नहीं चाहती थीं कि परिवार के बिजनेस की बागडोर सिर्फ इसलिए उनके हाथ में

सौंपी जाए, क्योंकि वह उसकी वारिस हैं। वह चाहती थीं कि वह इस जगह को अर्जित करें और उसे सँभालने के योग्य बनकर दिखाएँ। इसलिए लंदन के इंजीनियरिंग कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग ऐंड टेक्नोलॉजी से कैमिकल इंजीनियरिंग में पोस्ट ग्रेजुएट की डिग्री हासिल करने के बाद उन्होंने सन् 1990 में एक ट्रेनी की तरह कंपनी को जॉइन किया।

वह कहती हैं, “मैंने अन्य प्रशिक्षार्थियों के साथ थर्मेक्स को जॉइन किया था और मुझे वॉटर व वेस्ट वॉटर ट्रीटमेंट विभाग सौंपा गया था, फिर कस्टमर सेल्स व सर्विस ट्रेनिंग के लिए मुंबई भेजा गया था, जो हमारी कंपनी का एक महत्वपूर्ण भाग था।”

सन् 1991 में उनका विवाह फिरोज पद्मजी से हो गया, जो खुद उसी वर्ष थर्मेक्स से जुड़ गए। पिता रोहिंटन आगा की सन् 1996 में मृत्यु के बाद मेहर को डायरेक्टर नियुक्त गया और अगले वर्ष फिरोज को भी डायरेक्टर बना दिया गया। उसके बाद के 5 वर्ष परिवार व कंपनी दोनों के लिए ही बहुत कठिन थे। सन् 1995 में थर्मेक्स के बोर्ड ने मेहर की माँ अनु आगा को चेयरपर्सन नियुक्त किया। पहले पिता और फिर मेहर के 25 वर्षीय भाई की सड़क दुर्घटना में मृत्यु होने की वजह से परिवार पर दुःख के बादल छा गए। किसी तरह मिल-जुलकर परिवार ने अपने को सँभाला ही था कि सन् 1999-2000 में भारतीय अर्थव्यवस्था बिगड़ी तो इतिहास में पहली बार कंपनी को नुकसान उठाना पड़ा।

सन् 2001 में थर्मेक्स के शेयर बहुत गिर गए। तब अनु आगा ने संगठन की संरचना पुनः करने के लिए बोस्टन कंसल्टिंग ग्रुप की मदद ली। सन् 2003 तक फिरोज, मेहर व अनु तीनों ने मिलकर कंपनी को फिर से उठाया। सन् 2003 में जब अनु रिटायर हुई तो मेहर वाइस-चेयरपर्सन थीं और 2004 में वह चेयरपर्सन नियुक्त की गई। पिछले 14 वर्षों से इस पद के लिए गढ़े जाने के बावजूद मेहर इस नियुक्ति को लेकर घबरा रही थीं। वह कहती हैं, “सबसे बड़ी चुनौती, जो उस समय मेरे सामने थी, वह थी मेरी योग्यता संबंधी सारे संशयों को दूर करना, अपने आप में सहज महसूस करना और सबसे बड़ी बात अपने प्रति ईमानदार रहना। मेरी माँ मेरी शक्ति का स्तंभ हैं और उन्होंने मुझे इस बात का एहसास कराया कि मैं अपने माता-पिता से अलग हूँ और मुझे खुद के नियम तैयार कर अपनी गलतियों को समझना होगा और वह मेरा नेतृत्व का सबसे पहला पाठ था।”

साफगोई पसंद करनेवाली और हर स्थिति में सहज बनी रहनेवाली मेहर के अंदर नेतृत्व करने के गुण उनके अंदर उनकी माँ अनु आगा ने डाले। वह कहती हैं, “मैं अपनी माँ की नेतृत्व करने की शैली की प्रशंसक हूँ और वे चार बातों को सबसे प्रमुख मानती हैं, जो हैं—साहस, कठिबद्धता, देखभाल व विश्वास। मैं भी उत्कृष्टता का आदर्श प्रस्तुत करना चाहती हूँ और एक लगातार, कायम रहनेवाली वृद्धि चाहती हूँ। मैं इस बात पर यकीन नहीं करती हूँ

कि केवल एक ही नेता उच्च शिखर पर रहे। मुझे अपनी कंपनी में नेताओं का समूह चाहिए, जो दूरदर्शी हों।”

वह मानती हैं कि आपकी झोली में सफलता यों ही नहीं आकर गिर जाती है, उसे अर्जित करना पड़ता है।

एक अच्छी श्रोता

बिजनेस की दुनिया में मेहर को एक अच्छा श्रोता होने का दर्जा दिया जाता है। वह लोगों को यह नहीं बतातीं कि क्या करना है, बल्कि उनसे पूछती हैं कि क्या किया जाना चाहिए। जब तक पूरी तरह से किसी मुद्दे को लेकर उन्हें संतुष्टि नहीं हो जाती, वह प्रश्न पूछने में हिचकिचाती नहीं है। उनका लक्ष्य है थर्मेक्स को ऐसा संगठन बनाना, जहाँ काम करते हुए लोगों को आनंद का अनुभव हो। उनके पिता ने उन्हें सिखाया कि मुनाफा केवल ऑकड़े नहीं होता, बल्कि मूल्यों का आधार भी होता है और इसी मूलमंत्र का मेहर पालन करती हैं। उनकी मेहनत व दूरदर्शिता से आज 3,000 करोड़ की कंपनी बन चुकी थर्मेक्स का जर्मन के संगठनों के साथ तकनीकी भागीदारी और व्यापारिक गठबंधन हो जाने के कारण विश्व में प्रभाव बढ़ रहा है।

पश्चिमी शास्त्रीय संगीत के प्रति मेहर का लगाव उन्हें विरासत में मिला है। उनके पिता रोहिंटन आगा दिलरु बा नामक वाद्य यंत्र बजाया करते थे और उनकी माँ अनु आगा को भारतीय शास्त्रीय संगीत बहुत पसंद है। बचपन में ही मेहर को संगीतमय माहौल देखने को मिला, क्योंकि उनके माता-पिता अक्सर संगीतकारों को आमंत्रित करते थे और वह अपने पिता के ग्रामोफोन से निकलती बीथोवन की धुनों को सुन सो जाती थीं। 7 वर्ष की उम्र में उन्होंने पियानो बजाना सीखना शुरू किया और इंग्लैंड में स्कूल में ए लेवल करते हुए उन्हें बीथोवन के मूनलाइट सोनाटा को परफॉर्म करने का अवसर मिला। उनके पिता लगातार पियानो पर उनकी प्रैक्टिस करवाते रहते थे और कंसर्ट से पहले उन्होंने उन्हें कहा कि किसी को प्रभावित करने के बजाय अभिव्यक्त करने के लिए इसे बजाना। वह पुणे स्थित वेस्टर्न क्लासिकल कोर ग्रुप के चैंबर सिंगर में भी हैं और वे हर मंगलवार प्रैक्टिस करने तथा वर्ष में एक या दो बार मुंबई व पुणे में कंसर्ट करने के लिए मिलते हैं।

पर्यावरण के प्रति चिंता

सन् 2004 के बाद थर्मेक्स में परिवर्तनों का दौर चला और वह सफलतापूर्वक एक बार फिर ऊर्जा व पर्यावरण संबंधित क्षेत्रों में बढ़ते हुए खड़ा हो गया। सन् 2008 में थर्मेक्स को 250

करोड़ रुपए से अधिक का कुल मुनाफा हुआ। इसका सारा श्रेय अपनी टीम को देते हुए वह कहती हैं कि हमारे पास ऐसी टीम हैं, जो पूरी तरह से अपने काम के प्रति समर्पित है—चाहे वे शॉप फ्लोर पर हमारे सहकर्मी हों या मैनेजमेंट, बोर्ड या हमारे बिजनेस पार्टनर। थर्मेक्स से जुड़े लोग पूरी ईमानदारी से कंपनी के हित के बारे में सोचते हैं और उसकी सफलता के लिए कड़ी मेहनत करते हैं।

मैककिंजे के साथ थर्मेक्स ने प्रोजेक्ट एवरग्रीन की शुरुआत की। इसे आरंभ करने के बाद से थर्मेक्स ने न सिर्फ भारत में अपनी स्थिति मजबूत की है, वरन् चुने हुए अंतरराष्ट्रीय बाजार में भी अपना विस्तार किया है। पर्यावरण को हरा-भरा बनाने की उनकी चाह कार्यान्वित हो रही है और उसे वैश्विक पहचान भी मिल रही है। कंपनी ‘आकांश’ नामक एन.जी.ओ. को लाभांश का 1 प्रतिशत देती है। विभिन्न सामाजिक कार्यों के लिए वक्त निकालनेवाली मेहर निस्संदेह एक साथ बहुत सारे काम करने में माहिर हैं। अपनी व्यस्तता व कंपनी से जुड़े मामलों में निरंतर जूझते रहने के बावजूद मेहर संतुलन रखते हुए कार्य को सँभालने के साथ-साथ अपने जीवन में भी आनंददायक पलों को जी लेती हैं। वह कहती हैं, “चाहे गाना हो या शिक्षा और रोजगार से जुड़ी सामाजिक व सामुदायिक कमिटमेंट या बतौर चेयरपर्सन विकास नीतियों की बात हो, ये सब मेरे जीवन के महत्वपूर्ण अंग हैं। मैं अपने काम को पसंद करती हूँ और मैं यहाँ इसलिए पहुँची हूँ, क्योंकि मैं अपनी कंपनी, अपनी टीम से प्यार करती हूँ और चाहती हूँ कि दुनिया में थर्मेक्स एक अलग पहचान बनाए।”



रंजना कुमार



राष्ट्रीयकृत बैंकों की रोल मॉडल

पूर्व चेयरपर्सन, इंडियन बैंक

“प्रत्येक स्त्री को आर्थिक आजादी प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए; लेकिन उसके लिए अपने निजी जीवन को नज़रअंदाज करना आवश्यक नहीं है।”

केंद्रीय सतर्कता आयोग की आयुक्त रंजना कुमार ऐसी शख्सियत हैं, जो बैंकिंग सेक्टर में ‘टर्न अराउंड कवीन’ के नाम से जानी जाती हैं। राष्ट्रीयकृत बैंकों की रोल मॉडल रंजना कुमार पहली ऐसी महिला हैं, जिन्हें राष्ट्रीयकृत बैंक की प्रमुख होने के साथ-साथ भारत में शीर्ष कृषि पुनर्वित्तीयन संस्था की प्रमुख होने का गौरव भी प्राप्त है।

खुला माहौल

रंजना को समन्वय करने के गुण अपने माता-पिता से मिले। उनकी माँ 30 वर्षों तक एक स्कूल चलाती रहीं। वह कहती हैं, “मेरी माँ बहुत ज्यादा मेहनत करती थीं। उनसे ही मैंने सीखा कि जीवन में मिलनेवाली छोटी-छोटी असफलताओं को लेकर न तो शिकायत करनी चाहिए, न ही निराश होना चाहिए।” अपने पिता से उन्होंने जिम्मेदारियों को उठाना सीखा और वह भी आध्यात्मिक मूल्यों को उसमें जोड़ते हुए। दो भाइयों की एक लाडली बहन होने के कारण उन्हें माता-पिता और भाइयों का अगर एक तरफ खूब प्यार मिला तो दूसरी ओर उनके माता-पिता ने लड़का-लड़की में कोई भेद नहीं किया। इससे उनके अंदर एक स्वतंत्र सोच तो विकसित हुई ही, साथ ही एक खुले माहौल में पलने-बढ़ने का अवसर भी मिला। वह मानती हैं कि ऐसा माहौल व्यक्तित्व विकास व सकारात्मक विचारों को जन्म देने में मदद करता है।

सीखा नए माहौल में ढलना

आज दो बच्चों की दादी बन चुकीं रंजना, जो एक शांत जीवन बिता रही हैं, उनका अपना बचपन भी खुशियों और मौज-मस्ती से युक्त था। पिता के एयरफोर्स में होने के कारण परिवार के साथ उन्हें जगह-जगह घूमने का मौका मिला। इस वजह से रंजना को भी बार-बार स्कूल बदलने पड़े। उनकी स्कूली शिक्षा मुंबई, कोलकाता, कानपुर और कोयंबटूर के स्कूलों में हुई। हर बार नए स्कूल में उन्हें फिर से नए सिरे से नए माहौल और छात्रों के साथ स्वयं को ढालने के लिए तैयार करना पड़ता था। लेकिन रंजना इतनी मस्त लड़की थीं कि अपने घर में मिले खुले माहौल के कारण उन्हें कभी भी नए माहौल में स्वयं को ढालने में दिक्कत नहीं आई। सबसे खास बात तो यह थी कि वह जिस-जिस स्कूल में गई, वहाँ की टीचरों की प्रिय बन गई। उनकी टीचर उनसे बहुत प्रभावित रहती थीं और यही कहती थीं कि यह अवश्य ही एक दिन कुछ कर दिखाएगी।

असाधारण वक्ता

बचपन से ही रंजना का सपना था कि वह डॉक्टर बनें, लेकिन जब गवर्नर्मेंट मेडिकल कॉलेज में उन्हें सीट नहीं मिली तो वह अत्यधिक निराश हो उठीं। लेकिन चूँकि उन्हें पढ़ने का अत्यधिक शौक था, इसलिए हार मानने के बजाय वह एक बार फिर से अपनी किस्मत आजमाने में जुट गई। हैदराबाद के वूमेंस कॉलेज से उन्होंने ग्रेजुएट की। वह पढ़ाई को लेकर इतनी सतर्क थीं कि उन्होंने बी.ए. की फाइनल परीक्षाओं के लिए अपने पाठ्यक्रम को चौदह बार पढ़ा। केवल पढ़ने में ही नहीं, वह अन्य विधाओं में भी पारंगत थीं। वह एक असाधारण वक्ता थीं और अंतर्विद्यालय वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेती थी।

पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन में पोस्ट ग्रेजुएट करने के लिए उन्होंने उस्मानिया यूनिवर्सिटी में दाखिला लिया। इस बीच उन्होंने ‘संगीत भूषण’ और ‘विशारद’ (हिंदी में) का कोर्स किया और कुछ समय के लिए भरतनाट्यम् व कथक भी सीखा।

जुड़ीं बैंकिंग क्षेत्र से

यह वह समय था, जब बैंक में महिलाओं की उपस्थिति लगभग नगण्य ही थी। वह जब पोस्ट ग्रेजुएशन कर रही थीं, उसी दौरान बैंक ऑफ इंडिया ने उनके सामने एक ऑफर रखा। उस समय रंजना कुमार की उम्र 20 वर्ष थी, लेकिन कॉरियर बनाने और बैंक जैसे क्षेत्र में कुछ कर दिखाने की इच्छा ने उन्हें अपने पोस्ट ग्रेजुएशन की बीच में ही छोड़ने पर मजबूर कर दिया।

असल में बैंकों में महिलाओं के काम न करने या उनकी अपेक्षा पुरुषों को तरजीह देने की बात उन्हें कचोट गई थी। स्वयं कभी लड़की होने के कारण माता-पिता द्वारा किसी तरह का अंतर न किए जाने के कारण और हर तरह की सुविधाएँ मिलने के कारण वह यह जानना चाहती थीं कि आखिर क्यों महिलाओं को इस क्षेत्र से दूर रखा गया है। महिलाएँ भी बखूबी बैंकिंग के काम को सँभाल सकती हैं, यही साबित करने के लिए वह बतौर प्रोवेशनरी ऑफिसर बैंक से जुड़ गई। बैंकों में प्रोवेशनरी ऑफिसर से आशय होता है कि उसे बैंक की विभिन्न शाखाओं में विभिन्न डेस्कों पर काम करना होगा, ताकि वह बैंकिंग के मूल स्वरूप को समझ सके।

मिलीं चुनौतियाँ

बैंक ऑफ इंडिया से जुड़ने के बाद रंजना कुमार के जीवन और कॉरियर दोनों वे ही करवट ली। पद की गरिमा बढ़ने के साथ-साथ प्रोफेशनल जीवन तथा निजी जीवन में भी चुनौतियों से उन्हें लगातार जूझते रहना पड़ा।

बैंक ऑफ इंडिया की विभिन्न राज्यों में स्थित विभिन्न शाखाओं व दफ्तरों में उन्होंने अलग-अलग पदों पर कार्य किया। बार-बार स्थानांतरण होते रहने के कारण अपने घर, परिवार और बच्चों से दूर रहना उनके लिए किसी चुनौती से कम नहीं था।

दूसरी ओर जैसे-जैसे पदोन्नति होती गई, वैसे-वैसे जिम्मेदारियाँ भी बढ़ती गई और काम का दबाव भी। ऐसे में परिवार की जरूरतों और बच्चों को पर्याप्त समय देना मुश्किल होना स्वाभाविक ही था। परिवार में रहने के कारण उनके ऊपर दायित्वों का भार भी अधिक था और व्यस्तता के कारण परिवार के हर सदस्य को खुश रखना संभव भी नहीं होता है।

वह मानती हैं कि महिलाओं के लिए आवश्यक है कि वे निजी व प्रोफेशनल जीवन को साथ-साथ लेकर चलने की कला सीखें।

‘महिलाओं के लिए बहुत सारी भूमिकाओं को निभाना कोई असंभव कार्य नहीं है, क्योंकि ये गुण उनके अंदर जन्मजात होते हैं। महिलाएँ पुरुषों की तुलना में कहीं अधिक मानसिक रूप से मजबूत होती हैं।’

नकारा नहीं उत्तरदायित्वों को

वैसे भी ’80 के दशक में कामकाजी महिलाओं के लिए घर से दूर रहकर काम करना आम बात नहीं थी, लेकिन तरक्की और पद के साथ बढ़ते उत्तरदायित्वों की वजह से इस बात को नकारना भी संभव नहीं होता था। अगर काम करना है तो समझौते भी करने होंगे, रंजना यही मानकर बिना कोई प्रतिवाद किए दूसरे शहरों में होनेवाले स्थानांतरणों को सहर्ष स्वीकार कर लेती थीं।

वह कहती हैं, “हमारे समाज में महिलाएँ कई भूमिकाएँ निभाती हैं। इन भूमिकाओं की सही समझ और जीवन के प्रति एक संतुलित दृष्टिकोण रखकर वे अपने जीवन के हर पहलू को संतुलित कर सकती हैं।”

और ऐसा ही रंजना ने भी किया। कई बार उनके पास इतना काम होता था कि वह घर देर से पहुँचतीं और उन्हें लगता कि वह परिवार को ठीक से ध्यान नहीं दे पा रही हैं। यही वजह है कि उन्हें आज भी इस बात का अफसोस है कि उन्हें अपने बच्चों के साथ पर्याप्त समय बिताने का मौका नहीं मिला। वह कहती हैं, “मैं घर पर भी काम लाती थी। यहाँ तक कि मेरी नाती तक जब छोटी थी तो कहती थी कि नानी बाहर काम नहीं करतीं, नानी घर में रहकर अपने नाती-पोतों के लिए कुकीज तैयार करती हैं। “वह इस समय अपने माता-पिता के साथ अमेरिका में है और मुझे उसकी बहुत याद आती है, पर मुझे इस बात की संतुष्टि है कि मेरे संपर्क में आने वाले हर व्यक्ति से मुझे प्यार व सम्मान मिला।”

विदेश की धरती पर

रंजना हमेशा ही व्यस्त रहा करती थीं। यहाँ तक कि कई बार ऑफिस में भी उनकी डेस्क पर फाइलों के ढेर लग जाते थे तो उन्हें लगता था, वह कहें कि ‘बस बहुत हो गया, मैं और नहीं कर सकती।’ लेकिन फिर हिम्मत बटोरकर वह स्वयं को समझातीं कि जीवन में बहुत सारे सामंजस्य करने की जरूरत होती है। उसके बाद वह फिर काम में जुट जातीं।

उनकी मेहनत, कर्मठता और काम के प्रति समर्पण कभी व्यर्थ भी नहीं गया। यही वजह थी कि उन्हें यू.एस. ऑपरेशंस के लिए चीफ एक्जीक्यूटिव के रूप में चुनकर न्यूयॉर्क भेजा गया। उनके लिए विदेश की धरती पर अपने बैंक का प्रतिनिधित्व करना बहुत ही कठिन था। असफल होना उन्हें बरदाश्त नहीं था, इसलिए अपने बैंक की साख मजबूत करने के प्रयास में वह जी-जान से जुट गई।

न्यूयॉर्क में रंजना की प्रतिभा को नए आयाम मिले। अंतरराष्ट्रीय कारोबारी जगत व बैंकिंग को सीखने-समझने का अवसर उन्हें मिला और इसका लाभ बैंक ऑफ इंडिया को मिलना स्वाभाविक ही था।

फेडरल रिजर्व की कड़ी सुरक्षा के बीच वह बीस साल पुराने बैंक ऑफ इंडिया के इतिहास में एजेंसियों से अमेरिका में मजबूत रेटिंग प्राप्त करने में सफल हो पाई। इसके अलावा उन्होंने बैंक पर अमेरिकी सरकार के कर विभाग द्वारा लगाए गए 2.53 अरब डॉलर काटकर भी रद्द करवा दिया।

चढ़ती गई कामयाबी की सीढ़ियाँ

उनकी कामयाबी से प्रसन्न हो उन्हें भारत लौटने पर एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर बना दिया गया और कुछ समय बाद उन्होंने केनरा बैंक के चेयरमैन व मैनेजिंग डायरेक्टर के रूप में कार्यभार सँभाला। लेकिन कामयाबी की राह एक बार जो खुली तो फिर तो जैसे नई दिशाएँ और दरवाजे खुद-ब-खुद उनके सामने खुलते गए।

उनकी कार्यशैली और निष्पादन करने का तरीका चर्चा का विषय बन गया। अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग के मापदंडों में उनकी असाधारण विशिष्टता होने के कारण उन्हें इंडो-हांगकांग इंटरनेशनल फाइनेंस लि. का प्रमुख बना दिया गया, जो केनरा बैंक के पास पूरी तरह से अधिकृत था।

जब सन् 2000 में रंजना ने इंडियन बैंक के चेयरमैन और मैनेजिंग डायरेक्टर का कार्यभार सँभाला तो लोगों को लगा था कि वह इस दायित्व को सँभाल नहीं पाएँगी, क्योंकि वर्ष 1995-96 से बैंक अत्यधिक नुकसान में चल रहा था। लेकिन रंजना ने तो जैसे असफल होने का पाठ सीखा ही नहीं था, इसलिए बहुत ही समझदारी से संतुलित रहते हुए उन्होंने स्थितियों को सँभाला। किसी को उम्मीद नहीं थी कि वह इतने धैर्य से स्थितियों को वश में कर लेंगी, इसलिए सबका चौंकना स्वाभाविक ही था।

जुट गई पुनरुद्धार में

झूबते हुए बैंक को उठाना लोगों की नजरों में किसी सजा से कम नहीं था, इसलिए उनके हितैषियों ने उन्हें समझाया कि इनाम पाने की अधिकारिणी के लिए यह दायित्व किसी सजा से कम नहीं है। लेकिन रंजना ने दृढ़ता से कहा कि अगर बैंक झूब रहा है तो क्या उसे मँझधार में झूबने दिया जा सकता है। फिर वह उसे पुनरुद्धार में जुट गई। उस समय बैंक का सकल घाटा (1,336 करोड़ रुपए) उसका संपूर्ण नेटवर्क निगल चुका था।

उन्हें बैंक की दशा सुधारने के लिए वित्त मंत्रालय से तीन वर्ष मिले थे, पर उन्होंने दो ही साल में नतीजे दिखा दिए। उन्होंने 'इंडियन बैंक के लिए एक टर्न अराउंड प्लान' बनाया, फिर स्टाफ को प्रेरित करके संस्था का ढाँचा बदला और खर्च घटाकर कार्य-क्षमता बढ़ाने की अपील की। उन्होंने बैंक को श्री टायर संगठन में तब्दील कर वहाँ काम करनेवाले लोगों की प्रबंधकीय निपुणता को सबके सामने लाने का अवसर दिया।

इस काम को अंजाम देने के लिए वह स्वयं बैंक की 1,376 शाखाओं के निरीक्षण पर निकल पड़ीं और प्रत्येक शाखा प्रबंधक को चुनौती दी कि वे अपना पैसा न झूबने दें। तब कर्जदारों के विरुद्ध बैंक स्टाफ ने जैसे एक मुहिम छेड़ दी। कर्जदारों को बुलाकर मूल धन प्राप्त करने के लिए समझौते किए जाने लगे। तीन वर्षों में 1,003 करोड़ रुपए कर्जदारों से वसूले गए। इससे बैंक का एन.पी.ए. घटकर मात्र 6.5 फीसदी रह गया।

टर्न अराउंड अभियान

अपने 'टर्न अराउंड' प्लान के दूसरे हिस्से के अंतर्गत स्टाफ की कार्यक्षमता को बढ़ाना रंजना का अब उद्देश्य था। इसके लिए उन्हें स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना लागू कर सालाना 80 करोड़ रुपए की बचत की। इससे 3,300 कर्मचारियों को फायदा पहुँचा।

वित्त वर्ष 2001-02 में बैंक ने छह साल बाद 33.22 करोड़ रुपए का मुनाफा कमाया तो केंद्र सरकार ने मार्च 2002 में पुनर्वित्त योजना के तहत 1,300 करोड़ रुपए की पहली किस्त जारी कर दी।

उनकी प्रबंधकीय क्षमता और सूझ-बूझ से प्रभावित होकर ब्रिटेन की 'इकोनॉमिस्ट' नामक पत्रिका ने तब उन्हें 'इंडिया की टर्न अराउंड क्वीन' का दर्जा दिया।

बढ़ी लोकप्रियता

रंजना की सुलझी हुई नीतियों ने बैंक को अपना बिजनेस फैलाने का प्रयास करने को प्रेरित किया। इसी के तहत बैंक ने इंश्योरेंस पॉलिसी वितरित करने के क्षेत्र में पदार्पण करने के

लिए एच.डी.एफ.सी. स्टैंडर्ड लाइफ के साथ गठबंधन किया। रंजना ने जो लोगों की कार्यशैली में पारदर्शिता और निपुणता जाग्रत् की थी, उसने भी बैंक को अपने नुकसान को पूरा कर लाभ की ओर अग्रसर किया।

बैंक ने ऋण पुनर्संरचना विभाग शुरू कर एक और पहल की। बैंक की स्थिति में आए इस आश्वर्यजनक बदलाव के कारण रंजना कुमार की लोकप्रियता इतनी बढ़ी कि उन्हें बैंक में कार्यरत लोगों को संबोधित करने के लिए श्रीलंका से निमंत्रण आया। यूनिवर्सिटी ऑफ वॉशिंगटन, सी.ए. उन्हें एक प्रोग्राम के तहत सीनियर इंटरनेशनल बैंकर्स को संबोधित करने के लिए आमंत्रित किया।

अलग ढंग का अनुभव

बरसों तक कमर्शियल (व्यावसायिक) बैंकों में काम करने और लगातार कामयाबी की सीढ़ियाँ चढ़ते हुए नाबार्ड (कृषि और ग्रामीण विकास राष्ट्रीय बैंक) में काम करना उनके लिए एक बिलकुल अलग ढंग का अनुभव था। लेकिन वह तो केवल बेहतर प्रदर्शन करने में यकीन रखती थीं, इसलिए वह उस ग्रामीण क्षेत्र से भी शिद्धत के साथ जुड़ गई।

रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर क्रिएशन उनकी मुख्य चिंता बन गई। नाबार्ड का उद्देश्य ही है कृषि वित्तयन को समर्थन व सहयोग देना। नाबार्ड संस्थागत कृषि साहूकारों को पुनर्वित्त प्रदान करता है। रंजना ने स्थानीय जरूरतों के अनुसार ग्रामीण स्तर पर बुनियादी सुविधाएँ उपलब्ध कराने के साथ किसानों को मुक्त मार्केटिंग की सुविधा प्रदान की, ताकि किसान व उपभोक्ता के बीच मध्यस्थता समाप्त हो सके, क्योंकि मध्यस्थ किसानों की कमाई का बड़ा हिस्सा बीच में ही हड़प लेते हैं। व्यावसायिक बैंकों की कार्यशैली से भिन्न ग्रामीण जनता से जुड़ना उनके लिए एक नई शुरुआत करने जैसा था। लेकिन रंजना तो जैसे बनी ही थीं नई पहल और नई चुनौतियों का सामना करने के लिए।

ग्रामीण स्तर पर योगदान

रंजना कुमार ने ग्रामीण स्तर पर अनाज और बीज बैंक की स्थापना कर किसानों को राहत पहुँचाई, साथ ही ऑर्गेनिक फार्मिंग को बढ़ावा दिया। रंजना 'मॉडल विलेज' का सपना साकार करने को प्रतिबद्ध थीं। उनकी सोच में साथ दिया नाबार्ड ने जिसने महिलाओं में उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिए सेल्फ-हेल्प ग्रुप बनवाए। रंजना के कार्यकाल में नाबार्ड ने एक एन.जी.ओ. का गठन भी इसी उद्देश्य से किया, ताकि महिलाएँ उसके माध्यम से अपनी समस्याओं का समाधान पा सकें।

नाबार्ड ने नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ फैशन टेक्नोलॉजी से एक अनुबंध किया, जिसके तहत इंस्टिट्यूट की छात्राएँ महिलाओं को डिजाइनिंग सिखाती हैं। रंजना ने नाबार्ड की अपनी कार्य-योजनाओं को ‘थिंक ग्लोबल, प्लान नेशनल एवं एक्ट लोकल’ कहा।

कामयाबी के सफर पर चलते-चलते आज वह इतनी दूर निकल आई हैं कि सन् 2005 में भारतीय सरकार के केंद्रीय सतर्कता आयोग का उन्हें आयुक्त बना दिया गया।

मिलते रहे सम्मान

हालाँकि बैंक ऑफ इंडिया को घाटे से उबारना या ग्रामीण लोगों के जीवन में सुधार करना रंजना के लिए किसी बड़े सम्मान से कम नहीं था, पर इसके अलावा भी उन्होंने बहुत से सम्मान अर्जित किए। के.जी. फाउंडेशन ने उन्हें ‘पर्सनैलिटी ऑफ डिकेड अवार्ड’, इंस्टिट्यूट ऑफ डायरेक्टर्स, नई दिल्ली ने ‘गोल्डन पीकॉक वूमैन बिजनेस लीडरशिप अवार्ड’ (2001) से सम्मानित किया। इसके अतिरिक्त रंजना कुमार को कई संस्थानों ने ‘बेस्ट प्रोफेशनल मैनेजर’ अवार्ड, ‘बेस्ट बैंकर’ अवार्ड से कई बार सम्मानित किया।

समाज-सेवा के लिए सन् 2004 में उन्हें ‘सद्गुरु ज्ञानानंद फिफ्थ नेशनल-अवार्ड’ भी प्रदान किया गया। वह कहती हैं, “जब भी मुझे कोई अवार्ड मिलता है तो मुझे है तो मुझे एहसास होता है कि मेरी जवाबदारी और बढ़ गई है, क्योंकि हर अवार्ड के साथ लोगों की अपेक्षाएँ बढ़ जाती हैं। मैं चाहती हूँ कि जितनी मजबूती के साथ मैं जमीन से जुड़ी रहूँ, उतना ही मजबूत हो मेरा मन व मस्तिष्क।”



राजश्री पैथी



चीनी की तरह मीठी एक यात्रा

चेयरपर्सन, राजश्री एंड केमिकल्स लि.

“मैं हयवृक्तीशॉट ऑफिस में बैठकर आर्ड.टी. जैक्स बिजनेस के लिए नहीं बनी हूँ। मुझे तो गन्नों के श्वेत अच्छे लगते हैं। किसानों से बात करना मुझे पसंद है। मैं बिना हिंदूक ऊंके घर चली जाती हूँ।”

एक तरफ लेखक पेओलो कोइलहो ने उन्हें कार्मिक संबंध का पाठ पढ़ाकर जीवन को पूरी शिद्धत से जीने की प्रेरणा दी तो दूसरी ओर स्वामी दयानंद सरस्वती ने उन्हें वेदांत के सिद्धांत सिखाए और ‘गीता’ पढ़कर सुनाई। उन्होंने सबसे मुश्किल परिस्थितियों में उनका मार्गदर्शन किया और हार मानने से रोका, उनके आत्मविश्वास को बढ़ाने में मदद की कॉन्फेडरेशन ऑफ इंडियन इंडस्ट्रीज के तरुण दास ने। अपने प्रेरकों और मार्गदर्शकों द्वारा दिखाई राह ने

एक छोटे से शहर की लड़की को बिजनेस लीडर बना दुनिया के सामने जब ला खड़ा किया तो उस लड़की को खुद अपनी उपलब्धियों पर सहजता से विश्वास नहीं हुआ।

नतीजे दिखाने की क्षमता

राजश्री पैथी एक ऐसी महिला उद्यमी हैं, जिन्होंने अपनी मिलनसार प्रवृत्ति, चतुराई और ऊर्जा सक्रियता से चीनी उद्योग को एक नए मुकाम पर ला खड़ा किया है। सन् 2001-02 में राजश्री ऐंड केमिकल्स लि. (आर.एस.सी.एल.) को 7.83 करोड़ का मुनाफा हुआ। जब बाजार में उन्होंने ऑर्गेनिक ब्रांड डेमेरारा चीनी उतारी तो उन्होंने कहा कि हम एफ.एम.सी.जी. में सबसे अग्रणी बनना चाहते हैं। राजश्री वह महिला हैं, जिनमें नेतृत्व करने, आदेश देने, हर नतीजे दिखाने की अदम्य क्षमता है।

कम्मा नायडू समुदाय, जो आंध्र प्रदेश से आकर कोयंबटूर में बस गया था, की चौथी पीढ़ी की उद्यमी राजश्री में बिजनेस और उसकी बारीकियों की समझ एक जन्मजात गुण है। इस समुदाय ने अनुसूचित जातियों व अनाथों के लिए चैरिटेबल अस्पताल व स्कूल बनाकर समाज की प्रगति में अमूल्य योगदान दिया है। उनके दादा पी.एस.जी. गंगा नायडू अपने समय के जाने-माने वस्त्र उद्योगपति थे और उनके पिता स्वर्गीय जी. वरदराज सामाजिक कार्यों से जुड़े रहने के लिए आज भी जाने जाते हैं। उनके दादा पी.एस.जी. नायडू ने सन् 1911 में एक जीनिंग फैक्टरी लगाई थी। उनके पिता वरदराज ने इस कारोबार को बढ़ाते हुए सन् 1957 में गंगा टेक्सटाइल लि. और 1980 में राजश्री स्पिनिंग मिल्स की स्थापना की। वह राज्य सभा के सदस्य भी थे।

अनुभव और सीख का समन्वय

बचपन से ही राजश्री को अलग-अलग क्षेत्रों से जुड़े लोगों से मिलने का मौका मिला। अपने घर आनेवाले लोगों के संपर्क में आने से उनकी सोच और अनुभव दोनों का ही विस्तार हुआ। अलग-अलग विचारों का जीवन में समन्वय कर कैसे अपनी दिशा तक पहुँचा जा सकता है, यह बात उन्हें बचपन में ही समझ आ गई थी। राजनेता, उद्योग जगत् की बड़ी-बड़ी हस्तियाँ और विदेशी राजदूतों से मिलवाते समय उनके पिता उन्हें विचार-विमर्श में हिस्सा लेने को प्रेरित करते, ताकि वह जिंदगी के विभिन्न पहलुओं को सीख सकें और समाज व दुनिया में क्या घट रहा है, इसकी जानकारी हासिल कर सकें।

उनके माता-पिता ने उन्हें और उनकी बहन को इस बात की छूट दी कि वह जीवन में जो करना चाहती हैं, करें। 54 वर्षीया राजश्री कहती हैं कि मेरी बहन जयश्री और मुझे हमारे

माता-पिता ने कभी यह एहसास नहीं दिलाया कि हम लड़कियाँ हैं और इसलिए किसी से कमतर हैं। यही वजह है कि जब तक हम बड़ी नहीं हो गई, हमें पता ही नहीं चला कि हमारे देश में लड़के-लड़की में भेद करना कितना गंभीर मुद्दा है।

उत्सुक मन

बचपन से ही हर चीज को जानने की उत्सुकता राजश्री को कई गतिविधियों में हिस्सा लेने को प्रेरित करती। इसी वजह से अगर उन्होंने टेनिस सीखा तो शास्त्रीय कर्नाटक संगीत और भरत नाट्यम का प्रशिक्षण भी लिया। उन्होंने पियानो बजाना सीखा और उसे बजाने में वह बहुत निपुण हो गई थीं। बहुत सी चीजों से जुड़े रहने के कारण उन्हें जिंदगी में कभी बोरियत या अकेलेपन का एहसास ही नहीं हुआ; क्योंकि व्यस्तता अगर मनपसंद चीजों से जुड़ी हो तो एक सुकून भी देती है। समय कैसे बीत जाता था, उन्हें पता ही नहीं चलता था। छुट्टियाँ गोआ के समुद्री तट, चर्च, मंदिरों को देखने और खाने-पीने एवं मौज-मस्ती में गुजर जाती थीं। अकसर उनका परिवार भारत-भ्रमण के लिए लॉग ड्राइव पर निकल जाता था। उनके लिए जीवन चुनौतियों-रहित एक ऐसी यात्रा रही, जिसमें पक्षियों की उड़ान जैसा सुख था तो समुद्र का अथाह बहाव भी था।

वह 18 वर्ष की भी नहीं हुई थीं, जब उनका विवाह हो गया। स्वतंत्र विचारों के उनके पिता ने बेशक अपनी बेटियों को इस बात की आजादी दी थी कि वे जैसा चाहे जीवन जी सकती हैं और अपने निर्णय ले सकती हैं, पर इसके बावजूद वह यह भी मानते थे कि एक महिला के लिए किसी बाहरी कार्यक्षेत्र में काम करने के साथ-साथ पूरी जिम्मेदारी के साथ पत्नी व माँ की भूमिका निभाना अत्यंत आवश्यक है। लेकिन वह यह जानते थे कि राजश्री न सिर्फ एक पत्नी व माँ के दायित्व को बखूबी निभाने की क्षमता रखती हैं, वरन् परिवार के बिजनेस को भी इतना आगे ले जाने की योग्यता रखती हैं, जिससे यह बात गलत साबित हो सके कि केवल बेटे ही ऐसा कर सकते हैं।

सपने को किया साकार

ग्रेजुएशन खत्म करने के बाद कोयंबटूर में साउथ इंडिया टेक्सटाइल रिसर्च एसोसिएशन से कॉटन सैंपलिंग और कॉटन स्पिनिंग की बारीकियाँ सीखने में जुट गईं। सबसे बड़ी बेटी होने के नाते परिवार के वस्त्र उद्योग से उन्हें जुड़ना ही होगा, यह तय था। इसलिए कॉमर्स में डिग्री हासिल कर अपनी बहन के साथ उद्योग में पिता की मदद करने लगीं।

जब उनके पिता राज्यसभा के सदस्य बनने के कारण दिल्ली चले आए तो उस समय वह मात्र 24 वर्ष की थीं और उन्होंने तब तक वस्त्र कारखानों को सँभालना शुरू कर दिया था। पुराने कारखाने को स्वतंत्र रूप से सँभालते हुए उन्होंने जल्दी ही एक नई टेक्सटाइल मिल खोल ली। उनके पिता की विकासात्मक गतिविधियों में दिए गए योगदान को देखकर राज्य सरकार ने उन्हें सन् 1989 में चीनी फैक्टरी लगाने की अनुमति दे दी। अंडीपट्टी (तमिलनाडु के दक्षिणी क्षेत्र के पिछड़े इलाकों में) में आर्थिक समृद्धि लाने के उद्देश्य से फैक्टरी को लगाया गया। राजश्री ने इस चुनौती को बहुत खुशी से स्वीकारा, हालाँकि उस समय वह अपने दूसरे बच्चे को जन्म देने वाली थीं। उसी अवस्था में वह अपने व पिता के सपने को आकार देने में जुट गई। उन्हें इस बात की खुशी है कि तमिलनाडु के जिस पिछड़े क्षेत्र अंडीपट्टी में उन्होंने चीनी मिल स्थापित की थी, वह अब एक खुशहाल औद्योगिक क्षेत्र की शक्ल ले चुका है। वह पल उनकी जिंदगी का सबसे सुखद था, जब वहाँ के एक किसान ने उनसे कहा कि आपने तो हमें भी करोड़पति बना दिया है। राजश्री उसे ही अपनी सबसे बड़ी उपलब्धि मानती हैं।

नई फैक्टरी में काम और अपने दो छोटे बच्चों की देखभाल करने के कारण उन्हें बिजनेस की औपचारिक पढ़ाई करने का अवसर नहीं मिला था। इसलिए सन् 1994 में एजीक्यूटिव में तीन वर्षीय प्रोग्राम को करने के लिए उन्होंने हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में दाखिला ले लिया।

आसान नहीं था दायित्व सँभालना

यूरोप में एक बिजनेस डेलीगेशन का प्रतिनिधित्व करने के दौरान उनके पिता की 52 वर्ष में मृत्यु हो गई। पिता की मृत्यु के बाद माँ भी उनका साथ छोड़ गई। अचानक राजश्री का जीवन ठहर सा गया। लेकिन उनके सामने खड़ी जिम्मेदारियों ने उन्हें सँभालने के लिए बाध्य किया और समूह के चेयरमैन की खाली हुई गद्दी उन्हें सँभालने के लिए इस कभी न मिटनेवाले दर्द को दिल के किसी कोने में छुपाने के लिए मजबूर होना पड़ा। लेकिन उस दायित्व को सँभालना उतना आसान नहीं था जितना कि एक पुत्री होने के नाते होना चाहिए था। ऐसा इसलिए, क्योंकि परिवार के लोग ही नहीं, उनके सहयोगी व कर्मचारी भी उनकी क्षमताओं को लेकर आशंकित थे। उन्हें लगता था कि पिता की बरसों से कमाई साख अब उनके आने से कहीं मिट्टी में न मिल जाए। उन्हें जितनी नकारात्मक प्रतिक्रिया मिलती गई, वह सफल होने के लिए उतनी ही कठिबद्ध होती गई और उन्होंने सफल होकर दिखा भी दिया।

जब से राजश्री ने कंपनी का भार सँभाला, तब से उस वार्षिक टर्नओवर सात गुना बढ़ा है। सन् 1990 में जो टर्नओवर 60 करोड़ था, वह 2003 में 400 करोड़ पहुँच गया। लेकिन वह

वहींरु ककर अपनी सफलता के पायदान को सीमित नहीं करना चाहती थीं, इसलिए उन्होंने वियतनाम में चीनी फैक्टरी लगाने का निर्णय किया। हालाँकि उस प्रोजेक्ट को क्रियान्वित होने में तीन वर्ष लग गए, पर वह अपने निर्णय से पीछे नहीं हटीं।

पिछले 19 वर्षों से राजश्री ग्रुप के टेक्स्टाइल, कृषि, फूड्स, कॉटन यार्न, एनर्जी, अचल संपदा, ऑटोमोटिव ट्रैवल्स व फाइनेंस कारोबार का अकेले संचालन करते हुए राजश्री पैथी ने दुनिया को यह दिखा दिया है कि अगर महिला चाहे तो वह अपनी महत्वाकांक्षाओं को पंख दे सकती है। वह अपने आत्मविश्वास और दृढ़ता के बल पर बड़ी-बड़ी चुनौतियों का सामना कर सकती है।

किया विश्वास निर्मित

राजश्री के लिए किसी उद्योग को चलाने का अर्थ है विश्वास व समन्वय निर्मित करना। वह मानती हैं कि जब तक आप लोगों के साथ व्यवहार करने में एक न्यायोचित दृष्टिकोण रखते हैं, सफलता की राह में बाधाएँ नहीं आतीं। सन् 1996 में वर्ल्ड इकोनॉमिक्स फोरम ‘डेवोस’ (स्विट्जरलैंड) ने उन्हें ‘ग्लोबल लीडर्स ऑफ टुमारो’ से सम्मानित किया। वर्ष 2004-05 के लिए इंडिया शुगर मिल्स एसोसिएशन के प्रेसीडेंट के रूप में चयनित राजश्री शुगर एसोसिएशन की अध्यक्षता संभालने वाली पहली महिला हैं। इस कार्यकाल में उन्होंने भारत में एथोनाल ब्लेडेड ऑटो प्यूल का चलन बढ़ाने के लिए भारत सरकार को राजी किया। उनकी दलील थी कि इससे सरकार का क्रूड ऑयल का आयात खर्च घटेगा और इको फ्रेंडली ईर्धन का उपयोग बढ़ने से जन साधारण को भी लाभ मिलेगा। उन्हीं के प्रयासों के कारण भारत सरकार ने इथोनाल प्रोग्राम को योजना आयोग के एजेंडे में शामिल किया।

सन् 2007-09 के लिए दुबारा फिर से उन्हें चयनित किया गया। सी.आई.आई. नेशनल कमेटी ऑफ वूमैन एंपावरमेंट की एक सक्रिय सदस्या राजश्री का मानना है कि वैश्वीकरण के युग में महिलाओं को काम करने के बेहतरीन अवसर मिलेंगे। वह कहती हैं, “बिजनेस के क्षेत्र में अपना कैरियर न बनाने की महिलाओं के पास दो ही वजहें होती हैं। सबसे पहले तो उनमें ऐसा करने की इच्छा नहीं होती है और उनका परिवार ऐसा कोई काम, जिसमें हर तरह से जोखिम होता है, करने को प्रोत्साहित नहीं करता बल्कि डराता ही रहता है। महिलाओं को यह समझना होगा कि किसी बिजनेस को चलाने के लिए मानसिक, भावनात्मक समर्थन व शारीरिक क्षमता की आवश्यकता होती है। आप महिला हैं या पुरुष, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है, क्योंकि बैलेंस शीट और शेयरधारक यह नहीं देखते, बल्कि लाभ को देखते हैं। इसलिए आप महिला हैं, यह सोचकर बिजनेस से दूर रहना अपनी शक्तियों को न पहचानना और चुनौतियों से पलायन करने जैसा ही होगा।”

जीवन-दर्शन

बिजनेस के क्षेत्र में अपने विश्वास और शर्तों के साथ, अडिगता के साथ खड़ींराजश्री पैथी बहुभाषी ज्ञाता भी हैं। अंग्रेजी के अलावा वह फ्रेंच, तेलुगु और तमिल भी धाराप्रवाह बोल व लिख सकती हैं। समकालीन कला की पैरवी करने वाली राजश्री कला व संस्कृति संबंधी पुस्तकें पढ़ने का भी शौक रखती हैं।

वह पिछले 26 वर्षों से पीए डीएल-प्रमाणित स्कूबा डाइवर हैं। फोटोग्राफी, घूमने, तैरने और दोस्तों के साथ मौज-मस्ती करने की शौकीन राजश्री का जीवन-दर्शन है—“शारीरिक, भावनात्मक व आर्थिक स्वतंत्रता का अर्थ है एक पूरी दुनिया को पा लेना। ये मुझे अपने विश्वास के साथ जीने की ताकत देते हैं, भयर-हित सोच रखने और निर्धारित सीमाओं को पार करने की ताकत देते हैं, ताकि मैं उन महिलाओं की आवाज बन सकूँ, जो अपने दिल की बात कहने से डरती हैं, ताकि मैं कमज़ोर लोगों की मदद कर सकूँ, बिना माँगे उनकी आवश्यकताओं को पूरा कर सकूँ... स्वतंत्रता का अर्थ है बिना झूठ को जिए जीना।”

कला-प्रेमी

दो बच्चों—बेटे आदित्य व बेटी ऐश्वर्या—की माँ राजश्री के लिए ताकत का अर्थ है देने की क्षमता। कला के प्रति गहन प्रेम उन्हें अपनी माँ से मिला। 17 वर्ष की उम्र में एम.एफ. हुसैन की पेटिंग खरीदने से आरंभ हुआ कलात्मक चीजों को संगृहीत करने का सिलसिला आज भी कायम है। कोयंबटूर के सेंटर फॉर परफॉर्मेंस आर्ट्स से जुड़ी राजश्री युवा कलाकारों, खासकर ग्रामीण कलाकारों, को प्रोत्साहित करती हैं।

आयुर्वेद और होलिस्टिक हीलिंग ने उन्हें ‘कामा आयुर्वेद’ नामक प्राकृतिक सौंदर्य उत्पादों की शृंखला को बाजार में उतारने के लिए प्रेरित किया। सुप्रसिद्ध ग्राफिक्स एवं प्रोडक्ट डिजाइनर विवेक साहनी के साथ सन् 2002 में उन्होंने कामा आयुर्वेद नामक कंपनी लॉज्च की। वह एक ऐसी महत्वाकांक्षी उद्यमी हैं, जो न तो ग्लास सीलिंग के विरुद्ध शोर मचानेवाली फेमिनिस्ट हैं, न ही रिटायर्ड हाउसवाइफ। जीवन भर एक सामान्य सोच और उच्च महत्वाकांक्षा के साथ छोटे शहर की उद्यमी होने पर उन्हें गर्व है, पर उन्हें जुनून है तो बस चीजों को सही ढंग से करने का।



रितु कुमार



फैशन व वस्त्र-डिजाइन की दिशा बदली

फैशन डिजाइनर

“जो भी चीजें बेहतरीन डिजाइनों से तैयार की जाती हैं वे सारी स्मीमाओं को, चाहे वह भौगोलिक हों या सांस्कृतिक, पार कर जाती हैं।”

रितु कुमार भारतीय फैशन इंडस्ट्री का पर्याय हैं, जिन्होंने परंपरा व आधुनिकता का सम्बन्ध कर फैशन की दुनिया में राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय फलक पर अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाई है।

उन्होंने उस समय भारतीय पारंपरिक वस्त्र विरासत को पुनः उसका खोया हुआ गौरव दिलवाया, जब प्लास्टिक और नायलॉन के कपड़ों का चलन था। देश की प्राचीन समृद्ध हस्तशिल्प कला को उन्होंने भविष्य के लिए पुनः गढ़ने का बीड़ा उठाया और इसमें सफल भी हुई।

आगे बढ़ता सफर

लगभग 40-42 वर्ष पहले डिजाइनर रितु कुमार का शुरू हुआ सफर आज भी फैशन जगत् में अपने मानक सिद्ध करता हुआ बहुत तीव्र गति से आगे बढ़ रहा है। उनके कॉस्ट्यूम्स, ब्राइडल वेयर और ईवनिंग ड्रेसेस ने कई मिस इंडिया प्रतियोगिताओं की शोभा बढ़ाई है और अंतरराष्ट्रीय मंच पर उन्हें सम्मान दिलवाया है। फैशन शो में रैप पर उनके परिधानों को देख तालियों की गूँज बढ़ जाती है।

वह एक ऐसी डिजाइनर हैं, जिन्होंने भारतीय हस्तकला को अपने परिधानों के ताने-बाने में बहुत खूबसूरती से संयोजित कर उसे न केवल पुनर्जीवित कर केवल राष्ट्रीय वहन अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी एक पहचान दिलवाई है। कलात्मक व पारंपरिक नमूनों को परिधानों में उतारकर उन्हें आधुनिक शैली के साथ समन्वित करने और नए-नए प्रयोग करने में महारत हासिल करनेवाली रितु कुमार द्वारा डिजाइन किए गए परिधान फिल्मी सितारों से लेकर सोशलाइट के वार्ड्रोब की शोभा बढ़ा रहे हैं। स्वर्गीय प्रिंसेस डायना तक उनके लेबल की दीवानी रही हैं।

तल्लीनता से किया हर काम

11 नवंबर, 1944 को अमृतसर, पंजाब में जनमी रितु के माता-पिता लीला व पूरन मेहता मूलत : पाकिस्तान के थे और इस बात को समझते थे कि लड़कियों के लिए शिक्षा की कितनी अनिवार्यता है। यहीं वजह थी कि न तो उनके परिवार में लड़कियों पर किसी तरह की रोक थी, न ही भेदभाव किया जाता था। यहीं कारण था कि उस जमाने में भी रितु को अमेरिका जाकर पढ़ने का अवसर मिला। रितु का परिवार पंजाब के अमृतसर में रहा और कुछ समय के लिए कश्मीर में भी; पर ऐसे क्षेत्रों में जहाँ अच्छे स्कूल नहीं थे और वह समय भी ऐसा था, जब लड़कियों का स्कूल जाना आवश्यक नहीं माना जाता था। पर उनका परिवार खुली सोच और सांस्कृतिक रूप से समृद्ध था। अपने स्कूली दिनों में रितु बहुत तल्लीनता से पढ़ती हों, ऐसा नहीं था, पर मौज-मस्ती भरपूर करती थीं। लेकिन उनकी खासियत यह थी कि वह जिस भी काम को हाथ में लेती थीं, उसे पूरी तल्लीनता से पूरा करने में जुट जाती थीं। संयुक्त परिवार में पली-बढ़ी रितु की स्कूली शिक्षा बोर्डिंग स्कूल में हुई, क्योंकि शहर में कोई अच्छा स्कूल न होने का कारण उनके पिता ने ही उन्हें बोर्डिंग भेजा, ताकि उसे बेहतरीन शिक्षा मिल सके। रितु आर्ट्स का अध्ययन करना चाहती थीं, खासकर इतिहास लेकर, पर उनके माता-पिता चाहते थे कि वह पंजाब यूनिवर्सिटी से साइंस विषय लेकर पढ़ें; क्योंकि उस विभाग में अनुशासन अधिक था। वैसे भी वे नहीं चाहते थे कि बोर्डिंग में पढ़ी उनकी बेटी फिर से पढ़ने किसी ऐसे शहर में जाए। सबसे

अच्छी बात तो यह हुई कि विज्ञान और गणित विषय लेकर भी उन्होंने यूनिवर्सिटी में सबसे ज्यादा अंक प्राप्त किए, बल्कि दोनों ही विषय उन्हें नापसंद थे। लेकिन जब विषय ले ही लिये हैं तो बेहतर प्रदर्शन करना आवश्यक है, यही ठानकर वह तन्मयता से पढ़ाई में जुट जाती थीं।

खुला नया अध्याय

पंजाब यूनिवर्सिटी से सीधे दिल्ली आकर रितु ने लेडी इरविन कॉलेज में एडमिशन लिया। वह कहती हैं, “होम साइंस पढ़ने के लिए मुझे यहाँ भेजा गया था, जो बहुत ही उबाऊ विषय था; पर जैसे भाग्य मुझे यहाँ खींच लाया था। तभी तो कॉलेज के एक्सचेंज स्कॉलरशिप प्रोग्राम द्वारा मुझे न्यूयॉर्क में बारीएर क्लिफ मेनर में पढ़ने के लिए स्कॉलरशिप मिल गई। यहाँ से वास्तव में मेरे अध्ययन की शुरुआत हुई और मेरे जीवन को नई दिशा व गति भी मिली।” यहाँ उन्होंने कला और नाटक का इतिहास पढ़ा, जिसने उनके भविष्य में नया अध्याय जोड़ने में मदद की।

रितु जब भारत लौटी तो वह इतना तो समझ चुकी थीं कि उन्हें अपने देश और उसकी सांस्कृतिक धरोहर के बारे में कुछ भी ज्ञान नहीं है। उसके समृद्ध अतीत से वह अनजान थीं। यही वजह है कि रितु ने अपने जीवन का लंबा समय पुरानी सदी के हस्तशिल्प का अध्ययन करने में बिताया है। बुनकरों, कपड़ा रँगनेवाले, छपाई और कढ़ाई करनेवालों के बीच रहकर भारत की सभ्यता को उन्होंने जाना। जितना वह भारत के छोटे-छोटे गाँवों में गई उतना उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि कैसे भारत की कला की अमूल्य धरोहर की उपेक्षा हो रही है। अगर इसी तरह चलता रहा तो सब मिट जाएगा। यही सोचकर वह उसे पुनर्जीवित करने के प्रयास में जुट गई। राजसी जीवन-शैली, खासकर मुगल राजाओं की शैली से प्रभावित रितु ने राजाओं व रानियों के परिधानों का गहराई से अध्ययन किया। ढाका की मलमल, वाराणसी की ब्रोकेड, कश्मीर की ऊनी बुनाई और लाहौर की बारीक जरी की कढ़ाई सबको अपनी पारखी नजरों से समझा और फिर नए-नए पहनावों में ढाल एक राजसी लुक पेशकर अपना एक खास मुकाम बनाया है।

इतिहास और कला में अध्ययन

भारत लौटने के बाद उन्होंने शशि कुमार से विवाह कर लिया, जिनसे उनका परिचय अपने कॉलेज के दिनों में हुआ था। विवाह के बाद वह कोलकाता चली गई। वहाँ उन्हें एक साहित्यिक माहौल मिला, जिसने उन्हें कलकत्ता यूनिवर्सिटी से भारतीय इतिहास और कला में कोर्स करने को प्रेरित किया। वास्तव में कोर्स का संबंध म्यूजियोलॉजी से था, यानी

म्यूजियम में प्रदर्शित वस्तुओं को समझना। इसमें उन्हें मूर्तिकला, चित्रकला और विभिन्न हस्तशिल्पों जैसी विविध कला के रूपों का अध्ययन करने का अवसर मिला। यह एकमात्र ऐसा कोर्स था, जो आशुतोष म्यूजियम द्वारा करवाया जाता था, क्योंकि उसके कॉलेज में म्यूजियम था। इस दौरान उन्हें उन शिल्पकारों के बारे में पता चला, जो पश्चिम बंगाल में लोककला के विभिन्न माध्यमों में काम करते थे।

जैसे-जैसे म्यूजियोलॉजी विषय का गहन अध्ययन करती गई, यही प्रश्न वह अपने आपसे पूछते हुई पातीं कि भारत में कला और शिल्प के स्तर को सुधारने के लिए हम क्या कर सकते हैं? जब उन्होंने यह बात अपनी गुरु कमला देवी चट्टोपाध्याय को बताई तो उन्होंने कहा कि अगर कोई इस स्थिति को सुधारने का कार्य नहीं करना चाहता तो तुम क्यों नहीं यह दायित्व ले लेतीं? गुरु के शब्दों ने तो जैसे रितु की जिंदगी ही बदल दी।

कला व इतिहास के तंत्र को बेहतर ढंग से समझने के लिए वह इसी दौरान वह पुरातत्त्व प्रोजेक्ट्स पर भी काम करने लगीं। इससे उन्हें यह पता चला कि प्राचीन स्थलों से किस तरह डेटा को संसाधित किया जाता है।

ऐसे हुई शुरुआत

इतना अध्ययन करने के बाद और भारतीय पारंपरिक विरासत की महत्ता को समझने के बाद रितु के लिए हाथ-पर-हाथ रखकर बैठना असंभव था। वह कुछ ऐसा करना चाहती थीं, जिससे सबके भारतीय हस्तकला का मूल्य समझ आ जाए और वे उसका प्रयोग करने लगें।

सन् 1960 के उत्तरार्ध में भारत एक व्यापक बदलाव के दौर से गुजर रहा था। प्लास्टिक ने मिट्टी, काँसे और चाँदी का स्थान ले लिया था। फैक्टरियों में कागज का उत्पादन हो रहा था और नायलॉन ने कॉटन व सिल्क की प्राचीन विरासत को पीछे छोड़ दिया था। उस समय न केवल परंपरा व आधुनिकता के बीच जंग छिड़ी हुई थी, बल्कि जीवन-शैलियों व मूल्यों के बीच भी द्वंद्व चल रहा था। इसी समय रितु, जो गहराई से भारतीय हस्तशिल्प व कला का अध्ययन कर चुकी थीं, उसकी पुरानी विरासत को फिर से दुनिया के सामने लाने के लिए प्रतिबद्ध हो गई। जड़ों की ओर लौटने की उनकी चाह ने ही उन्हें भारत के छोटे-छोटे गाँवों में घूमकर बुनकरों से मिलने व उनके शिल्प को सम्मान दिलाने को प्रेरित किया, जिन्हें पश्चिम के अंधानुकरण की वजह से भारतीय भूलते जा रहे थे। शिल्पकारों की जीविका जिस कला से चलती थीं, उसे दुनिया के सामने लाकर उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार

करने की ठान रितु ने भारतीय विरासत को अँधेरों से निकालकर रोशनी में लाने की अपनी यात्रा आरंभ की।

साथ ही शिल्पकारों की जिंदगी में भी सुधार आए। कोलकाता के पास एक छोटे गाँव में चार ब्लॉक प्रिंटरों और दो मेज डालकर काम आरंभ किया। उस स्टोर का किराया 150 रुपए था। छोटे पैमाने पर की शुरुआत उन्हें अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाएगी, यह बात संभवतः उस समय रितु ने भी नहीं सोची होगी। धीरे-धीरे उन्होंने कॉटन, सिल्क और लेदर में कुछ असाधारण परिधान व एक्सेसरीज तैयार कीं। इनमें भारतीय डिजाइन, संस्कृति और पारंपरिक वस्त्र कला का समन्वय बहुत खूबसूरती से किया गया था। इससे उन्होंने यह साबित कर दिया कि मशीनों द्वारा निर्मित चीजों की अपेक्षा हाथ से बने उत्पाद ज्यादा परिष्कृत लगते हैं।

एक दिन भाग्य ने जैसे उनकी किस्मत का दरवाजा खटखटाया। उन्हें 2000 स्कार्फ बनाने का ऑर्डर मिला। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि अपने पहले विदेशी ग्राहक की इस माँग को वह कैसे पूरा करें, क्योंकि विभिन्न गाँवों के हस्त-शिल्पियों से उन्हें काम करवाना पड़ता था और उसमें बहुत समय लगता था। इससे पहले इतना बड़ा ऑर्डर उन्हें पहले कभी नहीं मिला था। तब उनके पति ने उनकी मदद करने का फैसला किया और उसके बाद तो दोनों के लिए पीछे मुड़कर देखने का सवाल नहीं था। वही काम उन दोनों के लिए कैरियर बन गया और उसके बाद जन्म हुआ ‘रितूज बुटीक’ का।

भारत में लगभग 38 साल पहले ‘बुटीक कल्चर’ की शुरुआत करनेवाली वह पहली महिला भी हैं।

स्थापित किया ब्रांड

रितु के ब्रांड की खासियत ही है पारंपरिक भारतीय परिधान तैयार करना जिसमें भारी कढ़ाई और जरदोजी वर्क किया गया होता है। उनके इंडो-वेस्टर्न प्यूजन वेयर ने भी फैशन जगत् में हलचल मचाई। उन्होंने ब्लॉक प्रिंट्स, एंब्रायड्री शिल्प को पश्चिमी शैली में उकेरा।

वक्त के साथ पारंपरिक हस्तकला का समकालीन प्रस्तुतीकरण उनकी पहचान बन गया और वह भारतीय पारंपरिक हस्तकला को एक ब्रांड के रूप में सम्मान दिलवाने में सफल हो गई। उन्होंने भारत के छोटे-छोटे कस्बों में रहनेवाले 1,60,00 हस्तशिल्पियों को काम करने का अवसर प्रदान किया और रितु की प्रेरणा मिलते ही उनकी अंगुलियाँ फिर कपड़े में चमत्कार बुनने लगीं।

रितु की डिजाइन फिलॉसफी इस बात पर आधारित है कि जो भी चीज बेहतरीन डिजाइनों से तैयार की जाती है, वह सारी सीमाओं को, चाहे वे भौगोलिक हों या सांस्कृतिक, पार कर जाती है। वह कहती हैं, “अंग्रेजी शासन के दौरान और बाद में राजसी परंपराओं को हमने खो दिया था और उसके साथ ही राजसी पहनावा व परंपरा भी लुप्त हो गई थी, जो शुरुआती दौर से ही भारतीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने का जरिया थी। न सिर्फ महाराजाओं के साम्राज्य एक प्रजातांत्रिक राज्य में विलय हो गए थे, बल्कि शिल्पकारों की सृजनात्मक निपुणताएँ, जो पीड़ियों से विरासत में सौंपी जा रही थीं, उनका भी विलय हो गया था।”

आजाद भारत के लिए उन निपुणताओं का खो जाना सबसे बड़ा ऐतिहासिक नुकसान था। लेकिन रितु ने पुराने शिल्प, बुनकरों, रँगने की कला और सूती फैब्रिक को अपने डिजाइनों में ढालकर संरक्षण प्रदान किया।

पहली प्रदर्शनी

प्रिंट्स की तलाश में वह बार-बार राजस्थान, उत्तर प्रदेश और दिल्ली आती-जाती रहीं, पर कोलकाता से उनका नाता नहीं टूटा। उन्हें यह देखकर बहुत धक्का पहुँचा कि विभिन्न क्षेत्रों या संस्कृति से जुड़े छपाई, बुनाई या कढ़ाई के डिजाइनों का कोई भी कागजी प्रमाण उपलब्ध नहीं है। वर्षों की अथक प्रयासों के बाद भारत के विभिन्न जिलों व कस्बों से अमूल्य चीजें उन्हें प्राप्त हुईं जिनके नाम तक कोई नहीं जानता था।

दिल्ली में वह पुपुल जयकर, राजेश ठाकोर, राजीव सेठी जैसे लोगों के संपर्क में आई, जो अपनी जड़ों की तलाश में जुटे थे। रितु की रुचि खासतौर पर क्लासिकल फैब्रिक में थी।

भारत ने प्रतिष्ठित प्रिंट स्कूलों के डिजाइनों का इस्तेमाल कर बनाई गई साड़ियों की रितु की पहली प्रदर्शनी कोलकाता में हुई। 30 में से वह केवल 12 साड़ियाँ ही बेच पाई तो उन्हें अपनी भूल का एहसास हुआ कि कोई भी अपनी हैंडलूम कॉटन की साड़ी पर फरुखाबाद बेड कवर पर छपे प्रिंट्स को देखना पसंद नहीं करता है। वह अठारहवीं सदी की औरत के लिए उपयुक्त था, पर अब की महिला के लिए नहीं।

डिजाइनर के रूप में रितु को मिला वह पहला सबक था कि अठारहवीं सदी के नमूने, दूरियाँ व डिजाइनों का प्रयोग तो करो, पर आधुनिक शैली में। उसके बाद वह परंपरा का आधुनिकता के साथ समन्वय करने में जुट गई और बहुत जल्दी ही उनके पास तैयार कपड़ों का संग्रह तैयार हो गया, पर सवाल उठा कि उसे कैसे बेचा जाए। क्योंकि तब सिले-सिलाए

कपड़ों का चलन ज्यादा नहीं था, खासकर कोलकाता जैसे शहर में। तब उन्होंने पार्क स्ट्रीट में फैशन शो आयोजित किए। उनकी यह कोशिश रंग लाई और कोलकाता के लोग उनके डिजाइनों की ओर आकर्षित हुआ।

फैलाया परंपरा को

सन् 1970 में रितु ने एक फैशन शो आयोजित किया, जिसने 40 तरह के स्टाइलिश लेकिन सस्ते आउटफिट्स प्रस्तुत किए गए। मीडिया में इस शो के बहुत चर्चे हुए। उसी वर्ष रितु ने मुंबई में अपने अन्य दो बुटीक खोले। साड़ियों के अलावा उसमें शहरी युवा के लिए रेडी-टू-वोचर कलेक्शन भी रखा गया, जिसे काफी पसंद किया गया।

धीरे-धीरे रितु ने जरदोजी, वेजीटेबल पिंटिंग, पैंटिंग, टाई-ऐंड-डाई, कशीदा, कांथा जैसे पारंपरिक भारतीय शिल्पों को भी पुनर्जीवित कर परिधानों में ढाला। उन्होंने बल्लभगढ़ में एक प्रिटिंग यूनिट खोला, जिनमें आधुनिक स्क्रीन-प्रिटिंग तकनीकों का इस्तेमाल किया। धीरे-धीरे मीडिया और समाज की विशिष्ट हस्तियों के बीच रितु चर्चा का विषय बनने लगीं।

पश्चिमी परिधानों को तैयार कर वह उन्हें यूरोप ले गई और तब उन्होंने देखा कि यूरोप के देश भारत के वस्त्रों और कला के बहुत दीवाने हैं। हजारों शिल्पकारों को जीविका उपलब्ध करानेवाली रितु के एक शिल्पी को 1988 में हैंड-ब्लॉक प्रिटिंग के शिल्प में उत्कृष्टता के लिए राष्ट्रपति से अवार्ड भी मिला।

उन्होंने फैशन की दुनिया को नए सिरे से परिभाषित तो किया ही है, साथ ही यह भी दिखा दिया कि हाथ से बनी चीजें मशीन से बनी चीजों से कहीं अधिक ग्लैमर्स होती हैं और दुगुना लाभ भी देती हैं।

सम्मान की सही हकदार

इस समय भारत के सारे प्रमुख शहरों में रितु के आउटलेट्स हैं। उन्होंने एक पुस्तक भी लिखी है—‘कॉस्ट्यूम्स ऐंड टेक्सटाइल ऑफ रॉयल इंडिया’, जिसे लंदन के क्रिस्टीज ने प्रकाशित किया है।

सन् 1994 से मिस इंडिया, मिस यूनिवर्स, मिस वर्ल्ड, मिस एशिया पैसेफिक जैसी प्रतियोगिताओं के लिए परिधान तैयार करने का मौका रितु को मिला है। कई बार उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों में ‘मोस्ट आउटस्टैंडिंग इवनिंग गाउन’ के लिए अवार्ड जीते।

उन्होंने अंतरराष्ट्रीय स्तर की 35 प्रतियोगिताओं के लिए परिधान तैयार किए, जिनमें प्रियंका चौपड़ा, दिया मिर्जा, डायना हेडन, सेलीना जेटली, तनुश्री दत्ता और नेहा धूपिया शामिल हैं। सुष्मिता सेन और ऐश्वर्या राय उन्हीं की डिजाइन साड़ियाँ पहनती हैं।

सन् 2002 में उनका छोटा बेटा अमरीश उनसे जुड़ गया और उन्होंने ‘लेबल’ नामक ब्रांड पेश किया। इस ब्रांड के अंतर्गत युवा भारतीय महिलाओं के आधुनिक जीवनशैली के अनुरूप परिधान तैयार किए जाते हैं।

उन्हें अनेक संगठनों ने समय-समय पर सम्मानित किया। एन.आई.एफ.टी. ने उन्हें ‘लाइफस्टाइल अचीवमेंट’ अवार्ड से सम्मानित किया तो पी.एच.डी.सी.सी. ने आउटस्टैंडिंग वूमैन एंटरप्रेन्यूर और किंगफिशर फैशन फैटेसिया 2000 में ‘लाइफस्टाइल अचीवमेंट’ अवार्ड से सम्मानित किया गया। टस्कन वर्व जूम ग्लैम अवार्ड्स ने उन्हें ‘ग्लैम वूम वेयर (इंडियन) डिजाइनर’ का अवार्ड दिया। सन् 2007 में उन्हें लिम्का वार्षिक अवार्ड मिला और 2008 में इंदिरा प्रियदर्शिनी अवार्ड।

समन्वय है जरूरी

अगर रितु डिजाइनर नहीं, तो पेंटर होतीं। युवावस्था में उन्होंने फाइन आर्ट्स अकादमी से पेंटिंग सीखी थी। हालाँकि इस समय तो उनके पास ब्रश पकड़ने तक का समय नहीं है। जब भारत को आजादी मिली तो रितु मात्र 3 वर्ष की थीं। वह कहती हैं, “अपने कॉलेज के दिनों में मैं अत्यधिक राष्ट्रवादी थी। बाद में मुझे एहसास हुआ कि भारत के लिए इतनी अटूट भावना मेरे अंदर उस असुरक्षा की वजह से उत्पन्न हुई थी, जो कि पश्चिमी दुनिया ने निर्मित की थी।”

कामयाबी के शिखर को छूने के लिए निजी जीवन में कई तरह के समझौते औरत को करने पड़ते हैं, खासकर जब उसे बार-बार यात्राओं पर निकलना पड़े। वह मानती हैं कि अपने दो बेटों अश्विन व अमरीश और काम के बीच समन्वय बनाए रखने में केवल समय प्रबंधन ही उनके काम आया।

वह कहती हैं, “मुझे नहीं लगता कि किसी के पास इस समस्या का समाधान है। जब आप काम पर होते हैं, तब भी अपराध-बोध से ग्रस्त होते हैं और जब आप घर पर होते हैं, तब भी अपराध-बोध से ग्रस्त होते हैं। तब भी हर समय लगता है कि दोनों को ही नजरअंदाज किया जा रहा है। एक वक्त ऐसा था, जब हमारी आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं थी कि मैं लंबे समय तक घर में बच्चों के साथ समय बिताऊँ, पर जब चीजें ठीक हो गई तो मैं बच्चों के साथ अधिक समय बिताने लगी। मुझे खुशी है कि उन्होंने मेरी स्थिति को समझा और कभी

शिकायत नहीं की। अब तो वे इतने बड़े हो गए हैं कि उनकी खुद की जिंदगी है; लेकिन अपनी जिंदगी से जो मैंने पाया है, उससे मैं बहुत संतुष्ट हूँ।”

अपनी व्यस्तता के बावजूद काम के तनाव को दूर करने के लिए रितु बीच-बीच में छुट्टियाँ बिताने चली जाती हैं। कई बार शॉपिंग करने में भी उन्हें सुकून मिलता है और वह दूसरे डिजाइनरों के तैयार कपड़े खरीद लाती हैं। वह कहती हैं, “आखिर हमेशा अपने ही डिजाइन कपड़े भी तो नहीं पहने जा सकते हैं।”

रितु ने बीसवीं सदी और उससे पहले के टेक्स्टाइल और डिजाइन के संग्रह को संगृहीत किया है और उन्हें म्यूजियम में प्रदर्शित करना चाहती हैं ताकि भारतीय विरासत में दिलचस्पी रखनेवाले या अध्ययन कर रहे छात्रों को मदद मिल सके।

अधिकांश लोग रितु कुमार को एक फैशन डिजाइनर के रूप में ही देखते हैं जिन्होंने भारत की प्राचीन लुप्त होती कला को अपने परिधान में उतारकर पुनः जीवित कर उसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्धि दिलवाई। पर उनके व्यक्तित्व का एक अन्य पहलू भी है। वह एक इतिहासवेत्ता हैं, जिन्होंने भारतीय परिधानों और फैब्रिक के उद्घव व विकास की जड़ों को तलाशने में वर्षों बिताए हैं।



रेणुका रामनाथ



बैंकिंग क्षेत्र में नए मुकाम बनाए

इन्वेस्टमेंट बैंकर

“हमेशा बेहतर करने की कोशिश करें और जिस भी काम को करने की आप पीड़ा उठाते हैं, उसमें वैश्विक प्रतियोगिता की अवधारणा करू समावेश करें।”

उसी तरह से व्यवहार और कार्य करें जैसा कि आप दूसरों से अपेक्षा रखते हैं, हमेशा इसी उक्ति को मूलमंत्र बना जीवन में आनेवाली बाधाओं और घटनाक्रमों का सामना करनेवाली रेणुका रामनाथ वह नाम है, जिसने आई.सी.आई.सी.आई. वेचर्स में एक अनोखा इतिहास लिख स्वयं को भी अग्रणी महिला बैंकरों की श्रेणी में ला खड़ा किया।

शीर्ष पर रहने की चाह

14 सितंबर, 1961 को पारंपरिक दक्षिण भारतीय मध्यम वर्गीय परिवार में जन्मी रेणुका और उनके भाई-बहन की परवरिश मुंबई में हुई। यही वजह है कि उन्हें मुंबई इतना पसंद है कि वह बार-बार वहाँ जाने को आतुर रहती है।

रेणुका बचपन में अत्यधिक शरारती थीं और उनकी ये शरारतें केवल खेल या किसी को परेशान करने तक ही सीमित नहीं थीं, बल्कि नियमों का पालन न करने से भी जुड़ी थीं। वह तो जैसे नियमों को तोड़ना अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानती थीं और ऐसा करते हुए वह बहुत आनंदित महसूस करती थीं। लेकिन शरारती होना अगर उनके व्यक्तित्व का एक पहलू था तो दूसरा और पहलू भी था, जो उन्हें सदा अग्रणी रहने को उकसाता था।

मौज-मस्ती व शरारती दिमाग होने के बावजूद पढ़ाई के प्रति इतनी गंभीर थीं कि हमेशा क्लास में टॉप आने का लक्ष्य साध उन्होंने स्वयं के लिए ऊँचे-ऊँचे लक्ष्य भी तय किए हुए थे। छोटी-छोटी परीक्षाओं में भी टॉप न आना उन्हें नापसंद था।

शीर्ष पर रहने की यह चाह न सिर्फ उन्हें पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित करने को प्रेरित करती थीं, बल्कि अन्य गतिविधियों में भी वह आगे बढ़कर हिस्सा लेती थीं। पेंटिंग और सिलाई सीखने के साथ-साथ उन्हें खाना बनाने का भी बहुत शौक था। यहाँ तक कि उन्होंने अपने लिए फ्रॉक और स्कर्ट भी सिली थीं। उनकी बहुमुखी प्रतिभा और हमेशा आगे रहने की चाह बचपन के गलियारों को पार कर इतनी दूर ले गई कि आज वास्तव में वह शीर्ष पर पहुँच गई हैं।

बड़े सपने

20 वर्षों तक शास्त्रीय संगीत की बारीकियों को सीखनेवाली रेणुका का रुझान कला के विविध रूपों की ओर बहुत ज्यादा था। उनकी कलात्मक अभिरुचि की छाप उनके पूरे व्यक्तित्व में देखने को मिलती है। हालाँकि कला के प्रति समर्पित रेणुका की खेलों में कोई दिलचस्पी नहीं थी और वह उसमें जीतने की इच्छा से भाग भी नहीं लेती थीं। वह कहती हैं, “लोगों के साथ रहने के आनंद का अनुभव करने के लिए मैं खेलों में हिस्सा लिया करती थी।”

स्कूली दिनों में ही उनके अंदर यह इच्छा पनपने लगी थी कि वह बड़ी होकर किसी कंपनी की मैनेजिंग डायरेक्टर बनें। हालाँकि उनके दादा डॉक्टर थे और उनके पिता नारायण स्वामी अप्पा स्वामी चाहते थे कि उनकी बेटी इसी क्षेत्र में अपना कॅरियर बनाए; पर उनकी दादी नहीं चाहती थीं कि उनकी पोती डॉक्टर बनें। जब वह 15 वर्ष की थीं तो उनमें निहित प्रतिभा व लगन को पहचान उनकी बुआ ने उनके पिता से कहा था कि वह एक ‘विशिष्ट

'बच्ची' है और एक दिन अवश्य ही कुछ बड़ा कर दिखाएगी। और उनकी बुआ की बात अक्षरश : सच साबित हुई, तभी तो आज वह उस मुकाम पर हैं, जहाँ वह दिन के 24 घंटे व्यस्त रहती हैं।

तोड़ा नियम

चेंबूर से अपनी स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद रेणुका ने वी.जे.टी.आई. से टेक्सटाइल इंजीनियरिंग में ग्रेजुएशन कर उस कॉलेज से यह कोर्स करनेवाली चौथी महिला होने का गौरव प्राप्त किया। असल में लड़कियों का इस कोर्स में दाखिला न लेने की वजह यह थी कि वह प्रोग्राम महिलाओं की लूचि के अनुरूप नहीं था। अपनी पसंद से इस कोर्स को चुनने के बावजूद रेणुका को खुद इस बात का पता बाद में चला कि इसका संबंध डिजाइन के बजाय टेक्सटाइल मशीनरी से है।

रेणुका की प्रवृत्ति ऐसी थी कि जो एक बार ठान लिया, वह करती थीं इसलिए कोर्स को बीच में छोड़ने का तो सवाल ही नहीं उठता था। वैसे भी नियमों को तोड़ने में विश्वास रखनेवाली रेणुका अब न तो पीछे मुड़कर देखना चाहती थीं, न ही अपने निर्णय पर पछतावा कर दूसरों के उपहास का विषय बनना चाहती थीं। इसलिए उस कोर्स की बारीकियों को सीखने में तन्मयता से जुड़ गई।

ग्रेजुएशन करने के बाद उनके पास दो ही विकल्प थे कि वह या तो टेक्सास वूमेंस यूनिवर्सिटी से टेक्नोलॉजी में पी-एच.डी. प्रोग्राम करें या फिर मार्केटिंग और फाइनेंस में अपना कैरियर बनाएँ। टेक्सटाइल उद्योग में उन्हें आगे बढ़ने के अवसर ज्यादा नहीं नजर आए तो उन्होंने मैनेजमेंट स्टडीज में डिग्री हासिल करने के लिए मुंबई यूनिवर्सिटी में दाखिला ले लिया, यहाँ भी उन्होंने हमेशा की तरह टॉप किया।

स्पष्ट सोच

मैनेजमेंट स्टडीज का कोर्स खत्म होते ही उन्हें क्रॉम्पटन में नौकरी मिल गई। संयोग की बात है कि उस समय आई.सी.आई.सी.आई. किसी टेक्सटाइल टेक्नोलॉजिस्ट की तलाश कर रही थी और रेणुका उन्हें इसके लिए सबसे उपयुक्त लगीं। उन्होंने उनकी समर ट्रेनिंग तो कर ली, पर जब ट्रेनिंग पूरी होने के बाद उनके प्रतिनिधि ने यह प्रस्ताव उनके सामने रखा कि आई.सी.आई.सी.आई. से जुड़ जाएँ तो उन्होंने यह कहते हुए मना कर दिया कि किसी वित्तीय संगठन से जुड़ने से पहले वह एक इंडस्ट्री में काम करना पसंद करेंगी। असल में

उनकी सोच हर विषय के बारे में स्पष्ट होती थी, इसलिए फैसले लेने में उन्हें देर नहीं लगती थी।

रेणुका को अपने ऊपर अत्यधिक विश्वास था और इसी कारण क्रॉम्पटन में काम करते हुए वह सोचा करती थीं कि मैनेजमेंट ट्रेनी होने के नाते वह बड़े-बड़े परिवर्तन चुटकियों में कर देंगी। वह कहती हैं, “उन बातों के बारे में आज सोचती हूँ तो हँसी आती है। मेरी शरारतों में भी भोलापन छिपा हो सकता है, इसका अंदाजा मुझे नहीं था। अत्यधिक आत्मविश्वास अच्छा होता है या बुरा, यह बात तब मेरे दिमाग में सवाल नहीं पैदा करती थी।

सीढ़ी-दर-सीढ़ी

पर आत्मविश्वास ने उन्हें हमेशा अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में मदद दी। हालाँकि उतार-चढ़ाव उन्हें भी झेलने पड़े और पहली बार अपनी इच्छा के विरुद्ध बिना नियम तोड़े उन्हें काम करना पड़ा। सन् 1986 में जब वह आई.सी.आई.सी.आई. से जुड़ीं तो अपनी इच्छा के विरुद्ध उन्हें संगठन को मर्चेंट बैंकिंग डिविजन को सँभालना पड़ा। लेकिन बहुत जल्दी ही उन्हें यह एहसास हो गया कि उनकी दिलचस्पी मर्चेंट बैंकिंग में ही है और इस क्षेत्र में वह अपनी सारी निपुणताओं का प्रयोग अच्छे से कर सकती हैं।

बाद में उन्हें कॉरपोरेट फाइनेंस और इक्विटीज बिजनेस डिपार्टमेंट का प्रमुख बनाकर आई.सी.आई.सी.आई. सिक्योरिटीज में स्थानांतरित कर दिया गया। यहाँ भी उन्होंने सदा की तरह बेहतर प्रदर्शन कर मुनाफे में बढ़ोतरी की। आई.सी.आई.सी.आई. ई-कॉर्मस उपक्रमण का निरीक्षण सँभालने से पहले वह स्ट्रक्चर्ड फाइनेंस बिजनेस को स्थापित करने के लिए पुनः सन् 1977 में आई.सी.आई.सी.आई. में लौटीं। सितंबर 2000 में आई.सी.आई.सी.आई. ईको नेट लि. के मैनेजिंग डायरेक्टर और सी.ई.ओ. नियुक्त किए जाने के बाद आई.सी.आई.सी.आई. ईको नेट का आई.सी.आई.सी.आई. वेंचर में विलय हो जाने के बाद उन्होंने आई.सी.आई.सी.आई. वेंचर का कार्यभार बतौर मैनेजिंग डायरेक्टर और सी.ई.ओ. सँभाला।

स्वप्रदर्शी उद्यमी

रेणुका की काबिलियत और बौद्धिक प्रखरता उनके संगठन में लगातार चर्चा का विषय बनी रही। सन् 1999 में आई.सी.आई.सी.आई. ने उन्हें चार महीने का एडवांस मैनेजमेंट का कोर्स करने के लिए हार्वर्ड इंटरनेशनल बिजनेस स्कूल भी भेजा।

रेणुका के नेतृत्व में आई.सी.आई.सी.आई. वेंचर्स से करोड़ों रुपयों का विदेशी निवेश एकत्रित किया। उसमें प्रमुख है इंडिया एडवांटेज फंड के माध्यम से 750 करोड़ रुपए का संग्रहण। वह कहती हैं, “आई.सी.आई.सी.आई. वेंचर ने कई भारतीय कंपनियों को वर्ल्ड क्लास बनाया है। मैं कम-से-कम ऐसी 25 कंपनियाँ चिह्नित कर सकती हूँ जो अपने-अपने क्षेत्र की कल की रिलायंस, इन्फोसिस या विप्रो हैं। मुझे उम्मीद हैं कि मैं अपने कैरियर में उन्हें शीर्ष पर देख पाऊँगी।”

आई.सी.आई.सी.आई. ऐसा संगठन है जिसने रेणुका के कैरियर को अगर ऊँचाइयों तक पहुंचाया तो बदले में रेणुका ने भी उसे मजबूत वित्तीय संगठन में रूपांतरित किया।

वह कहती हैं, “आई.सी.आई.सी.आई. ने ही मुझे महत्वाकांक्षी प्रोफेशनल से स्वप्रदर्शी उद्यमी बनाया है, जो हर महिला बन सकती है; लेकिन यह तभी संभव है जब वह जैसा जीवन जीना चाहती है वैसे जीवन के लिए अपने अंदर आत्मविश्वास पैदा करे।”

नियति का खेल

नियति के खेल निराले हैं और कई बार वह ऐसी व्यूह रचना कर देती है, जिसमें उलझकर व्यक्ति हतप्रभ रह जाता है और यह सोचने पर मजबूर भी कि आखिर उसके साथ ऐसा क्यों हुआ। इसे विडंबना ही तो कहा जाएगा कि अपने कैरियर में शीर्ष स्थान छूने की चाह रखनेवाली और फिर उसे पा लेनेवाली रेणुका निजी जीवन में पिछड़ गई।

शायद नियति को उनको लंबे-लंबे डग भरते आगे निकलना गवारा नहीं था, तभी तो युवावस्था में ही उनके पति का साथ उनसे छूट गया। असमय पति की मृत्यु हो जाने से रेणुका बिखर ही जातीं, अगर उन्होंने अपना सारा ध्यान अपने पुत्र व पुत्री तथा कैरियर पर न लगा दिया होता। उनके पति बहुत ही स्नेहमयी और उनका ध्यान रखनेवाले इनसान थे। उन्हें रेणुका की काबिलियत पर गर्व था, इसलिए हर समय उन्हें प्रोत्साहित करते थे। एक बार उन्होंने कहा था कि “अगर पति की मृत्यु के बाद मैं टूट जाती तो आज मेरा जीवन और बच्चे दोनों ही बिलकुल बिखर चुके होते।”

काम की व्यस्तता और पति के जाने के दुःख के बीच उनके बच्चों को यह न महसूस हो कि उनकी माँ उन्हें समय नहीं देती या उनको नजरअंदाज करती है, इसलिए अपनी व्यस्तता और जिम्मेदारियों से अवगत कराने के लिए रेणुका सप्ताहांत में उन्हें ऑफिस ले जाने लगीं। आज जितना उन्हें अपने बच्चों पर गर्व है, उतना ही उनके बच्चे उन पर गर्व करते हैं। वह कहती हैं, “मेरे बच्चे आज मुझे सबसे ज्यादा प्रोत्साहित करते हैं और नए-नए विचारों से

रू-बर्ल कराते हैं। मैं उनके सामने चुनौतीपूर्ण समस्याएँ रखती हूँ और बदले में वे मुझे बहुत ही दिलचस्प उत्तर व सुझाव देते हैं।”

बहुत बड़ा बदलाव

अप्रैल 2009 में एक बार फिर से उनकी जिंदगी ने पलटा खाया। उन्होंने आई.सी.आई.सी.आई. वेंचर्स को अलविदा कह दिया। उनके छोड़ने की बहुत सी अटकलें लगाई गई। यहाँ तक कहा गया कि उन्होंने इस संगठन को इसलिए छोड़ा, क्योंकि चंदा कोचर को आई.सी.आई.सी.आई. बैंक में उच्च पद दिया गया था। लेकिन उन्होंने इस बात को नकारते हुए कहा था, “मैं कभी भी बैंक जॉइन नहीं करना चाहती थी, क्योंकि मेरा सारा ध्यान तो प्राइवेट इक्विटी पर ही रहा है।”

उस संगठन को छोड़ते हुए उन्होंने स्वयं को उस माँ की तरह महसूस किया, जिससे उसके बच्चे को छीन लिया हो। वह कहती हैं कि उस संगठन को छोड़ना कठिन था, जिसमें 23 वर्ष बिताए हों, जिसमें से आखिरी 8 वर्ष भारत को विशालतम घरेलू निजी इक्विटी फर्म के प्रमुख के रूप में। “वह मेरे लिए एक घर की तरह ही था।” जब वह वहाँ से निकलीं, तब तक उन्हें ‘प्राइवेट इक्विटीज की मदर’ कह परिभाषित किया जाने लगा। यह उस महान् सफलता के कारण था, जो उन्होंने ऐसी इंडस्ट्री में हासिल की थी जिस पर अब तक पुरुषों का आधिपत्य था।

नया शिशु

संगठन छोड़ने के बाद रेणुका चाहतीं तो वहीं पुनः नौकरी कर सकती थीं, पर वह स्वयं को थोड़ा वक्त देना चाहती थीं और कुछ अलग भी करना चाहती थीं। डेढ़ साल बाद उन्होंने मल्टीप्लस आल्टरनेट एसेट मैनेजमेंट नामक अपनी कंपनी खोली। अपने इस नए शिशु के लिए 350 करोड़ डॉलर का मुनाफा कमाकर उन्होंने फिर से साबित कर दिया कि वह किसी भी चुनौती का सामना करने में सक्षम हैं।

इस समय वह कंपनी भारतीय व अंतरराष्ट्रीय पूँजी के 450 करोड़ डॉलर को सँभालता है। वह मानती हैं कि सही शर्तों पर सही डील ढूँढ़ना और लाभ देना इस समय मेरे सामने सबसे बड़ी चुनौती है। जब आप एक संगठन कायम करते हैं तो और कुछ काम नहीं आता, केवल आपको सही डील का पता लगाकर पैसा कमाना और वैल्यू निर्मित करनी पड़ती है।

रेणुका अपने शिशु को आकार देने में सफल हो चुकी हैं, क्योंकि हमेशा आगे रहना उनकी आदत ही नहीं, अब जुनून भी बन चुका है।

एक रूप यह भी ऑफिस में डिजाइनर साइडियाँ और ज्वैलरी पहन एक परिष्कृत-सी दिखने वाली महिला का रूप घर जाकर सीधी-सादी गृहिणी में बदल जाता है। रफी के गानों की दीवानी रेणुका पुरानी बदरंग मैक्सी पहने आपको घर में खाना बनाते मिल जाएँगी।



रेणु सूद कर्नाडि



अपने घर का सपना किया सच

मैनेजिंग डायरेक्टर, एच.डी.एफ.सी.

“रलाक्स सीलिंग तोङ्जे का सही तरीका यही है कि इमानदार
कुछ, कड़ी मेहनत करो और महिला हैं, इसलिए विशेष दियायतें
मिलनी चाहिए, उसी माँग न करो।”

एच.डी.एफ.सी. (हाउसिंग डेवलपमेंट फाइनेंस कॉरपोरेशन) से सबसे पहले जुड़नेवाली
महिलाओं में से एक रेणु सूद कर्नाडि ने सन् 1978 में गृहिणियों को होम लोन्स (घर खरीदने
के लिए ऋण) बेचने से अपने काम की शुरुआत की थी। सीनियर असिस्टेंट की तरह अपने
कॅरियर की शुरुआत करनेवाली रेणु आज एच.डी.एफ.सी. की प्रबंध निदेशक हैं और आज
कंपनी में उनका स्थान तीसरे नंबर पर है, जो भारत में बिजनेस की तरह होम लोन की शुरु
आत करनेवाली पहली कंपनी है। एच.डी.एफ.सी. बिजनेस की स्वतंत्र सूत्रधार भारत के

हाउसिंग मोर्टगेज (गिरवी) उद्योग की वह ऐसी हस्ती हैं, जिन्हें आनेवाले समय में मीडिया एच.डी.एफ.सी. के चेयरमैन के रूप में देख रहा है।

एच.डी.एफ.सी. के संस्थापक हँसमुखलाल ठाकोरदास पारिख (जो एच.टी के नाम से मशहूर हैं) ने इंग्लैंड की हाउसिंग बैंक (ब्रिटिश बिल्डिंग सोसायटी) की तर्ज पर इस कॉरपोरेशन की नींव रखी थी, ताकि युवावस्था में ही लोग अपना मकान बनाने के स्वप्न को पूरा कर सकें। इसी के साथ भारत में कर्ज लेकर मकान खरीदने के चलन की शुरुआत हुई थी। यह वह समय था जब कर्ज लेकर मकान बनाना उचित नहीं समझा जाता था और लोग पैसा-पैसा जोड़कर कहीं बुढ़ापे में जाकर मकान खरीद पाते थे। आजकल के युवा, जो नौकरी लगते ही सबसे पहले अपना मकान खरीदने या बनाने की हिम्मत जुटा पाते हैं, उसकी वजह यह होम लोन की अवधारणा ही है, जिसे एच.टी. पारिख ने आरंभ किया था और जिसे इतने बड़े पैमाने पर फैलाने का श्रेय जाता है रेणु सूद कर्नाड को।

निरंतर प्रगति

रेणु ने नौकरी के लिए अपना पहला इंटरव्यू दिया आई.सी.आई.सी.आई. में। उस समय आई.सी.आई.सी.आई. के चेयरमैन थे एच.टी. पारिख, जो हाउसिंग डेवलपमेंट फाइनेंस कॉरपोरेशन का गठन कर रहे थे। उन्होंने रेणु को अपने नए संगठन में नौकरी करने का ऑफर दिया। और सन् 1978 से लेकर आज तक वह इस संगठन से जुड़ी हुई हैं। दो दशकों तक विभिन्न पदों पर काम करने के बाद उन्हें सन् 2000 में एच.डी.एफ.सी. के बोर्ड पर एक्जीक्यूटिव डायरेक्टर का पद दिया गया। 2007 में वह जॉइंट मैनेजिंग डायरेक्टर बनीं और 1 जनवरी, 2010 को मैनेजिंग डायरेक्टर के रूप में कार्यभार सँभाला।

रेणु सूद कर्नाड कंपनी के लैंडिंग ऑपरेशंस को देखती हैं और एच.डी.एफ.सी. के विस्तार का दायित्व उन पर है। उनके नेतृत्व में एच.डी.एफ.सी. अपने उधार देने के बिजनेस और कम्यूलेटिव होम लोन वितरण में लगभग 2.42 दस खरब एक लाख करोड़ तक पहुँच गया है। इसके अतिरिक्त उनके पास मानव संसाधन व संचार कार्य भी हैं। एच.डी.एफ.सी. की ब्रांड संरक्षक होने के अलावा वह संगठन की कम्युनिकेशन स्ट्रेटिजी और जनता के बीच एक बेहतर छवि बनानेवाली प्रेरक व निर्देशक शक्ति भी हैं। अपने ग्राहकों की बदलती जीवन-शैली व आवश्यकताओं को समझते हुए, उनके मार्गदर्शन में, एच.डी.एफ.सी. लगातार नए व पुराने ग्राहकों के लिए सुविधाजनक मोर्टगेज (गिरवी) देनेवाले उत्पाद व सेवाएँ प्रस्तुत करता आ रहा है।

मानवीय सोच की पक्षधर

बॉम्बे यूनिवर्सिटी से क्रिमिनोलॉजी में लॉ ग्रेजुएट और दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स से पोस्ट ग्रेजुएट करनेवाली रेणु सूद परफॉर्मेंस के आधार पर एच.डी.एफ.सी. में पदोन्नति लेती हुई मैनेजिंग डायरेक्टर बनी हैं। किसी बिजनेस स्कूल से पढ़ाई न करने के बावजूद वह बिजनेस की हर नीति से वाकिफ हैं और आज उनकी प्रखरता व दूरदर्शिता की वजह से एच.डी.एफ.सी. ऐसा वित्तीय समूह बन चुका है, जो कॉरपोरेट व रिटेल बैंकिंग, इंश्योरेंस, म्युचुअल फंड, इन्वेस्टमेंट जैसे सारी वित्तीय सेवाएँ प्रदान कर रहा है। अपनी कूटनीति व हाजिर-जवाबी के लिए जानी जाने वाली रेणु की जटिल मुद्दों को सुलझाने के प्रति हमेशा एक मानवीय सोच रहती है। वह दृढ़ता से इस बात को मानती हैं कि किसी संगठन की सफलता की कुंजी उसमें काम करनेवाले लोग होते हैं, खासकर सर्विस से जुड़े क्षेत्रों में। और उत्कृष्टता हासिल करने के लिए स्वयं पर विश्वास करने वह सबसे वह बड़ा हथियार मानती हैं।

वह कहती हैं, “कोई भी व्यक्ति जीवन में बहुत सारी चीजों के बारे में योजना बनाकर नहीं चल सकता है, क्योंकि अवसर व आपातकालीन स्थितियाँ दोनों कब आ जाएँ, कहा नहीं जा सकता है और उन्हें नजरअंदाज न करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। एच.डी.एफ.सी. का संपत्ति के बदले में ऋण (लोन) ग्राहकों को ऐसे अवसरों का फायदा उठाने में मदद करता है या आपातकालीन स्थितियों का सामना करने में मदद करता है। इन दोनों ही बातों के लिए पैसे की आवश्यकता होती है। अगर आपके पास प्रॉपर्टी है तो वह अल्पावधि में अच्छी मात्रा में पैसा एकत्र कर सकते हैं और साथ ही अपने घर में रहने का आनंद भी ले सकते हैं। पर्सनल लोन लेना भी इसका एक अन्य विकल्प है। हालाँकि संपत्ति के बदले लोन की न सिर्फ ब्याज दर कम होती है, वरन् उसकी अवधि भी ज्यादा होती है। इससे व्यक्ति पर्सनल लोन की तुलना में ज्यादा लोन ले सकता है, जिसकी अवधि भी कम होती है और उसका असर ब्याज चुकाने पर भी पड़ता है।”

एच.डी.एफ.सी. ने इंडस वर्ल्ड स्कूल (आई.डब्ल्यू.एस.) के 50 करोड़ के इक्विटी स्टेक भी खरीदे हैं। दिल्ली की परीक्षाओं की तैयारी और ठ्यूशन देनेवाली एक जानी-मानी कंपनी कॅरियर लॉज्चर प्राइवेट लि. कंपनी—आई.डब्ल्यू.एस. की देश भर में 14 स्कूल हैं। वह कहती हैं कि एच.डी.एफ.सी. और कॅरियर लॉज्चर दोनों को इस संबंध से फायदा पहुँचेगा और वे देश में शिक्षा की गुणवत्ता पर सकारात्मक प्रभाव डाल सकेंगे।

कामयाबी की लंबी पारी

मोर्टगेज सेक्टर में अपनी असाधारण सफलता के चलते रेणु ने इंटरनेशनल यूनियन ऑफ हाउसिंग फाइनेंस, हाउसिंग फाइनेंस फर्म्स की ऐसी एसोसिएशन, जो विश्व भर में है, की

प्रेसीडेंट का कार्यभार भी सँभाला। वह एशियन रियल एस्टेट सोसाइटी की डायरेक्टर भी रह चुकी हैं। एच.डी.एफ.सी. बैंक सहित वह अनेक एच.डी.एफ.सी. ग्रुप कंपनियों के बोर्ड पर भी हैं। वह एच.डी.एफ.सी. प्रॉपर्टी वेंचर की चेयरपर्सन भी हैं, जो भारत की पहली प्रॉपर्टी वेंचर कंपनी है और पूरी तरह से एच.डी.एफ.सी. लि. की सहायक कंपनी है। रेणु बॉश लिमिटेड, क्रेडिट इन्फॉर्मेशन ब्यूरो (भारत) लिमिटेड, फीडबैक वेंचर्स लिमिटेड, जी4स कॉरपोरेट सर्विसेज प्राइवेट लिमिटेड, आई.सी.आई. इंडिया लिमिटेड, इंद्रप्रस्थ मेडिकल कॉरपोरेशन लिमिटेड और स्पर्श बी.पी.ओ. सर्विसेज लिमिटेड जैसे कई राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय कंपनियों के बोर्ड पर भी हैं। वह आई.डी.एफ.सी. इक्विटी के सीनियर एक्सपर्ट काउंसिल की सदस्य भी हैं।

वर्ष बीतने के साथ-साथ रेणु सूद के नाम के साथ बहुत से सम्मान, अवार्ड और खिताब भी जुड़ गए। इकोनॉमिक्स टाइम्स की सन् 2010 की शीर्ष 15 पावरफुल वूमैन सी.ई.ओ. के रूप में उनका नाम दर्ज हुआ और 'बिजनेस टुडे' मैगजीन की इंडियन बिजनेस की अधिकतम पावरफुल महिलाओं की सूची में सन् 2004, 2006, 2007, 2008 और 2009 में लगातार उनका नाम दर्ज हुआ। सन् 2008 में अमेरिका की 'बैंकर' मैगजीन के द्वारा फाइनेंस में शीर्ष 25 नॉन बैंकिंग वूमैन की सूची में उन्हें रखा गया। अपनी वार्षिक काम पर आधारित रैंकिंग के एक भाग के रूप में, 'बैंकर' मैगजीन वित्तीय सेवाओं के क्षेत्र में असाधारण महिला एक्जीक्यूटिव्स को चुनती है, जिनके प्रोफेशनल व निजी योगदानों ने कॉरपोरेट की दुनिया में एक छाप छोड़ी हो। सन् 2007-08 के लिए 'बिजनेस एंड इकोनॉमी' मैगजीन के द्वारा उन्हें बेस्ट वूमैन कॉरपोरेट लीडर घोषित किया गया। फिक्की लेडीज ऑर्गनाइजेशन द्वारा उन्हें सन् 2007 के 'वूमैन एचीवर्स अवार्ड' से सम्मानित किया गया। सन् 2006 में 'वॉल स्ट्रीट जर्नल' एशिया ने 'टॉप टेन पावरफुल वूमैन टू वॉच आउट फॉर इन एशिया' में चुना।

नेतृत्व करने की क्षमता

सही समय पर सही कंपनी में नौकरी मिलना उनकी जिंदगी का टर्निंग पॉइंट था। अकसर दूर पर रहनेवाली रेणु ने भारत कर्नाड से विवाह किया, जो स्ट्रेटेजिक मामलों के विशेषज्ञ हैं। पत्रकार से विशेषज्ञ बने उनके पति सेंट्रल फॉर पॉलिसी रिसर्च में कार्यरत हैं। उनके दो बच्चे हैं—एक लड़का और एक लड़की।

वह मानती हैं कि पति का साथ व सहयोग महिला के कैरियर को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, फिर चाहे वह केवल प्रोत्साहित करने मात्र से ही क्यों न हो। जब उन्हें एक साल के लिए प्रिंसटन जाने का अवसर मिला तब उनका विवाह हुए चार वर्ष ही हुए थे

और वह दुविधा में थीं कि वह जाएँ या न जाएँ। तब उनके पति ने उन्हें कहा कि वह इस अवसर का लाभ उठाएँ—और रेणु को अकेलेपन का एहसास न हो, इसलिए उनके पति ने अपने लिए भी अमेरिका में नौकरी ढूँढ़ ली। उन्हीं की प्रेरणा व प्रोत्साहन के बल पर वह आज इस मुकाम तक पहुँच पाई हैं और पूरी निश्चिंतता के साथ अपने कैरियर पर ध्यान दे पाई हैं।

59 वर्षीय रेणु के लिए ताकत का अर्थ है नेतृत्व करने एवं निर्णय लेने की क्षमता और बदलाव लाने की प्रेरक शक्ति। अपने खाली समय में वह अपने पति के साथ फिल्में देखती हैं। वह मानती हैं कि ग्लास सीलिंग तोड़ने का सही तरीका यही है कि ईमानदार रहो, कड़ी मेहनत करो और महिला हैं, इसलिए विशेष रियायतें मिलनी चाहिए, ऐसी माँग न करो।



ललिता डी. गुप्ते



कॉर्पोरेट जगत् में महिलाओं की बढ़ती भूमिका का प्रतीक

चेयरपर्सन, आई.सी.आई.सी.आई. वेंचर फंड्स मैनेजमेंट कंपनी लि.

“मैं स्पष्टनों में जीनेवाली इनसान नहीं हूँ, पर मेरा एक सपना है। हर किसी के पास अपने लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए कोर्ड-न-कोर्ड सपना अवश्य होना चाहिए। पर उसके साथ ही यथार्थवादी होना भी नितांत आवश्यक है।”

सन् 2001 से आई.सी.आई.सी.आई. बैंक का अंतरराष्ट्रीय व्यापार स्थापित करनेवाली ललिता गुप्ते अक्टूबर 2006 में जॉइंट मैनेजिंग डायरेक्टर और आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के बोर्ड की सदस्य के रूप में सेवानिवृत्त होने के बाद इस समय आई.सी.आई.सी.आई. वेंचर फंड्स मैनेजमेंट कंपनी लि. की चेयरपर्सन हैं। सन् 1971 में आई.सी.आई.सी.आई. लि. के साथ प्रोजेक्ट अप्रेसल डिवीजन में अपना कॉरियर शुरू करनेवाली ललिता गुप्ते ने कॉर्पोरेट और रिटेल बैंकिंग, स्ट्रेटजी रिसॉर्सेज, इंटरनेशनल बैंकिंग व अन्य क्षेत्रों में विभिन्न

पदों पर कार्य किया। आई.सी.आई.सी.आई. बैंक को एक टर्म लैंडिंग संस्था से फाइनेंशियल सर्विस ग्रुप में तब्दील करने का श्रेय उन्हें ही जाता है। वह आई.सी.आई.सी.आई. बैंक के वैश्विक होने की मुख्य ताकत थीं, जो आज 17 देशों में कार्य कर रहा है।

मृदुभाषी और सरल व्यक्तित्व की ललिता गुप्ते कॉरपोरेट जगत् में महिलाओं की बढ़ती भूमिका का प्रतीक हैं। वह ऐसी महिला हैं, जो खुली बाँहों से परिवर्तनों व मतभेदों का स्वागत करती हैं और अपनी प्रबंधकीय शैली में सुधार लाने के लिए लगातार उपाय अपनाती हैं।

मिला खुला माहौल

एक शिक्षित व खुले विचारोंवाले परिवार में 4 अक्टूबर, 1948 को जन्मी ललिता की परवरिश इस तरह से हुई कि उन्हें कभी लगा ही नहीं कि लड़की होने के कारण उन्हें कुछ खास नियम-कायदों का पालन करने पर मजबूर होना पड़ेगा। बल्कि उन्हें तो ऐसा माहौल मिला, जिसमें घर का हर व्यक्ति या तो उच्च शिक्षित था या किसी ॐ्चे मुकाम पर पहुँच चुका था। इंडियन सिविल सर्विस से अपने कॅरियर की शुरुआत करनेवाले उनके पिता कैबिनेट सेक्रेटरी की हैसियत से रिटायर हुए। उनकी माँ एक सामाजिक कार्यकर्त्ता थीं, जो '50 के दशक में महाराष्ट्र स्टेट वूमन काउंसिल की प्रेसीडेंट थीं और 'आशा सदन' नामक महिलाओं व बच्चों के कल्याणार्थ कार्यरत मुंबई के एक समाज-सेवी संगठन से जीवनपर्यात जुड़ी रहीं। ललिता गुप्ते की बड़ी बहन स्त्री रोग विशेषज्ञ हैं और दूसरी बहन इतिहासकार हैं। उनके भाई ने सुपर कंप्यूटर 'परम' के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

मिला अवसर

ललिता ने दिल्ली व मुंबई से अपनी स्कूली शिक्षा ग्रहण की। दिल्ली के मिरांडा हाउस से इकोनॉमिक्स में अंडर ग्रेजुएशन करने के बाद उन्होंने जमनालाल बजाज इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज से एम.बी.ए. की डिग्री हासिल की। सन् 1971 में जब आई.सी.आई.सी.आई. के तत्कालीन चेयरमैन सुरेश नादकर्णी ने बंबई के जमनालाल बजाज इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज की एम.एम.एस. फाइनल की छात्रा ललिता का कैंपस इंटरव्यू के दौरान चयन किया तो आई.सी.आई. सी.आई. एक साधारण विकासोन्मुखी वित्तीय संस्थान था। उसकी गतिविधियाँ केवल प्रोजेक्ट फाइनेंसिंग तक सीमित थीं। उसका क्लाइंट बेस इतना छोटा था कि गिनी-चुनी जगह ही उनकी शाखाएँ थीं। उस समय की स्थिति देखकर यह अंदाजा लगाना संभव नहीं था कि वह बैंक कभी इस

तरह दुनिया भर में अपनी पैठ बना लेगा, यहाँ तक कि ए.टी.एम. प्रणाली के आरंभ व लोकप्रियता में इतनी बड़ी भूमिका निभाएगा।

चयन हो जाने के बाद भी ललिता के मन में दुविधा थी कि क्या पुरुष-प्रधान वित्त क्षेत्र में वह अपनी एक पहचान बना पाएँगी या किसी मुकाम पर पहुँचना उनके लिए मुमकिन होगा। सुरेश नादकर्णी ने उनकी दुविधा को समझा; पर उन्हें इस बात का आश्वासन देने के बजाय कि उन्हें महिला होने के नाते किसी तरह की दिक्कत नहीं आएगी, कहा कि अगर आप मेरे संगठन में काम नहीं कर पाई तो मैं समझूँगा कि आई.सी.आई.सी.आई. महिलाओं के काम करने के लिए उपयुक्त जगह नहीं है।

कामयाबी के शिखर पर

लेकिन ललिता ने न सिर्फ वहाँ अपनी एक पहचान बनाई, वरन् महिलाओं के लिए उसमें तरक्की की राहें खोलकर यह साबित भी कर दिया कि आई.सी.आई.सी.आई. महिलाओं के काम करने के लिए एक उपयुक्त जगह है। आई.सी.आई.सी.आई. लि. के लिए एक बेहतरीन भविष्य गढ़ने में ललिता की विशेष भूमिका रही है। उन्हींके अथक प्रयासों की वजह से आई.सी.आई.सी.आई. लि. आई.सी.आई.सी.आई. बैंक लि. बन पाया। अपने आरंभिक दिनों में भी उन्होंने अपनी योग्यता का प्रदर्शन कर यह दिखा दिया था कि वह किसी से कमतर नहीं हैं और अपने इरादों से वह चीजों को बदलकर उनमें सुधार करने की क्षमता रखती हैं। आई.सी.आई.सी.आई. के शेयर सूचीबद्ध करने के लिए वह लगातार न्यूयॉर्क स्टॉक एक्सचेंज मैनेजमेंट से बातचीत करती रहीं और आखिरकार उसे सूचीबद्ध कराने में सफल भी हो गई, जिससे कंपनी की लोकप्रियता रातोरात आकाश छूने लगी। आई.सी.आई.सी.आई. लि. की अंतरराष्ट्रीय फलक पर उपस्थिति दर्ज कराने में भी ललिता का ही हाथ था। जो लोग इस क्षेत्र से जुड़े हैं, वे इस बात को समझ सकते हैं कि अंतरराष्ट्रीय संचालनों को चलाने व स्थापित करने में किस तरह की दिक्कतें आती हैं।

सन् 1984 में वह आई.सी.आई.सी.आई. की पहली महिला एग्जीक्यूटिव डायरेक्टर बनीं। सन् 1999 में पहली महिला जॉइंट डायरेक्टर व सी.ई.ओ. बनने का गौरव उन्हें प्राप्त हुआ। सन् 2002 में आई.सी.आई.सी.आई. समूह के मैनेजिंग डायरेक्टर व सी.ई.ओ. के.वी. कामथ ने उन्हें अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क स्थापित करने की जिम्मेदारी सौंपी थी। इंटरनेशनल बिजनेस ग्रुप की प्रमुख की हैसियत से ललिता गुप्ते ने 4 वर्षों तक माह में 15 दिन विदेश में व्यतीत किए और 15 विभिन्न देशों की 70 क्रॉस-कल्चर एग्जीक्यूटिव टीम का कुशलता से नेतृत्व संभाला। आई.सी.आई.सी.आई. बैंक का अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क आज आप्रवासी भारतीयों की वित्तीय जरूरतें पूरी कर रहा है। उनके द्वारा मात्र 5 वर्षों में स्थापित इस

इंटरनेशनल नेटवर्क ने ही आई.सी.आई.सी.आई. को देश का दूसरा सबसे बड़ा फाइनेंशियल पावर हाउस बना दिया।

संतुलन जरूरी

वह कहती हैं कि सफलता की कीमत हमेशा चुकानी पड़ती है। जब आप एक ही साथ सुपर माँ, सुपर पत्नी व सुपर एग्जीक्यूटिव बनना चाहती हैं तो आपको अनगिनत समझाते करने पड़ते हैं। पर फिर सब एक संतुलन से चलने लगता है; क्योंकि तब आपको यह एहसास हो जाता है कि जीने के इस ढंग को आपने समझाते-बूझाते चुना है और अगर आप उससे बाहर आने की कोशिश करेंगी तो वह स्वयं को नकारने जैसा ही होगा।

वह अपनी सफलता का श्रेय कड़ी मेहनत, सही अवसर और घर से मिलनेवाले सहयोग को देती हैं। वह कहती हैं, “मेरे माता-पिता मुझे बहुत प्रोत्साहित करते थे और हमेशा जीवन में कुछ करने एवं निरंतर आगे बढ़ने की प्रेरणा देते थे। मुझे ऐसा उत्साहवर्धक वातावरण मिला, जिसमें हम भाई-बहनों को अपना विकास करने के भरपूर अवसर मिले। हमारा एक खुश, आत्मीयतापूर्ण व मिलनसार परिवार था। मेरे सास-ससुर ने भी मुझे बहुत अच्छी तरह से समझा, जिसकी वजह से मुझे कभी भी काम के समय घर की जिम्मेदारियों को लेकर तनाव नहीं हुआ। मेरे पति ने केवल इसलिए समय से पहले नौसेना से अवकाश ले लिया कि दोनों ही अगर अपना कैरियर बनाने में लगे रहे तो जीवन दुखदायी हो जाएगा।”

निजी व प्रोफेशनल जीवन के बीच संतुलन कायम करना आसान नहीं होता; पर ललिता मानती हैं कि चूँकि दोनों में ही पूरा ध्यान व समय देना बहुत आवश्यक होता है, इसलिए दोनों को ही सँभालना सीखना पड़ता है।

“समय के साथ प्राथमिकताएँ बदलती रहती हैं और संतुलन करना सीखना पड़ता है। जीवन में कुछ भी सहज व स्थिर नहीं होता, इसलिए कैरियर वूमैन के लिए किसी तरह का रोडमैप नहीं बनाया जा सकता है। उसे अपनी स्थितियों व प्राथमिकताओं के अनुसार ही चीजों को सँभालना होता है।” कहना है ललिता गुप्ते का, जो अपनी सफलता का श्रेय अपने परिवार को देती हैं। दुनिया के व्यापार में ताकतवर महिला के रूप में फॉर्च्यून और फोर्ब्स दोनों की सूची में उपस्थित ललिता गुप्ते कहती हैं, “मेरे पति मेरे भावनात्मक सहारा रहे हैं। हमारे काम में हमें लगातार यात्रा करनी पड़ती थी और कार्य समय की भी कोई नियमितता नहीं होती, ऐसे में उनका सहयोग और मेरे पेशे की आवश्यकतों को समझ मेरा साथ देना मेरे लिए किसी बहुत बड़े सहारे से कम नहीं था। दिलीप जितने अच्छे पिता हैं उतने ही बेहतरीन पति भी हैं। पर हर महिला को इस तरह से अपने कार्य को संतुलित

करना चाहिए जिससे परिवार का संतुलन न बिगड़े। मैं इस बात से असहमत हूँ कि कॅरियर वूमैन परिवार की उपेक्षा करती हैं। बल्कि कामकाजी महिला बच्चों को कम डॉट्टी व परेशान करती हैं और परिवार को क्वालिटी टाइम देती हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि परिवार केवल जिम्मेदारी नहीं है, हम उन्हें प्यार भी करते हैं।”

काम के प्रति समर्पित

ललिता के व्यक्तित्व और सोच की सबसे बड़ी खासियत है उनका एक ही संस्थान के प्रति समर्पित रहना। जहाँ लोग तरक्की के लिए एक बैंक से दूसरे बैंक में चले जाते हैं, वहीं ललिता ने अपना सारा जीवन आई.सी.आई.सी.आई. को दे उसे हर स्तर पर इतनी ऊँचाइयों पर पहुँचाया कि आज अरबों का व्यापार वह कर रहा है। वह मानती हैं कि उनके पास बहुत सारे संगठनों के ऑफर आए, पर आई.सी.आई.सी.आई. एक ऐसा संगठन है जिसमें कुछ ही सालों में इतनी तेजी से परिवर्तन आया कि भारतीय अर्थव्यवस्था में कुछ अर्थपूर्ण निर्मित करने के यहाँ अवसर बहुत थे। ऐसे कुछ ही संगठन हैं जो इस तरह के अवसर दे सकते हैं, जिनकी वजह से आई.सी.आई.सी.आई. को देश के बैंकिंग फ्लक पर बदलना संभव हुआ। आई.सी.आई.सी.आई. की इस प्रक्रिया और आई.सी.आई.सी.आई. टीम का हिस्सा बनना एक अद्भुत व यादगार अनुभव से कम नहीं है। वह कहती हैं, “जीवन में इस तरह के अवसर प्रदान करनेवाले कुछ ही क्षेत्र हैं—नए प्रोजेक्ट्स खोलने, संचालन करने एवं बैंधे-बैंधाए तरीके से चलनेवाले बिजनेस को बदलने के अवसर, जहाँ सारा ध्यान केवल ग्राहक को दिया जाए। हम केवल तभी दूसरे अवसरों की तलाश करते हैं, जब हमें जीवन में कुछ अर्थपूर्ण करने की संतुष्टि नहीं मिलती है। पर जब वह संतुष्टि उसी जगह मिल जाती है तो वहाँ से जाने का ख्याल तक मन में नहीं आता है।”

ललिता के लिए काम एक जुनून, एक कमिटमेंट और एक सजगता से चुना विकल्प है। वह कहती हैं कि उनके पति मजाक करते हुए कहते हैं कि अगर मेरी त्वचा को खुरचा जाएगा तो उसमें आई.सी.आई.सी.आई. और तुम आपस में गुँथे हुए ही नजर आओगे।

लक्ष्य को पाने का जुनून

वह इतनी सहज महिला हैं कि उनसे आप अगर ऑफिस से बाहर मिलते हैं तो अंदाजा तक नहीं लगा सकते हैं कि यह वही महिला हैं, जो आई.सी.आई.सी.आई. के वित्तीय संस्थान का इतना बड़ा ढाँचा तैयार करने के लिए जिम्मेदार हैं। वह पसंद नहीं करतीं कि लोग उनकी तारीफ करें या उन्हें किसी ऊँचे पायदान पर बिठाएँ और मानती हैं कि इसमें कोई सच्चाई नहीं है। वह कहती हैं, “मैं सपनों में जीनेवाली इनसान नहीं हूँ, पर मेरा एक सपना है। हर

किसी के पास अपने लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए कोई-न-कोई सपना अवश्य होना चाहिए। पर उसके साथ ही यथार्थवादी होना भी नितांत आवश्यक है।”

उनके लक्ष्य हैं आई.सी.आई.सी.आई. में तकनीक, वित्त, गति व लोगों का विकास करना। गति की महत्ता को समझते हुए आई.सी.आई.सी.आई. ने तकनीकी विकास में तेजी से सुधार किया। वह कहती हैं कि अपने निर्धारित मानदंडों के अंतर्गत जिन लक्ष्यों को आप पाना चाहते हैं, वे आपको आत्मविश्वास व सफलता प्रदान करते हैं। उनकी नजरों में शिक्षा व सीखना लगातार सीखने की प्रक्रिया के तत्त्व हैं।

आप जीवन में जो करना चाहते हैं, वह तय करें। आपके लिए कोई और इस बात को तय नहीं कर सकता है। इस बात की कायल ललिता अपने कॅरियर के लंबे समय में लगातार चुनौतियों का सामना करने के बावजूद कभी घबराई नहीं। सन् 1997 में इंडियन मर्चेंट्स चैंबर की शाखा ने उन्हें फाइनेंस व बैंकिंग में उन्हें ‘ट्रेंटी फर्स्ट सेंचुरी अवार्ड’ से सम्मानित किया। सन् 2001 में द वूमैन ग्रेजुएट्स एसोसिएशन ने उन्हें ‘बेस्ट वूमैन एचीवर अवार्ड’ से सम्मानित किया। उसी तरह सन् 2002 में उनकी ईमानदारी की प्रशंसा करते हुए उन्हें ‘वूमैन ऑफ द ईयर’ अवार्ड दिया। जून 2010 में पावर, ट्रांसपोर्ट व इन्फ्रास्ट्रक्चर में ग्लोबल लीडर, एलस्टोम बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स की सदस्य के रूप में मनोनीत ललिता को नोकिया के निदेशक मंडल में भी चयनित किया गया।



वंदना लूथरा



सेहत के प्रति जागरूकता लाने का बीड़ा उठाया

फाऊंडर, वी.एल.सी.सी.

“जिस समय मैंने काम करना शुरू किया था, बहुत ही कम महिला उद्यमी थीं एवं लोग मुझे और मेरे काम को गंभीरता से नहीं लेते थे।”

भारत और विदेशों में 65 शहरों में 140 से अधिक ब्यूटी सेंटरों को स्थापित कर सौंदर्य का एक साम्राज्य निर्मित करना असाधारण बात है। और इसका श्रेय जाता है असाधारण व्यक्तित्व की स्वामिनी वंदना लूथरा की। वंदना लूथरा केयर क्लिनिक (वी.एल.सी.सी.) की संस्थापक वंदना के विभिन्न सेंटरों में इस समय लगभग 8,000 लोग काम करते हैं और अनुमान है कि आनेवाले वर्षों में वी.एल.सी.सी. का टर्नओवर 1,000 करोड़ रुपए को पार कर जाएगा।

एक आदर्श

एक सफल बिजनेस वूमैन की तरह दुनिया में कामयाबी अर्जित करनेवाली वंदना मात्र बिजनेस वूमैन की ही तरह सराही नहीं जाती हैं, वरन् वह आम भारतीय महिला के लिए किसी आदर्श व प्रेरणा से भी कम नहीं हैं, जिन्होंने विपरीत परिस्थितियों में भी अपनी शादीशुदा जिंदगी पर आँच नहीं आने दी। माँ-बाप की लाडली वंदना, जिन्होंने ऐशो-आराम और सुविधाओं के पालने में आँख खोली थी, जो तितली-सी अपने पंख खोले उड़ती थीं। विवाह के बाद अपने उन्हीं पंखों की उड़ान रुक जाने का न तो उन्होंने अफसोस मनाया, न ही किसी से शिकायत की। बस इस कोशिश में लग गई कि उनके साथ-साथ घर के बाकी लोगों को भी अपने पंखों को फैलाने का मौका मिल जाए।

ससुराल में रहकर उन्होंने रिश्तों की कट्र करना सीखा, एक जुड़ाव सीखा जो बाद के वर्षों में तब काम आया जब वी.एल.सी.सी. का जन्म हुआ। वह कहती हैं, “विवाह के बाद के दिनों ने मेरे अंदर एक भावनात्मक परिपक्वता भर दी, जिससे मैं उन हजारों महिलाओं के भावनात्मक पक्ष को समझ पाई, जो वी.एल.सी.सी. के माध्यम से मुझसे जुड़ीं परिवार का संचालन सफलतापूर्वक करना सफलता से बिजनेस को चलाने में मददगार साबित होता है।”

मिला अत्यधिक लाड-प्यार

12 जुलाई, 1959 को जनमी वंदना के पिता राम अरोड़ा मैकेनिकल इंजीनियर थे और अपने कॅरियर की शुरुआत उन्होंने जर्मन मेजर सीमेंस के साथ की, जिनके साथ वह 40 वर्षों तक जुड़े रहे। वंदना ने अपनी खूबसूरती अपनी माँ कामिनी से ही पाई है, जो बेहद खूबसूरत थीं। वंदना के पिता उनकी माँ को अत्यधिक प्यार व उनका सम्मान करते थे और चाहते थे कि परिवार की अन्य महिलाओं की तरह उन्हें भी उच्च शिक्षा पाने का अवसर मिले। उनके परिवार में पिछली तीन पीढ़ियों से हर कोई विदेश में जाकर शिक्षा प्राप्त कर रहा था। वंदना बताती हैं, “मेरे पिता मेरी माँ को लेकर बहुत ही पजेसिव थे और बेहद प्यार करते थे। उनके लिए वह कुछ भी करने को तैयार रहते थे। मुझे ऐसे माता-पिता मिले, जिनका आपसी रिश्ता बहुत ही सुमधुर था, जिससे जीवन में उसी सुमधुरता को कायम करने में मुझे मदद मिली। एक कुंठाहीन बचपन ही सुखद भविष्य की नींव होता है। मुझे गर्व है कि मुझे ऐसे माता-पिता मिले।”

मस्त और जिंदादिल

ऐसे संयुक्त परिवार में, जहाँ भाइयों की संख्या ज्यादा थी, पहली बेटी के रूप में पैदा हुई वंदना को अत्यधिक प्यार मिला। सबके आकर्षण का केंद्र वंदना को किसी भी नियम को तोड़ने का अधिकार था। उनकी शरारतों को देख परिवार के लोग खुश होते, जबकि उनके भाई से अपेक्षा की जाती कि वह पूर्णतया अनुशासित व्यवहार करे। अत्यधिक लाड़-प्यार और तमाम सुविधाएँ मिलने के कारण वंदना एक मस्त जीवन गुजारती थीं। मनमानी और शरारतें उनकी लगातार बढ़ती जा रही थीं, लेकिन बचपन की यही शरारतें थोड़ा बड़ा होने पर उतनी अच्छी नहीं लगतीं जितनी कि बचपन में।

वह जब 13 वर्ष की हुई तो उनके पिता को महसूस हुआ कि उनका अत्यधिक लाड़-प्यार और अनुशासनहीन जीवन वंदना को बिगाड़ रहा है, जिससे उसके भविष्य पर असर पड़ सकता है। इसलिए उन्होंने अपने रुख को थोड़ा कड़ा किया, लेकिन ऐसे नहीं कि वंदना के कोमल मन को आघात पहुँचे। उन्हें लगा कि वंदना में जीवन के प्रति गंभीरता का अभाव है और जिस तरह से लड़कियों को रहना चाहिए, वह वैसा आचरण भी नहीं करती हैं; जबकि उनका भाई, जो सेंट कोलंबस स्कूल में पढ़ता था, हमेशा क्लास में टॉप करता था। पिता के सख्ती बरतने पर और शिक्षा का महत्व समझाने के लिए वंदना ने पढ़ाई पर ध्यान देना अवश्य शुरू किया, पर अपने भाई की तरह पढ़ने में उनका इतना ध्यान नहीं था। लेकिन बाद में फिर पिता के मार्गदर्शन में वंदना स्कूल में फस्ट डिवीजन में उत्तीर्ण हुई और दिल्ली के लेडी श्रीराम कॉलेज में साइकोलॉजी में ग्रेजुएशन करने के लिए दाखिला ले लिया। वंदना जब स्कूल में थीं, तभी उनके पिता सीमेंस में डायरेक्टर बन चुके थे और उनके घर के बाहर मर्सिडीज खड़ी रहती थी।

उन्होंने वंदना को जमीनी हकीकत से परिचय कराने के लिए कहा कि वह बस से आया-जाया करें। वह चाहते थे कि उनकी बेटी, जो अब तक सुविधा-संपन्न जीवन जीने की आदी थीं, जीवन की वास्तविकताओं को समझे। उस ऐशो-आराम की महत्ता की समझे, जो बिना माँगे उसे आज तक मिलते आए थे। लेकिन वंदना इतनी मस्त थीं कि उन्हें बस से आना, बस स्टॉप तक पैदल चलकर जाना किसी रोमांच से कम नहीं लगता था। किसी भी परिस्थिति में खुद ढालने की काबिलियत उनके अंदर बचपन में ही विकसित हो गई थी।

वह कहती हैं, “मैं इतनी खुश व मस्त रहनेवाली इनसान थी कि मेरे जीवन में जो कुछ भी घटता था, उसे मैं किसी रोमांच की तरह लेती थीं। मेरी यही जिंदादली हमेशा मेरी मददगार साबित होती आई है।”

एक पहलू यह भी

वंदना लूथरा की कहानी एक ऐसी महिला है, जिसने परंपरा और आधुनिकता के दो विपरीत रूपों को एक साथ इस तरह समन्वित किया कि सामनेवाले को इस बात का पता तक नहीं चला कि वह किस तरह के अंतर्दृष्ट से गुजर रही हैं। उन्होंने परंपरा में जकड़े हुए परंपराओं की बेड़ियों को इस दृढ़ता से तोड़ा कि कोई आहत नहीं हुआ और वह अधिकारों को पाने में सफल भी हो गई।

किसी चलचित्र की भाँति उनकी जिंदगी की कहानी में भी मध्यांतर में एक नाटकीय मोड़ आया, जिसका सामना उन्होंने बहुत समझदारी और कुशलता से किया। एक बहुत ही सुसंस्कृत, धनी, ऑक्सफोर्ड में पढ़े परिवार में जनमी वंदना की परवरिश किसी राजकुमारी की तरह हुई। हर काम सलीके से और परिष्कृत ढंग से किया जाना चाहिए, यह सीख उन्हें अपने माता-पिता से मिली। लेकिन विवाह के बाद उनके जीवन के पृष्ठ पर बिलकुल ही नए सिरे से अध्याय लिखे गए।

ससुराल में शिक्षा प्राप्त करना और अपना कॅरियर बनाना केवल पुरुषों का काम माना जाता था। औरतें केवल घर के अंदर रहकर घर सँभालें, क्योंकि पति की सेवा और घर सँभालना ही पत्नी का काम हो पली-बढ़ी वंदना, जिन्हें शिक्षा का महत्त्व बचपन में ही सिखा दिया गया था, जो खुद कुछ बनने की तीव्र महत्त्वाकांक्षा रखती थीं, के लिए सिरे रूढ़िवादी परिवार में सामंजस्य बिठाना न केवल कठिन था, वरन् असंभव भी था।

पर बिना किसी शिकायत या विरोध के वंदना ने अपने ससुरालवालों का प्यार और विश्वास जीतने में वर्षों लगा दिए। उस दौरान वह यह भूल गई कि उनकी शिक्षा का सही उपयोग नहीं हो रहा है, कि अपना कॅरियर बनाना चाहती हैं, कि उनका मकसद केवल जिंदगी को घर की चारदीवारी में रहकर बिताना नहीं है।

यह त्याग उन्होंने इसलिए किया, क्योंकि अपने जिस पति को वह बेइंतहा प्यार करती थीं, उसके विश्वास को तोड़ना नहीं चाहती थीं। 16 वर्ष की कच्ची उम्र में एक क्रिसमस पार्टी में मुकेश लूथरा से हुई पहली मुलाकात ने वंदना के दिल में प्यार के असंख्य दीप जला दिए थे। इसलिए विवाह के बाद अपनी महत्त्वाकांक्षाओं को पीछे धकेल वह अपने ससुरालवालों का प्यार जीतने में लग गई। मुकेश और वंदना बेशक एक-दूसरे के लिए बने थे, पर उन दोनों के परिवारों में जमीन-आसमान का अंतर था; लेकिन वंदना ने ठान लिया था कि वह विपरीत स्थितियों में भी घबराएँगी नहीं और अपनी राह ढूँढ़कर ही रहेंगी और ऐसा उन्होंने करके दिखाया भी।

छिपी प्रतिभा

बचपन से ही स्टाइलिंग, ब्यूटी और सौंदर्य उत्पादों के प्रति उनका लगाव परिलक्षित होने लगा था। अपने बालों को वह अकसर अलग-अलग ढंग से सँवारती नजर आतीं। उनका परिवार गर्मियों की छुट्टियों में नैनीताल जाता था, वहाँ उनकी कॉटेज थी, जिसमें रहना वंदना को बहुत पसंद था। एक दिन उनकी माँ ने देखा कि वंदना ने चौकीदार की बेटी के बालों को बहुत ही खूबसूरती से काटा है। हालाँकि उन्हें यह देख बहुत आश्वर्य नहीं हुआ, क्योंकि वह अब तक अपनी बेटी के अंदर छिपी उस प्रतिभा को पहचान गई थीं, जो उन्हें फैशन और स्टाइल के करीब खींचती थी। कितनी ही बार वह अपनी बेटी के हाथों के फैशियल और मसाज का कमाल अपने ऊपर देख चुकी थीं।

वंदना अपनी गुडियों के बाल सँवारने, उनके लिए कपड़े सीने में घंटों गुजार देती थीं। बाद में तो वह स्वयं की ड्रेस की कटिंग भी करने लगी थीं। जब उनकी माँ ने यह देखा तो उनके लिए एक नई सिलाई मशीन खरीद लाई और तब तो वंदना स्वयं की ड्रेस डिजाइनर बन गई। यही नहीं, वंदना को नाचने का भी बहुत शौक था और जब-तब वह खाने की मेज पर चढ़कर नाचने लगतीं। यह देखकर उनकी माँ ने उन्हें ‘भरतनाट्यम’ सीखने के लिए भेजा।

कॉलेज की पढ़ाई पूरी करने के बाद वंदना ने ब्यूटी कल्चर में दो वर्ष का कोर्स करने के लिए एक वोकेशनल पॉलीटेक्निक में दाखिला ले लिया और इस तरह इस क्षेत्र में विधिवत् प्रशिक्षण लेने का सिलसिला आरंभ हुआ। उनकी माँ ने अल्पावधि के कोर्स करने के लिए विदेश भी भेजा। इससे उनकी रचनात्मकता निखर उठी और कुछ परिपक्वता भी आने लगी। जिस दौरान वह पोलीटेक्निक में हैल्थ व ब्यूटी केयर से संबंधित ट्रेनिंग ले रही थीं, उन्होंने देखा कि बहुत सी मोटी महिलाएँ डायटीशियन व ब्यूटी एक्सपर्ट बनने के लिए वहाँ प्रशिक्षण लेने आती हैं। “मुझे यह देखकर बहुत ही अजीब लगा, क्योंकि पतला होना और सुंदरता एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। मैं ऐसे बिजनेस में जाना चाहती थी, जो लोगों की जिंदगी को बदलने में मदद कर उन्हें सकारात्मक ढंग से जीने की प्रेरणा दे। केवल एक्सरसाइज करना ही काफी नहीं है, मेरा मानना है कि स्वास्थ्य खुशी प्रदान करता है, जो एक आत्मविश्वासी व्यक्ति बनने के समान है। और पतला होना या अच्छा दिखना आत्मविश्वास में बढ़ोतरी करता है।” वंदना कहती हैं, जिनके चेहरे पर हमेशा एक प्रसन्नता व चमक बनी रहती है।

एकत्र की जानकारी

अपने पिता के बिजनेस ट्रिप पर वह उनके साथ कई बार जर्मनी गई, जहाँ सीमेंट का हेडक्वार्टर था। जर्मनी में उन्होंने न्यूट्रीशन और कॉस्मेटोलॉजी का कोर्स किया और लंदन, म्यूनिख व पेरिस से ब्यूटी केयर, फिटनेस, फूट एंड न्यूट्रीशन, स्किन केयर के स्पेशलाइज्ड

कोर्स किए। जर्मनी में उनकी मुलाकात प्रोफेसर जोरगन हूशेल और उनकी पत्नी से हुई, जो उनके पिता के दोस्त थे और एक हैल्थ सेंटर चलाते थे। उन्होंने ब्यूटी और वेलनेस के क्षेत्र में किस तरह काम किया जा सकता है, इसके बारे में वंदना का मार्गदर्शन किया। वंदना कई बार प्रशिक्षण लेने के लिए जर्मनी जाती रहीं। हूशेल दंपती के साथ उन्हें पेरिस जाने का भी मौका मिला, जहाँ वह कॉस्मेटोलॉजी और न्यूट्रीशन के नवीनतम ट्रेंड पर वर्कशॉप संचालित करते थे। वहाँ उन्होंने नई एंटी-एंजिंग ट्रीटमेंट्स के बारे में खोज की, पिगमेंटेशन के बारे में और नई-नई तकनीकों के बारें में अध्ययन किया।

सौंदर्य के क्षेत्र में अपनी जानकारी को समृद्ध करने के दौरान वंदना यह तो निश्चय ही कर चुकी थीं कि वह क्या करना चाहती हैं, लेकिन हैल्थ सेंटर खोलने के लिए बहुत बड़ी रकम की जरूरत थी। उनके पिता ने कहा कि इतनी बड़ी रकम तो उनके पास नहीं है। साथ ही वह यह भी नहीं चाहते थे कि उनकी बेटी ब्यूटी के क्षेत्र में अपना कॅरियर बनाए।

वंदना यह सुनकर बहुत निराश हुई, क्योंकि वह तो मानो इस कला के प्रति स्वयं को समर्पित कर चुकी थीं। उनकी निराशा देख मुकेश ने उन्हें सलाह दी कि वे विवाह कर लेते हैं। इस तरह वह जो चाहे, कर पाएँगी और पिता भी उन्हें नहीं रोक पाएँगे। तब वंदना को क्या पता था कि इस निर्णय से उनके जीवन की धारा ही बदल जाएगी। सन् 1980 में वे दोनों विवाह सूत्र में बँध गए।

मिला भिन्न परिवेश

एक अंग्रेजी, आधुनिक, मांसाहारी भोजन खानेवाली लड़की एक पारंपरिक, पुराने ख्यालों के शाकाहारी परिवार में आ गई। वहाँ औरतों का जीवन केवल घर के कामों तक सीमित था और घर पर उनकी सास व ननद का राज चलता था। यहाँ बिना नहाए चाय पीने तक की अनुमति नहीं थी और चाँदी के बरतनों में खाने-पीने की बात तो बहुत दूर की बात थी, लेकिन वंदना ने अपने मन को समझाया कि चूँकि उन्होंने खुद इस जीवन को छुना है तो स्वयं ही स्थितियों को उन्हें सँभालना होगा।

जिस लड़की के आगे-पीछे हमेशा नौकरों की फौज लगी रहती थी, वह घर की और औरतों की तरह सुबह 5 बजे उठने लगी, अपने कपड़े धोने लगी और घर के सारे काम करने लगी। जब भी वंदना अपने घर जातीं, उनकी माँ का दिल उनके रूखे और खुरदुरे हाथों को देख रो उठता। लेकिन वंदना तो जैसे हर चीज को पीछे छोड़ चुकी थीं और अपने कॅरियर के बजाय ससुरालवालों के जीवन में सुधार करना ही जीवन का लक्ष्य बना लिया था।

उन्हें यह एहसास हुआ कि परिवार में सब साधन होने के बावजूद एक्सपोजर की कमी है। उनको अपने ससुर का साथ मिला और उनके साथ जाकर वंदना ने टेलीविजन और वी.सी.आर. खरीदा। इससे साथ बैठकर फ़िल्में देखने का सिलसिला आरंभ हुआ। घर के सदस्यों को धीरे-धीरे मौज-मस्ती की अवधारणा के बारे में समझ आने लगा। एक दिन ऐसा भी आया, जब लोग उन्हें बेटी और मुकेश को उस घर का दामाद समझने की भूल करने लगे।

सन् 1981 में वंदना की पहली बेटी मीरा और सन् 1985 में दूसरी बेटी पल्लवी का जन्म हुआ। उनकी बेटियाँ भी सास-ससुर के साथ उनके जुड़ाव का कारण बनीं, जो अपनी पोतियों को जी-जान से चाहते थे। विवाह के 8 वर्ष बाद मुकेश ने अलग-अलग घर ले लिया, क्योंकि छोटे भाई की शादी हो जाने के बाद घर छोटा पड़ने लगा। बेटियों के थोड़ा बड़े हो जाने पर वंदना का ध्यान अपनी भूली-बिसरी महत्वाकांक्षा पर गया।

कामयाबी की ताल

सन् 1989 में वंदना ने अपना पहला ब्यूटी और स्लिमिंग सर्विस सेंटर खोला। फिर वैज्ञानिक अनुसंधानों और पारंपरिक चिकित्सा का समन्वय कर उन्होंने वी.एल.सी.सी. की नींव रखी। लेकिन अभी वंदना को और विपरीत स्थितियों से निपटने के लिए शायद तैयार करना था, इसीलिए अपने सपनों को खुलकर पंख दे पातीं, उससे पहले उन्हें अपने प्रियजनों का दर्द सहना पड़ा और वह दुःख में डूब गई। पहले सास, फिर ससुर और पिता की मृत्यु ने उनके जीवन में खालीपन कर दिया। उसको भरने के लिए उनके पास एक ही रास्ता था कि वह पूर्णतया स्वयं को काम में डुबो दें।

हालाँकि वंदना के पास किसी तरह की मैनेजमेंट की डिग्री नहीं थी, फिर भी अपनी क्षमताओं को उन्होंने इस तरह विकसित किया कि कामयाबी उनके साथ कदम-ताल मिलाकर चलने लगी। वंदना के बढ़ते हुए काम में मदद देने के लिए सन् 2000 में मुकेश भी उनके साथ जुड़ गए। इससे उन्हें बहुत सहयोग मिला, क्योंकि उन्हें बेटियों पर भी पूरा ध्यान देना होता था।

वंदना ने अधिक-से-अधिक महिला स्टाफ को नियुक्त कर उन्हें अपने पैरों पर खड़े होने का अवसर दिया। विदेशी निवेशकों को जोड़ना उनका अगला कदम था। सन् 2004 में वी.एल.सी.सी. को हांगकांग स्थित सी.एल.एस.ए. प्राइवेट इक्विटी से 10 करोड़ डॉलर का फंड मिला।

वह कहती हैं, “जिस समय मैंने काम शुरू किया था, बहुत ही कम महिला उद्यमी थीं और लोग मुझे बहुत गंभीरता से नहीं लेते थे। जो औरतें अपना काम शुरू करती थीं, उन्हें उनका शौक मात्र समझा जाता था। इसलिए लोगों को यकीन दिलाना कठिना होता था कि मैं जो काम कर रही हूँ, उससे उन्हें फायदा होगा और इस काम की भी एक महत्व है। चूँकि उस समय सौदर्य और स्वास्थ्य की धारणा बहुत आम नहीं थी, इस क्षेत्र में अपनी पैठ बनाना आसान काम नहीं था।”

जागरूकता की जलाई मशाल

वंदना ने उस समय एक ऐसे क्षेत्र में अपनी पहचान बनाई, जिस समय उसके बारे में न तो लोगों को अधिक जानकारी थी और न ही महिलाएँ उसमें अपना कॅरियर बनाने की बात सोचती थीं। सच तो यह है कि तब वंदना ने स्वयं यह नहीं सोचा था कि वह एक दिन इतना बड़ा साम्राज्य खड़ा कर लेंगी, जिसके केंद्र न सिर्फ भारत में वरन् विश्व भर में होंगे और वे सौदर्य के क्षेत्र का पर्याय बन जाएँगी। सौदर्य ही क्यों, स्वास्थ्य व स्वयं को फिट रखने की धारणा का प्रचलन करने का श्रेय भी वंदना को ही जाता है। धीरे-धीरे वी.एल.सी.सी. के अंतर्गत बहुत सारे ब्रांड उभरे—वी.एल.सी.सी. हैल्थ केयर लि., वी.एल.सी.सी. पर्सनल केयर, वी.एल.सी.सी. वर्कआउट फैक्टरी, वी.एल.सी.सी. स्पा, वी.एल.सी.सी. इंस्टीट्यूट, वी.एल.सी.सी. एलाइव रिटेल, बी.एल.सी.सी. ब्यूटी जोन और वी.एल.सी.सी. फाउंडेशन।

वह मानती हैं कि अच्छा स्वास्थ्य पाने का अर्थ मोटापे से छुटकारा पाना या एक्सरसाइज करना ही नहीं है, बल्कि स्वास्थ्य का संबंध प्रसन्नता से है, जो इनसान को आत्मविश्वासी बनाती है। जब आप अच्छा दिखते हैं तो अच्छा महसूस करते हैं, जिसका असर पूरे व्यक्तित्व पर प्रदर्शित होता है।

अपने वोकेशनल ट्रेनिंग स्कूल, जिसके 35 शहरों में 45 कैंपस हैं, के माध्यम से वह ब्यूटी, हैल्थ और मैनेजमेंट का प्रशिक्षण देती हैं। उन्होंने एंटी-ओबसिटि फाउंडेशन भी स्थापित किया है, जो मोटापे के प्रति लोगों को जागरूक कर उसके दुष्परिणामों से अवगत कराता है। मोटापा घटाने व इसके बारे में लोगों को अवगत कराने के लिए वह कई अभियान भी चलाती हैं।

वी.एल.सी.सी. डे स्पा जो मुंबई, दिल्ली व गुडगाँव में हैं, व्यस्त जीवन-शैली से राहत दिलाते हैं। वह कहती हैं, “ये डे स्पा दिमाग, शरीर और आत्मा के लिए वेलनेस की कला को समर्पित हैं।”

आज वी.एल.सी.सी. के 10 करोड़ से भी ज्यादा संतुष्ट ग्राहक हैं और अपने यहाँ काम करनेवाले हर व्यक्ति का वह पूरा ध्यान रखती हैं। वंदना कहती हैं, “आपसे जुड़े लोग आपको सफल बनाते हैं, चाहे वह आपका बावर्ची हो या घर की सार-सँभाल करनेवाला या फिर ऑफिस का सी.ई.ओ.। मैं एक सर्विस इंडस्ट्री से जुड़ी हूँ और अगर हमारे ऊर्जा और लोगों के प्रति स्नेहमयी भाव नहीं होगा तो इस क्षेत्र में बने रहना संभव नहीं है।”

अध्यात्म की ओर रुझान

वंदना के माता-पिता दोनों ही बहुत अंतर्मुखी थे, लेकिन फिर भी वह बहुत बिंदास किसी की थीं। किसी अनजान से भी बात करने में उन्हें हिचक महसूस नहीं होती थी। वह कहती हैं कि “मेरी माँ हमेशा कहती थीं कि उनकी माँ बहुत ही अनुशासित जीवन जीने में यकीन रखती थीं और एक योगाश्रम चलाती थीं। वंदना के बचपन का काफी बड़ा हिस्सा योगाश्रम में भी गुजरा। उनके भाई और वह स्वयं प्रतिदिन वहाँ जाते थे और दो घंटे व्यतीत करते थे, जिसकी वजह से दोनों का ही रुझान अध्यात्म की ओर हो गया।”

तमन्ना, अमर ज्योति चैरिटेबल ट्रस्ट और हेल्पेज इंडिया जैसे संगठनों से जुड़ी वंदना एक समाज-सेविका भी हैं। वह ‘खुशी’ नामक एक एन.जी.ओ. भी चलाती हैं। दुविधा में होने पर मेडीटेशन का सहारा लेनेवाली वंदना मानती हैं कि जितना समय आप स्वयं के साथ बिताते हैं उतना अच्छा महसूस करते हैं।



विनीता बाली



कामयाबी का रचा नया इतिहास

मैनेजिंग डायरेक्टर, ब्रिटानिया इंडस्ट्रीज

“नियति जिद्दी में बहुत बड़ी भूमिका निभाती है, पर हम जो चुनते हैं और हमारे सामने आनेवाले अवसरों व स्थितियों का सामना हम कैसे करते हैं, उसके अनुसार ही हम उसे आकार देते हैं।”

वह बचपन की शरमीली लड़की आज ऐसी आत्मविश्वासी, सुदृढ़ विचारों- वाली महिला बन चुकी हैं, जो जब बोलती हैं तो लोग बहुत धैर्य व तन्मयता से उनकी बात सुनते हैं। चाहे वे उनकी कंपनी के लोग हों या वे अमेरिका के राष्ट्रपति बिल किलिंटन के ‘किलिंटन ग्लोबल इनीशिएटिव’ में न्यूयॉर्क में हिस्सा लेने आए प्रतिनिधि।

ब्रिटानिया इंडस्ट्रीज की मैनेजिंग डायरेक्टर विनीता बाली आज सफलता के उस मुकाम पर पहुँच चुकी हैं, जहाँ उनकी मिसालें दी जाती हैं। अवसर, नियति और निरंतर कुछ करते

रहने के जुनून ने उन्हें आज उस शिखर पर ला खड़ा किया है, जहाँ पहुँचने के बारे में खुद उन्होंने कल्पना तक नहीं की थी।

अलग ही दुनिया थी

11 नवंबर, 1955 को जनमीविनीता बचपन में बहुत ही जिद्दी थीं और यही चाहती थीं कि कोई उन्हें तंग न करे और जो वह करना चाहती हैं, उन्हें करने दिया जाए। अगर कोई बात उनके दिमाग में बैठ जाती तो वह उसे पूरा करके ही रहती थीं। अपनी ही दुनिया में अपने आप नए-नए खेल बनाते वह खुश रहतीं। अकेले रहने की विनीता की आदत से उन्हें बाहर निकालने के लिए उनकी माँ अमृत, जिनकी कला व संगीत में दिलचस्पी थी, ने उन्हें डांस स्कूल में डाल दिया। पर विनीता तो हफ्तों तक एक कोने में बैठी रहीं और अपने हमउम्र बच्चों के साथ बात करने या घुलने-मिलने की कोई इच्छा जाग्रत् नहीं की।

लेकिन एक दिन अचानक विनीता ने कथक सीखने का उत्साह प्रकट किया। उनकी माँ और पिता की खुशी का तो ठिकाना नहीं रहा और उन्हें लगा कि उनकी बेटी के सामने अब ऐसी दुनिया के दरवाजे खुलने में देर नहीं लगेगी, जहाँ उसके दोस्त होंगे, जहाँ वह सबके साथ अपनी खुशियाँ बाँट सकेगी, जहाँ उसे अपनी भावनाओं को व्यक्त करने में कोई हिचक नहीं होगी।

उनके माता-पिता दोनों के शौक अलग-अलग थे, लेकिन इससे उनके विकास में किसी तरह का अवरोध पैदा होने के बजाय उसे एक निश्चित आकार मिलने में मदद मिली। उनकी माँ को जहाँ एक तरफ संगीत सुनना एवं कविताओं से लगाव था और लोगों से मिलना-जुलना पसंद था, वहीं उनके पिता कुंदन का पढ़ने और ज्ञान हासिल करते रहने की ओर रुझान था।

अजीब कल्पनाएँ

माता-पिता के सपनों व पसंद के विपरीत विनीता के सपने ही कुछ अलग हट कर थे। उस समय अजीब-अजीब विचार उनके मन में आते थे। यहीं वजह थी कि बचपन में वह बस कंडक्टर बनना चाहती थीं, क्योंकि उन्हें बस में पैसे लेता और टिकट देता व्यक्ति बहुत ही मजेदार लगता था। वह कहती हैं, “मुझे लगता था कि जो लोग बस में चढ़ते हैं, उनका पूरा नियंत्रण उसके हाथ है, क्योंकि वहीं उन्हें बस में चढ़ाता था और बस से उतारता था।” फिर कुछ समय बाद उनके अंदर हवाई जहाज उड़ाने की इच्छा पनपने लगी; लेकिन वह कुछ समय के लिए ही रही, क्योंकि फिर उनके अंदर न्यूरो सर्जन बनने की धून सवार हो गई।

ऐसा इसलिए हुआ, क्योंकि उनके घनिष्ठ मित्र के पिता डॉक्टर थे और वह उन्हें बहुत प्रभावित करते थे। उनकी ये अजीबोगरीब कल्पनाएँ 11 वर्ष तक ही कायम रहीं।

कथक सीखने का जो सिलसिला एक बार आरंभ हुआ तो 12 वर्षों तक जारी रहा और 15 वर्ष की उम्र में जब उन्होंने अपनी पहली एकल प्रस्तुति की तो उन्हें लगा कि नृत्य की इस विधा को भी कैरियर बनाया जा सकता है। ‘कथक सीखते-सीखते मैंने अनुशासन का पाठ पढ़ा और समझा कि जीवन में परफेक्शन कितना मायने रखता है। इसी दौरान मुझे शंभू महाराज, गिरिजा देवी, लतीफ अहमद खान जैसे महान् कलाकारों से मिलने का मौका मिला।’ एक साक्षात्कार में विनीता ने बताया था।

कथक में महारत हासिल करने के अतिरिक्त जीसस एंड मेरी स्कूल (दिल्ली) में पढ़ते हुए वह अन्य गतिविधियों में भी हिस्सा लेने लगी थीं, चाहे वह खेलकूद हो या नाटक। स्कूली जीवन में उन्हें सुषमा सेठ, बेरी जॉन जैसे रंगमंच के कलाकारों के साथ काम करने का मौका मिला।

नेतृत्व करने की असाधारण विशेषताएँ

बचपन में अपने में सिमटी रहनेवाली विनीता स्कूल में हमेशा क्लास कैप्टेन रहीं और फिर हेड-गर्ल बन गई। उनका यह गुण कॉलेज में भी देखने को मिला। दिल्ली के लेडी श्रीराम कॉलेज में पहले वह स्टूडेंट्स यूनियन की वाइस प्रेसीडेंट बनीं और फिर प्रेसीडेंट। यही नहीं, स्कूल-कॉलेज दोनों में उन्होंने नेतृत्व करने की असाधारण विशेषताओं के लिए कई अवार्ड भी जीते।

लेडी श्रीराम कॉलेज से ग्रेजुएशन पूरा करने के बाद विनीता ने सन् 1975 में इकोनॉमिक्स में पोस्ट ग्रेजुएशन करने के लिए जब दाखिले के फॉर्म भरे तो उन्हें दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स और जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी दोनों ही जगह प्रवेश मिल गया। यही नहीं, उन्हें कोलकाता के आई.आई.एम. और मुंबई यूनिवर्सिटी के जमनालाल बजाज इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट में भी दाखिला मिल गया। ऐसा लग रहा था मानो चारों दिशाओं से उनका आह्वान किया जा रहा हो। एक सफल महिला बनने की राह में अवसरों के द्वार उन्हें कदम-कदम पर खुलते नजर आने लगे; पर बिजनेस में मास्टर्स करने जैसी बात उनके दिमाग में दूर-दूर तक नहीं थी। वह तो इकोनॉमिक्स में पोस्ट ग्रेजुएट कर आई.ए.एस. की परीक्षा में बैठना चाहती थीं और भारतीय विदेश सेवा को चुनना चाहती थीं। मैनेजमेंट की पढ़ाई करने के साथ-साथ वह थिएटर से भी जुड़ी रहीं।

नियति के खेल

लेकिन नियति ने शायद उनके लिए और बेहतर व रोमांचक जीवन का ताना-बाना बुन रखा था। इसीलिए जब उनकी चर्चेरे बहन मुंबई से दिल्ली आई तो उसने विनीता के माता-पिता को इस बात के लिए मना लिया कि वह बिजनेस स्टडी के लिए उसे मुंबई भेज दें। इससे उसे दुनिया को भी जानने-समझने का मौका मिलेगा। उनके माता-पिता ने जब यह देखा कि विनीता की भी यही इच्छा है तो वह राजी हो गए और पहली बार विनीता को घर से दूर अकेले मुंबई प्रवास के दौरान हॉस्टल में रहने का मौका मिला। उन्हें तब इस बात का आभास भी नहीं था कि 18 वर्ष की उम्र में दूसरे शहर में रखे उनके कदम उन्हें दुनिया के 45 देशों की यात्रा पर ले जाएँगे और उन्हें 6 अलग-अलग देशों व महाद्वीपों में काम करने का मौका मिलेगा।

एक नई शुरुआत

मुंबई में वोल्टाज के कंज्यूमर प्रोडक्ट डिवीजन में बतौर मैनेजमेंट ट्रेनी उनके कैरियर जीवन की शुरुआत हुई। रसना सॉफ्ट ड्रिंक का बाजार में आना उनके कैरियर की ऐसी उपलब्धि थी, जिसने उनके प्रोफेशनल जीवन की दिशा ही बदल दी। वह कहती हैं, “मैं अपने आपको भाग्यशाली मानती हूँ कि मुझे बेहतरीन लोगों के साथ काम करने का मौका मिला जिन्होंने एक ट्रेनी होने के बावजूद बहुत धैर्य रखते हुए मेरा मार्गदर्शन किया।” ब्रांड मैनेजमेंट की बारीकियाँ बहुत मेहनत के साथ सीखने एवं कठिन प्रशिक्षण के बाद उन्हें ब्रांड मैनेजर के रूप में कैडबरी इंडिया में काम करने का अवसर मिला और चॉकलेट कन्फेक्शनरी का पूरा पोर्टफोलियो उनके पास आ गया। विनीता के प्रयासों व मेहनत के कारण तीन वर्षों में बिक्री दुगुनी हो गई।

जुड़ा एक और अध्याय

नियति एक बार फिर से उनके जीवन में नया अध्याय जोड़ने को आतुर थी, तभी अमेरिका में पढ़ने के लिए रोटरी स्कॉलरशिप के लिए विनीता ने अपनी एक दोस्त के कहने पर मजाक-मजाक में अप्लाई कर दिया और इससे पहले वह गंभीरता से उसके बारे में कुछ सोच पातीं, उन्होंने रोटरी इंटरनेशनल की ग्रेजुएट इंटर्न स्कॉलरशिप मिल गई, जिसमें एक वर्ष के लिए सारा खर्च वही वहन करते थे और दुनिया में कहींभी उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए जाया जा सकता था। इस अवसर का लाभ उठाते हुए उन्होंने मिशिगन स्टेट यूनिवर्सिटी से बिजनेस एंड इकोनॉमिक्स में पोस्टग्रेजुएशन करने के लिए दाखिला ले लिया। यही नहीं, उन्हें संयुक्त राष्ट्र में ग्रेजुएट इंटर्नशिप प्रोग्राम के लिए चयनित किया गया।

कैडबरी में वह पहली महिला एग्जीक्यूटिव थीं और अपनी काबिलियत का परिचय भी दे चुकी थीं, इसलिए पढ़ाई करने के लिए उन्हें छुट्टी दे दी गई। यू.एन.डी.पी. के भाग सेंटर फॉर ट्रांसनेशनल कॉरपोरेशंस में विनीता को काम मिल गया, जहाँ उन्होंने दक्षिण-पूर्वी एशिया में दूरसंचार की भूमिका व आर्थिक विकास में एम.एन.सी. की भूमिका जैसे विषय पर रिसर्च और रिपोर्ट की। वह रिपोर्ट यू.एन.लाइब्रेरी में जमा की जानी थी। यूनिवर्सिटी से वॉशिंगटन में होनेवाले ग्लोबल लीडरशिप प्रोग्राम के लिए चुने जानेवाले दो छात्रों में से वह एक थीं। ऊर्जा के स्रोतों व उनके संरक्षण विषय पर हुए इस सम्मेलन में भाग लेकर उन्होंने ऊर्जा क्षेत्र के बारे में काफी जानकारी हासिल की।

फिर एक चुनौती

पढ़ाई पूरी होने के बाद कैडबरी ने उन्हें इंग्लैंड में जॉब ऑफर की और वह बोर्नविले चली गई, जहाँ से सारा कन्फेक्शनरी बिजनेस होता था। दो वर्ष ब्रांड मैनेजर की हैसियत से वहाँ विस्पा जैसे नए उत्पाद को लॉज्च करनेवाली टीम का हिस्सा बनने के बाद नए अनुभवों व नए परिवेशों के अनुसार स्वयं को ढालते रहना सीखने के बाद सन् 1986 में विनीता भारत आई। कैडबरी की सबसे युवा जनरल मैनेजर बनने का अवसर प्राप्त करनेवाली विनीता को सन् 1991 में कैडबरी ने यंग लीडर्स एक्सचेंज प्रोग्राम के लिए नाइजीरिया भेजने का निर्णय लिया, ताकि कैडबरी नाइजीरिया के बोर्ड में बतौर मार्केटिंग डायरेक्टर वह वहाँ जाकर भारतीय बाजार में बिक्री और विपणन करने की पृष्ठभूमि तैयार कर सकें। उन्हें वहाँ के मैनेजिंग डायरेक्टर डॉ. क्रिस्टोफर कोलाडे के साथ काम करने का अवसर मिला, जिनसे उन्होंने न सिर्फ बिजनेस के बारे में सीखा वरन् लीडरशिप और मानवता का पाठ भी पढ़ा।

उनके भारत लौटने से पहले फिर एक बार कैडबरी ने एक चुनौतीपूर्ण काम उन्हें सौंप दिया। नाइजीरिया में बाजार की वृद्धि में उनके असाधारण योगदान को देख दक्षिण अफ्रीका में भी बिक्री बढ़ाने का कार्य उन्हें सौंपा गया। “लेकिन मैं इस ऑफर को लेकर थोड़ी आशंकित थी, क्योंकि न मैं अंग्रेज थी, न ही अफ्रीका की। इसलिए देश के सामाजिक ढाँचे में फिट होने में परेशानी आ सकती थी।” इसलिए विनीता ने फैसला लिया कि वह पहले वहाँ जाएँगी, वहाँ के लोगों से मिलेंगी और फिर कंपनी को बताएँगी कि वहाँ रहेंगी या नहीं। लेकिन वहाँ जाकर उन्हें एहसास हुआ कि वह इस देश में रहना चाहती हैं, जहाँ नेल्सन मंडेला के रिहा होने के बाद से एक आशावाद की लहर बह रही थी।

होते रहे अनुभव

सन् 1993-94 में उनके नेतृत्व में कैडबरी ने दक्षिण अफ्रीका में अपनी मार्केटिंग दोबारा मजबूत कर ली और हर पहलू से मार्केटिंग व सेल्स को मुख्य केंद्र बना डाला। वहाँ के उपभोक्ताओं की पसंद क्या है और वे क्यों किसी ब्रांड को खरीदते हैं, यह जानना विनीता के लिए किसी खोज से कम नहीं था। लेकिन उनकी इस खोज का सिलसिला केवल दक्षिण अफ्रीका तक ही नहीं थमा, अलग-अलग देशों में रहने, वहाँ की संस्कृति को अपनाने और उस देश के इतिहास से पहचान करने की खोज ने जहाँ एक तरफ उनके आगे ज्ञान का असीमित संसार खोल दिया, वहीं उन्हें लचीले बने रहते हुए किसी के विचारों, संस्कृति और सोच को निष्पक्ष होकर समझने की क्षमता भी दी। वह कहती हैं, “इन सारे अनुभवों ने मुझे एक अच्छा इनसान बनाने में मदद की। पैसा आवश्यक है, पर मैं अपने काम को एंजॉय करना चाहती हूँ, इसलिए रोमांचक ढंग से जीती हूँ और पूरी दुनिया देखना चाहती हूँ। किसी देश में रहकर उसके इतिहास, संस्कृति और लोगों के बारे में जानते हैं जिससे अनुभवों में वृद्धि होती है।”

कैडबरी के साथ उनका कैरियर बुलंडियों पर था, पर इन बुलंडियों को अभी और शिखरों तक पहुँचना था, इसलिए सन् 1994 में कोकाकोला कंपनी ने अटलांटा स्थित अपने कॉरपोरेट हेडक्वार्टर में उन्हें वर्ल्डवाइड मार्केटिंग डायरेक्टर का पद ऑफर किया। दुनिया के सबसे लोकप्रिय ब्रांड से जुड़ने से बेहतर विकल्प और क्या हो सकता था।

सन् 1997 में उन्होंने लैटिन अमेरिका में वाइस प्रेसीडेंट, मार्केटिंग की जिम्मेदारी सँभाली और 1999 में चिली में एन.डी.एन. डिविजन के प्रेसीडेंट की। सन् 2001 में उन्हें कॉरपोरेट ऑफिसर बना दिया गया और वाइस प्रेसीडेंट व हेड ऑफ स्ट्रेटजी के रूप में चेयरमैन के साथ उनकी जवाबदेही शुरू हो गई, पर 2003 तक बाजार में बदलाव आने लगा और कोक के बाजार में भी मंदी का असर दिखने लगा।

थामा अवसरों को

कुछ नया करने की चाह में विनीता ने जायम ग्रुप जॉइन कर लिया, जिसे मार्केटिंग गुरु सर्जीयो जायमान ने अटलांटा में गठित किया था। उसी दौरान उन्हें माँ की बीमारी की खबर मिली और वह भारत लौट आई। वह बहुत दृढ़ता से इस बात को मानती हैं, “जीवन में अवसर लहर की तरह आते हैं, जो कभी किसी के लिए ठहरते नहीं हैं। या तो व्यक्ति उस लहर पर विजय पाने के लिए ऊपर उठता है या नीचे झुक जाता है, ताकि वह गुजर जाए।” लेकिन विनीता ने किसी भी अवसर को यों ही गुजर नहीं जाने दिया, चाहे वह किसी भी रूप में, किसी भी कठिनाई से युक्त होकर ही क्यों न आए। रोमांच उनकी सबसे बड़ी ताकत है, फिर चाहे वह खेल में हो या जिंदगी में। बहुत ही कम लोग जानते हैं कि पतली-दुबली

सी दिखनेवाली विनीता बहुत अच्छी हॉकी की खिलाड़ी रह चुकी हैं तथा बैडमिंटन, बास्केट बॉल भी खेला करती थीं और कुछ समय पहले तक टेनिस भी।

सन् 2005 में वह नस्ली वाडिया की कंपनी ब्रिटानिया इंडस्ट्रीज लि. में बतौर सी.ई.ओ. जुड़ गई। एक वर्ष के भीतर ही उन्हें मैनेजिंग डायरेक्टर बना दिया गया और बोर्ड ऑफ डायरेक्टर्स में भी आ गई। ब्रिटानिया जैसी कंपनी, जो उस मुश्किल दौर से गुजर रही थी, उसे सँभालना किसी चुनौती से कम नहीं था। वह कहती हैं, “ब्रिटानिया में चुनौती बहुत बड़ी थी और इस उत्कृष्ट ब्रांड को सँभालने और उसे नए ढंग से सँवारने की जिम्मेदारी मुझे उस ओर खींच रही थी। कंपनी लगभग दो वर्षों से बिना किसी कमान के चल रही थी और उसे उपभोक्ताओं के लिए प्राथमिकता में सबसे उच्च कोटि की कंपनी बनाना था। बिजनेस मॉडल को पूरी तरह से बदलना था।”

गढ़े नए प्रतिमान

विनीता ने ब्रिटानिया की जब जवाबदारी सँभाली तो उनकी पहली प्राथमिकता थी सीनियर एग्जीक्यूटिव के बीच व्याप्त असंतोष को दूर करना और बोर्ड को एकजुट रखना। उनकी दूसरी प्राथमिकता थी अपने कारोबारी प्रतिद्वंद्वियों पारले व आई.टी.सी. के बीच ब्रिटानिया के शेयरों को न केवल बचाना, वरन् उन्हें बढ़ाना जिसे रीजनल ब्रांड्स जैसे सूर्या फूड व प्रिया गोल्ड तथा अन्य स्थानीय ब्रांड भी ललकारने लगे थे। बतौर नए सी.ई.ओ. कंपनी में उनके आगमन को अनिच्छा से स्वीकारा गया, पर विनीता नई टीम का नेतृत्व सँभालते हुए काम में जुट गई। वह कहती हैं, “जब भी मैं कोई नया असाइनमेंट लेती हूँ तो देखती हूँ कि क्या उसमें मुझे कुछ नया सीखने को मिलेगा कि नहीं, मुझे काम में महत्वपूर्ण योगदान देने का अवसर देगा कि नहीं और काम करते समय मुझे उसका आनंद उठाने का अवसर देगा कि नहीं। अगर मुझे जॉब में यह सब नहीं मिलता है तो मैं वह असाइनमेंट नहीं लेती।”

उनके आगमन के बाद कंपनी का राजस्व चार वर्षों में दोगुना हो गया और आज 100 अरब से ज्यादा की बिस्कुट मार्केट के रूप में कंपनी अपनी साख बना चुकी है। उसका 5,70,000 टन का 50 प्रतिशत वार्षिक उत्पादन अब माइक्रो न्यूट्रिएंट्स के साथ मजबूत हो चुका है और कंपनी इस खपत को बढ़ाने का निरंतर प्रयास कर रही है। इसके अतिरिक्त हैल्थ ऐंड वेलनेस, डिलाइट ऐंड लाइफ स्टाइल वर्ग में वह बिजनेस बढ़ाने में जुटी हैं। उनका सदा यही प्रयास रहता है कि रिटेल शोल्प्स में कभी उत्पादों की कमी न हो। वह एक ऐसी सक्षम मैनेजर व निपुण मार्केटिंग प्रोफेशनल हैं, जो लक्ष्य भेद का कोई मौका नहीं छोड़ती हैं। पिछले 5 वर्षों में विनीता ने ब्रिटानिया इंडस्ट्रीज की आय को दोगुना कर दिया है, जो आज 1,500 करोड़ से 3,800 करोड़ की हो गई है। यह बढ़ोतरी होना बहुत आसान बात नहीं थी।

उन्हें बढ़ती हुई वस्तुओं की कीमतों व लगातार बढ़ती प्रतियोगिता से टक्कर लेनी थी, खासकर पारले उत्पादों से, जो ग्लूकोज बिस्कुट मार्केट में सर्वोच्च पैठ जमा चुकी थी।

सन् 2010 में ब्रिटानिया न्यूट्रिशन फाउंडेशन को स्थापित करना उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि थी। केवल लाभ बढ़ाना ही उनका लक्ष्य नहीं है, बल्कि ब्रिटानिया न्यूट्रीशन फाउंडेशन की स्थापना और उस पर पूरा ध्यान देना उनका मकसद बन गया है। यह फाउंडेशन विभिन्न खाद्य वर्गों में पोषण के अनुसंधान व विकास में सहयोग देती है।

सबसे महत्वपूर्ण काम जो उन्होंने ब्रिटानिया में किया था वह था स्त्रियों को भी पुरुषों के बराबर हक व अवसर प्रदान करना। वह कहती हैं, “हमें अवसरों व काबिलियत की समानता निर्मित करने की आवश्यकता है। हमारे देश में 50 प्रतिशत जनसंख्या महिलाओं की है, पर उन्हें शिक्षा के कम अवसर मिलते हैं और उन्हें लगातार अपने वजूद को बचाए रखने के लिए संघर्ष करते रहना होता है।”

परफेक्शन को बनाया ताकत

80' के दशक में पुरुष आधिपत्य बिजनेस में महिला का बड़ी-बड़ी कंपनियों से जुड़ना और स्वयं को स्थापित करना आसान काम नहीं था। ‘मैं कर सकती हूँ’ या ‘मेझे मैं काबिलियत है’ जैसी बातें करना विनीता को न तो पसंद था न ही वह ग्लास सीलिंग तोड़ने के लिए यह सब करने में यकीन करती थीं। केवल काम पूरा करना, वह भी बेहतर ढंग से करते हुए, की शैली अपनाकर वह सीढ़ी-दर-सीढ़ी चढ़ती गई। वह मानती हैं कि एक बार आप जब परिणाम दिखाने लगते हैं तो अच्छे संगठनों में महिला या पुरुष होना कोई मायने नहीं रखता है। मायने रखता है आपका काम और योग्यता, जिसके बल पर ही आप सम्मान अर्जित कर सकते हैं। ऐसा केवल धैर्य व आत्मविश्वास के बल पर तथा योग्यता व कर्मठता के बल पर ही हो सकता है।

हर काम को परफेक्शन से करने में यकीन रखनेवाली विनीता तब तक किसी काम को लेकर संतुष्ट नहीं होती हैं, जब तक कि उन्हें नहीं लगता कि उसमें एक परफेक्शन आ गया है। अनुशासन और समय की पाबंदी का सम्मान करना उनकी प्रवृत्ति है और अपने विश्वास व मूल्यों के साथ वह कोई समझौता नहीं करतीं। वह मानती हैं कि एक ताकतवर महिला होना इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि आप इस तरह बिजनेस के अंदर व बाहर एक प्रभाव डाल सकते हैं और ताकत से ज्यादा प्रभाव डालना मायने रखता है। वह चाहती हैं कि लोग उन्हें उनके काम से जानें, न कि उनके पद या वेतन से जुड़े शून्यों से। राह में आनेवाले हर अवसर को थामने की उनकी इच्छा उन्हें निरंतर नए कार्यों को करने के लिए उकसाती है।

अपनी तमाम व्यस्तताओं के बीच भी विनीता ने संगीत और नृत्य के अपने शौक को बरकरार रखा है। भारतीय व पश्चिमी शास्त्रीय संगीत के साथ उन्हें गजलें व पुरानी हिंदी फ़िल्मों के गाने सुनना भी पसंद है। उनका कोई भी दिन सैर और योगा के बिना आरंभ नहीं होता है। दोनों ही चीजें उनके शरीर व दिमाग को ऊर्जा से भरती हैं।

चुनौतियाँ देती हैं ऊर्जा

शादी न करके अपनी शर्तों पर जीनेवाली विनीता बहुत ही साधारण ढंग से रहती हैं। पहली बार उन्हें देखने पर अंदाजा लगाना मुश्किल होता है कि वह इतने उच्च पद पर आसीन एक कामयाब महिला हैं। वर्ष में 150 दिन विदेश यात्रा पर रहने वाली विनीता दुनिया के अधिकतम कोनों को देख चुकी हैं। चुनौतियों से ऊर्जा प्राप्त करनेवाली विनीता जब खाली होती हैं तो घूमने निकल जाती हैं और उस जगह के बारे में जितना संभव हो, पढ़ती हैं, ताकि किसी भी नई जगह जाने से पहले वह वहाँ के हर पहलू के बारे में अवगत हो सकें। वह मानती हैं कि इस धरती पर आपकी यात्रा के दौरान आपको अनेक अवसर व विकल्प मिलते हैं और जो कदम आप उठाते हैं, वे जिंदगी को आकार व दिशा देते हैं।

ग्लैमरस लुक या मेकअप से स्वयं को बाहरी तौर पर आकर्षित बनाने के बजाय वह बहुत ही सादे पहनावे में रहती हैं। पुराने मानचित्र, मिट्टी के बरतन, किताबें खरीदती वह अकसर आपको नजर आ जाएँगी। किसी कॉरपोरेट महिला की बजाय वह सहज रहने में यकीन रखती हैं। यही वजह है कि वह आसानी से लोगों के साथ घुल-मिल जाती हैं और हर पल का भरपूर आनंद उठाती हैं।



डॉ. शिखा शर्मा



लोगों की जिंदगी में सुधार करने की पहल

डायटीशियन, फाउंडर मैनेजिंग डायरेक्टर, न्यूट्री हैल्थ सिस्टम प्रा.लि.।

“एक खुशाल जीवन अपने आहार एवं जीवन-शैली में लगातार सुधार और एक सकारात्मक मानसिकता बनाए रखने का समन्वय है।”

वजन घटाने की आवश्यकता से युक्त स्वस्थ जीवन का उनके क्रांतिकारी विचार का समर्थन करनेवाले अनेक लोग हैं—फिर चाहे वे महिलाएँ हो या पुरुष, जब बात होलिस्टिक हैल्थ की आती है तो डॉ. शिखा शर्मा का नाम सबसे पहले जहन में कौंधता है। फिट रहने व स्वस्थ रहने की धारणा को नए सिरे से परिभाषित करनेवाली शिखा ने लोगों को न सिर्फ उनकी खाने की आदतों में सुधार करने के लिए प्रेरित किया है, वरन् वह लगातार उनकी जीवन-शैली में बदलाव करने के महत्त्व के बारे में भी समझा रही हैं।

अचानक आना हुआ इस क्षेत्र में

दिल्ली में जनमीव पली-बढ़ी शिखा ने वसंत विहार, दिल्ली के मॉडर्न स्कूल से स्कूली शिक्षा हासिल की और फिर मौलाना आजाद मेडिकल कॉलेज से एम.बी.बी.एस. किया। उन्होंने उसके बाद सन् 1992 में दिल्ली के जी.बी.पंत हॉस्पिटल के कॉर्डियोलॉजी विभाग में जूनियर रेजीडेंट डॉक्टर की हैसियत से काम करना आरंभ किया। लेकिन तब उन्हें एहसास हुआ कि लगभग हर तरह की बीमारी का इलाज है, पर हमारे देश में प्रिवेंटिव मेडिसिन से जुड़े उपायों की कमी है। इसलिए उन्होंने अपनी डॉक्टर की नौकरी छोड़कर सारा ध्यान उस और केंद्रित कर दिया। आरंभ में उन्होंने वजन घटाने के व्यावहारिक पहलुओं को सीखने के लिए एक वेट लॉस सेंटर में काम किया। उसके बाद सन् 1999 में जन्म हुआ ‘क्लीनिक द रिज्यूवेशन’ का। शुरुआती दौर में वेट मैनेजमेंट क्लीनिक की तरह इसे खोला गया, फिर सन् 2003 में शिखा की नई दिल्ली में ‘न्यूट्री हैल्थ सिस्टम प्राइवेट लिमिटेड’ लॉज्च होने से होलिस्टिक वेलनेस की अवधारणा की शुरुआत हुई। उन्होंने कभी सोचा भी नहीं था कि वह इस क्षेत्र में आएँगी और कैरियर में बदलाव आने के साथ उनकी भी जिंदगी की दिशा बदल जाएगी।

संतुलित आहार पर जोर

एक प्राकृतिक व संतुलित आहार किसी भी तरह की बीमारी के लिए बेहतरीन दवा है। यही वह सोच है, जिस पर देश की प्रतिष्ठित न्यूट्रीशनिस्ट (पोषक आहार विज्ञानी) और वेलनेस एडवाइजर दृढ़ता से यकीन करती हैं। उनके वेट लॉस सेंटरों की शृंखला में हर महीने हजारों लोग आते हैं और शिखा खुद वजन घटाने की महत्ता पर जोर देती हैं। डॉ. शिखा शर्मा ने इस बात के प्रति लोगों को सचेत करके कि जीवन में संतुलित आहार कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, हजारों लोगों की सोच व जीवन-शैली में सुधार कर दिया है। उन्होंने लोगों को इस बात का एहसास कराया है कि शरीर पर चढ़ा वह अतिरिक्त वजन खाना खाने का नतीजा नहीं है, बल्कि गलत तरीके का भोजन करने का नतीजा है।

शिखा सबको यही सलाह देती हैं कि अपने शरीर का ख्याल रखें। अगर आपका शरीर स्वस्थ होगा, तभी आप जीवन का आनंद पूर्णतया ले सकते हैं। वजन घटाने के लिए खाना छोड़ने के बजाय सही तरह की खाने की आदतों को अपनी जीवन-शैली का हिस्सा बनाना निहायत आवश्यक है। ऐसा खाना जो प्राकृतिक हो और विटामिन तथा अन्य पौष्टिक तत्वों से युक्त हो। वह कहती हैं, “किसी भी देश के विकास में पोषण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हमारे देश में आधी आबादी तो कुपोषण का शिकार है और किसी-न-किसी कमी का शिकार है, जबकि बाकी आधी ज्यादा खाने की वजह से जीवन-शैली के विकारों

से जूझ रही है। लोग जितनी जल्दी समझ लें कि पौष्टिक आहार की महत्ता क्या है, उतना अच्छा होगा।”

महिलाएँ काम करें

खुद एक महिला उद्यमी की तरह पहचान बनानेवाली शिखा मानती हैं कि एक महिला उद्यमी होना हमारे समाज में बेशक गर्व की बात हो, पर वह मानती हैं कि महिला होने के कारण समाज की या तो आपसे बिलकुल ही नहीं या बहुत कम अपेक्षाएँ होती हैं। वह कहती हैं, “इस बात का बहुत फायदा मिलता है, क्योंकि इस तरह आपको बिलकुल अलग ढंग से काम करने की आजादी मिलती है। एक महिला के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वह काम करने के ऐसे तरीके ढूँढ़े जिससे वह आसान व सुरक्षित ढंग से काम कर सके। आज अनेक महिला उद्यमी देखने को मिल रही हैं, क्योंकि कम पूँजी में काम करने में अब उन्हें कोई आपत्ति नहीं होती; दूसरे वे अपने घर से काम कर सकती हैं। यह बात उनके हित में जाती है। मैं चाहती हूँ कि ज्यादा-से-ज्यादा महिलाएँ अपना कृरियर बनाएँ और अपने पैरों पर खड़ी हों, यह समय की माँग भी है।” काम और परिवार के बीच समन्वय करना आसान काम नहीं है, पर शिखा ऐसा करने की पूरी कोशिश करती हैं। उनके लिए दोनों ही चीजें महत्वपूर्ण हैं, इसलिए परिवार के साथ समय बिताने के लिए वह पार्टियों के निमंत्रण ठुकरा देती हैं। अजनबियों के साथ समय बिताने की अपेक्षा वह परिवारवालों के साथ समय बिताना पसंद करती हैं। अपने खाली समय में शिखा पढ़ना पसंद करती हैं, खासकर स्वामी विवेकानंद की किताबें, जो उन्हें बहुत प्रेरित करते हैं।

योगदान व सम्मान

उनका न्यूट्री हैल्थ सिस्टम प्राइवेट लिमिटेड ऐसा संगठन है, जो न्यूट्री जेनेटिक्स पर आधारित वैज्ञानिक प्रोग्राम्स उपलब्ध कराने में अग्रणी है। पिछले कुछ वर्षों में तेजी से इस संगठन का विकास हुआ है और दिल्ली व एन.सी.आर. में इसके सात सेंटर हैं। क्लीनिक में डाइट हेल्पलाइन है, जिसके माध्यम से चौबीसों घंटे भारतीय व विदेशी ग्राहकों को परामर्श प्रदान किया जाता है। इसके अलावा उनके क्लाइंट्स में बड़े-बड़े नाम भी शामिल हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख हैं—ताज होटल, पार्क होटल, जिंदल ग्रुप, स्टार टी.वी., आजतक टी.वी., डिस्कवरी इंडिया आदि। शिखा शर्मा हिंदुस्तान टाइम्स, टाइम्स ऑफ इंडिया, इंडियन एक्सप्रेस, इंडिया टुडे जैसे अखबारों व फेमिना और कॉस्मोपोलेटिन जैसी महिला पत्रिकाओं के लिए कालम भी लिखती हैं।

प्रिवेंटिव मेडिसिन के क्षेत्र में किए अपने असाधारण कार्यों व योगदान के लिए शिखा को अनेक अवार्ड भी मिले हैं। सन् 1999 में उन्हें ‘वूमैन एचीवर्स अवार्ड’ से सम्मानित किया गया। भारत निर्माण सोसायटी ने उन्हें ‘टैलेंटड लेडीज अवार्ड’ से सम्मानित किया। सन् 2005 में इंडिया टुडे ने उन्हें देश की शीर्ष 50 युवा एचीवर्स की सूची में सूचीबद्ध किया। सन् 2006 में ‘फेडरेशन ऑफ इंडियन चैंबर्स ऑफ कॉमर्स’ ने उन्हें ‘यंग एचीवर्स अवार्ड’ से सम्मानित किया। सन् 2006 में ही उन्हें भारत के सबसे बड़े सौंदर्य समारोह मिस इंडिया में भाग लेनेवाली लड़कियों को प्रशिक्षण देने का अवसर मिला।

सन् 2007 में उन्होंने अमेरिका में मोटापे पर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में भी हिस्सा लिया। वहाँ वे चिकित्सा व मोटापा नियंत्रण के क्षेत्र से जुड़ी दुनिया भर की प्रतिष्ठित हस्तियों से मिलीं और आपस में विचारों का आदान-प्रदान किया। सन् 2007 में उन्हें प्रतिष्ठित ‘कल्पना चावला सम्मान’ दिया गया। इसके अतिरिक्त वह विभिन्न टी.वी. चैनलों पर हैल्थ एक्सपर्ट की हैसियत से प्रोग्राम भी देती हैं।



शिखा शर्मा



वित्तीय क्षेत्र में सफलता के नए प्रतिमान बनाए

मैनेजिंग डायरेक्टर, ऐक्सिस बैंक

“सही कदेरे और आपके साथ सही होगा। मैं मानती हूँ कि कर्म का पूरा चक्र इसी जीवन में पूरा हो सकता है।”

शिखा शर्मा ने न सिर्फ ऐक्सिस बैंक में एक सफल निर्माता की तरह अपनी प्रतिष्ठा कायम की है, वरन् आई.सी.आई.सी.आई. बैंक में भी। आई.सी.आई.सी.आई. प्रूडेंशियल लाइफ इंश्योरेंस में चीफ एक्जीक्यूटिव की तरह उनकी सफलता किसी ऐतिहासिक घटना से कम नहीं है। ये उनके नेतृत्व में भारत का एक सबसे बड़ा जीवन बीमा बैंक बनाया था। भारत के तीसरे सबसे बड़े प्राइवेट बैंक ऐक्सिस को 2 करोड़ रुपए सालाना के पैकेज पर जॉइन करने के बाद वहाँ भी शिखा शर्मा ने म्यूचुअल फंड बिजनेस लॉज्च कर नया कीर्तिमान स्थापित किया।

सीखने और खोजने की यात्रा

बहुत कम लोग जानते हैं कि शिखा दिल्ली में मिरांडा कॉलेज में फिजिक्स रिसर्चर बनना चाहती थीं, लेकिन घर से कॉलेज बहुत दूर होने के कारण उन्हें इकोनॉमिक्स पढ़ने के लिए लेडी श्रीराम कॉलेज में भेजा गया। एक वैज्ञानिक बन अनुसंधान करने की चाह रखनेवाली शिखा का बैंकिंग और फाइनेंस की दुनिया में आना इस तरह पूर्व नियोजित नहीं था। हालाँकि आज उन्हें देखकर कोई नहीं कह सकता है कि वह इस दुनिया के लिए नहीं बनी थीं।

सबसे विस्मय की बात तो यह है कि तीन दशकों के अपने कॅरियर में उन्हें कई बार वह काम करने के लिए कहा गया, जिसके बारे में उन्हें बिलकुल ज्ञान नहीं था।

आई.सी.आई.सी.आई. स्क्योरिटील में मार्केट बिजनेस गठित करना और उससे कहीं अधिक चुनौतीपूर्ण हाईटेक फंडिंग ग्रुप, जो आज सुनने में बहुत सरल बात लगती है, उन दिनों एकदम नई चीज थी। वह कहती हैं, “फिर मैंने रिटेल फाइनेंस और लाइफ इंश्योरेंस लॉञ्च किया, जिसके बारे में मैं पूर्णतया अनभिज्ञ थी। लेकिन सीखने और खोजने की यात्रा मुझे हमेशा अभिभूत करती रही है। मेरे लिए यह बात बहुत मायने रखती थी कि मैं अपने हर काम को सीखूँ। प्रूडेंशियल में चुनौती ज्यादा बड़ी थी, क्योंकि एक चलते हुए बिजनेस को सँभाल भी पाऊँगी कि नहीं, यह डर सदा साथ रहता था। अब ऐक्सिस में मेरे लिए सबसे बड़ी चुनौती है कि वर्तमान टीम को साथ लेकर संगठन को ऊँचाइयों के और पायदान पर ले जाऊँ।”

केवल काम करने में यकीन

लखनऊ में जनमी शिखा का बचपन जबलपुर, देहू रोड और देहरादून तथा गंगानगर जैसे भारत के छोटे-छोटे शहरों में बीता, जहाँ उनके पिता की पोस्टिंग हुई। उनके पिता चूँकि सेना में थे, इसलिए एक तरफ जहाँ अनुशासित जीवन एवं नियमित दिनचर्या उनके बचपन का अभिन्न हिस्सा थी, वहीं अपने भाई-बहनों के साथ पेड़ों पर चढ़ना, फल तोड़ना एवं हरी घास पर दौड़ना और ठंडी हवा का आनंद लेना भी उनके बचपन से जुड़ी सुखद यादें हैं।

आम मध्यम वर्गीय परिवार की तरह वह भी यह सुनकर बड़ी हुई कि पढ़ाई के अतिरिक्त कोई और विकल्प सफलता पाने का नहीं हो सकता, इसलिए उसे नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए। शरमीली और आमतौर पर चुप रहनेवाली शिखा के माता-पिता ने कभी लड़के-लड़की में फर्क नहीं किया, इसलिए उन्हें हमेशा अधिक पढ़ने और आगे बढ़ते जाने का प्रोत्साहन मिला। उनके पिता चाहते थे कि वह क्लास में हमेशा फर्स्ट आएँ। चूँकि

उनका व्यवहार क्लास में बहुत अच्छा रहता था और वह फर्स्ट भी आती थीं, इसलिए अपनी अध्यापिकाओं की भी चहेती थीं। आज 52 वर्ष से अधिक की शिखा शर्मा अपनी व्यस्तता और बोर्ड रूम या बंद कमरों में होनेवाली मीटिंग्स की वजह से प्रकृति के सान्निध्य से स्वयं को वंचित महसूस करती हैं। लेकिन उन्हें इस बात को लेकर कोई शिकायत नहीं है, क्योंकि वह जीवन के हर पल का आनंद उठाने तथा जीवन के बहाव के साथ बहने में यकीन रखती है।

उनके पिता सदा उनके आदर्श रहे और हमेशा यही पाठ पढ़ाया कि तुम अपना काम करो और फल की चिंता मत करो। उनकी इसी बात को गाँठ बाँध शिखा केवल कर्म करती हैं और मानती हैं कि ईश्वर आपकी मदद करने के लिए हमेशा आपके साथ है। उनका यह भी मानना है कि अगर हम डर जाते हैं तो जीवन की आधी लड़ाई तो वैसे ही हार जाते हैं।

प्रकृति से अत्यधिक लगाव रखनेवाली

भारत के सबसे तीसरे बड़े निजी क्षेत्र के बैंक ऐक्सिस की मैनेजिंग डायरेक्टर और सी.ई.ओ. होने के नाते अपने पद की गरिमा और दायित्वों को निभाने के लिए उन्हें निरंतर विकास योजनाओं और परियोजनाओं को स्वीकृति प्रदान करने में लगे रहना पड़ता है। आज तो मुंबई के कफ परेड की आयमान छूती इमारत में स्थित अपने ऑफिस की शीशे की खिड़की से अरब सागर के विस्तार को देख वह लहरों पर चमकती सूरज की रोशनी या फिर रात के जुगनुओं की तरह जगमगाती बिजली की रोशनी को देख ही संतुष्ट हो जाती हैं। कम-से-कम कुछ पल के लिए ही सही, वह प्रकृति के अद्भुत नजारे को देख तो पा रही हैं।

स्पष्ट सोच

अत्यधिक प्रतियोगी बैंकिंग क्षेत्र में होने के बावजूद शिखा मानती हैं कि पारदर्शिता कायम रखना अत्यंत आवश्यक है। वह कहती हैं कि “बहुत से लोग मुझे कहते हैं कि मैं बहुत पारदर्शी हूँ। मेरे चेहरे पर तुरंत मेरे भाव परिलक्षित हो जाते हैं और एक सीनियर एकजीक्यूटिव के लिए ऐसा करना कर्तई उचित नहीं है। लेकिन मैं इस बारे में जितना सोचती हूँ, मुझे लगता है कि मैं ऐसी ही हूँ। मैं अपने चेहरे पर किसी तरह का नकाब लगाकर व्यवहार नहीं कर सकती हूँ। इस वक्त मैं सीनियर एकजीक्यूटिव न लगूँ, इससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता है।

शिखा की सोच एकदम स्पष्ट व व्यावहारिक है। वह मानती हैं कि सफलता पाने के दो ही सूत्र हैं—एक तो अवसर और दूसरा महत्वाकांक्षा। आई.सी.आई. सी.आई. में उनका होना

उन्हें मिला सबसे बड़ा अवसर था। इसे वह अपनी किस्मत मानती हैं, क्योंकि उस समय ललिता गुप्ते वहाँ पहले से ही थीं। और वहाँ कार्यरत पुरुषों को यह एहसास हो चुका था कि महिला बॉस होना अब कोई अजीबो-गरीब बात नहीं है। दूसरे, उस समय बेहतर वेतन की चाह में बहुत से पुरुषकर्मी बैंक छोड़कर जा रहे थे।

वह कहती हैं, “हम महिलाएँ वहाँ रुकी हुई थीं, क्योंकि अन्य संगठनों में महिलाओं को लेकर संवेदनशीलता नहीं थी कि वे बच्चों की वजह से छुट्टियाँ ले सकें। और हमारे लिए उस समय पैसे से ज्यादा स्वयं के वजूद को कायम करना अधिक महत्वपूर्ण था।”

मिलीं कठिन स्थितियाँ

सन् 2009 में ऐक्सिस बैंक की प्रबंध निदेशक और सी.ई.ओ. के रूप में उसके चेयरमैन पी.जी. नायक के तमाम विरोधों के बावजूद उनका इस पद पर आना किसी चुनौती से कम नहीं था। बोर्ड के सारे सदस्यों ने उन्हें समर्थन दिया और चेयरमैन की इस दलील को नकार दिया कि बैंक को इस पद के लिए किसी बाहरी व्यक्ति की जरूरत नहीं है।

शिखा, जो आई.सी.आई.सी.आई. में 28 वर्ष बिताकर इस बैंक से तमाम विरोधों के बीच जुड़ी थीं और वरिष्ठ अधिकारी उनके आगमन से खुश नहीं थे, ऐसे में उनके लिए वह समय किसी बहुत बड़ी परीक्षा से कम नहीं था।

“जब मैंने ऐक्सिस में नए पद को सँभाला तो वहाँ उत्तराधिकार की लड़ाई चल रही थी; पर मुझे इससे कोई फर्क नहीं पड़ा, क्योंकि मैं तो उस संगठन की थी ही नहीं। मेरे लिए तो वह सीधा-सादा समीकरण था कि मुझे उस प्रक्रिया में हिस्सा लेने के लिए आमंत्रित किया गया था और उससे जुड़े परिणामों का सामना करने के लिए मैं तैयार थी। इसमें सेना से जुड़ी मेरी पृष्ठभूमि और कठिन स्थितियों में भयहीन रहकर उनका सामना करने की प्रवृत्ति ने साथ दिया।

“हालाँकि मेरे दोस्तों ने मुझे चेतावनी दी थी कि मुझे उस जगह नहीं जाना चाहिए जहाँ मुझे लेकर विरोध है, क्योंकि लोग मेरी सफलता के आड़े आ सकते हैं और परेशान करने के लिए अवरोध खड़े कर सकते हैं। असहयोग मिलने की आशंका से मैं भी थोड़ी चिंतित अवश्य हो गई थी; पर एक बार कदम आगे उठाने पर पीछे मुड़ना मेरा स्वभाव नहीं था। हैरानी की बात तो यह है कि ऐक्सिस बैंक में आने के बाद आशा के विपरीत सबने मुझे सहयोग दिया और एक पल के लिए भी यह एहसास नहीं दिलाया कि मैं बाहरी व्यक्ति हूँ।”

ईमानदारी पर यकीन

जब शिखा ने ऐक्सिस बैंक के नए प्रबंध निदेशक व सो.ई.ओ. का कार्य-भार सँभाला तो मीडिया ने उनके करोड़ों रुपए के पैकेज के बारे में लिखा। अपने काम का ढिंढोरा पीटने से परहेज करनेवाली शिखा, जो केवल ईमानदारी से काम करने में विश्वास रखती आई हैं, जो बेशक यूँ चर्चा में आना पसंद नहीं आया, कहती हैं, “अपने काम का गुणगान करना मुझे कभी पसंद न था। पर अब का माहौल ऐसा हो गया है कि अपने काम का आप बखान नहीं करते तो बातें अनसुनी रह जाती हैं। आपको अपनी मार्केटिंग करने की अनिवार्यता बहुत बढ़ गई है। मेरे ब्रांड का प्रचार हो रहा था, यह अच्छी बात थी; पर निजी तौर पर मैं अच्छी पत्नी, माँ एवं बेटी की भूमिका में स्वयं को बाँधे रखकर चमक-दमक और मीडिया के प्रचार से दूर रहना बेहतर समझती हूँ।

टाटा ग्रुप कंपनी के चीफ एक्जीक्यूटिव अपने पति संजय के साथ भी वह सच्चाई, ईमानदारी व सादगी के सिद्धांत को ही लागू करती हैं और ये सिद्धांत किसी जादू की तरह काम करते हैं, “अगर आपके पास सबको सुनाने के लिए एक ही कहानी है तो अलग-अलग लोगों को सुनाने के लिए आपको कहानी के अलग-अलग संस्करणों को याद रखने की जरूरत नहीं रहती। सच महत्वपूर्ण है, क्योंकि कई स्तरों पर वह जीवन को आसान बना देता है।”

मृदुभाषी और विचारों से ही नहीं, रहन-सहन में भी सादगी रखनेवाली शिखा इस बात को दृढ़ता से मानती हैं कि हमेशा सच के साथ अडिगता से खड़े रहना चाहिए और दूसरों को यह विश्वास दिलाना भी जरूरी है कि निष्पक्षता और सही दृष्टिकोण की हमेशा कद्र की जाती है।

कोशिश करना है जरूरी

वह कहती हैं कि मैं अपने बच्चों को हमेशा यही कहती हूँ कि अपनी योग्यताओं और क्षमताओं का पूरी तरह से इस्तेमाल न कर पाना जीवन की सबसे बड़ी गलती है। अपनी क्षमताओं का पूरी तरह से इस्तेमाल करने के लिए आप अपनी तरफ से पूरी कोशिश करो और किसी भी प्रयास को यह सोचकर न छोड़ो कि वह महत्वहीन है। पर सारे प्रयासों के बावजूद अगर तब भी आप अपने लक्ष्य को न पा सको तो कुछ और करने की कोशिश कर सकते हो, “जब भी मैंने आई.सी.आई.सी.आई. में कोई जिम्मेदारी की, मैंने हर बार ऐसा ही किया और मैंने जो पाया, उससे न सिर्फ मैंने स्वयं को वरन् अपने आसपास के लोगों को भी आश्वर्य में डाल दिया। लेकिन मेरे अंदर आत्मविश्वास के बीज का प्रस्फुटन इसी तरह हुआ।”

दो किशोर बच्चों की माँ शिखा भी किसी अन्य महिला की तरह कभी-कभी इस अपराध-बोध से गुस्सा हो जाती हैं कि वह उनके साथ पर्याप्त समय नहीं बिता पाती हैं, इसलिए अक्सर उस समय की पूर्ति अधिक लाड़ करते हुए वह भी करती हैं। साथ ही उन्हें इस बात पर भी गर्व है कि उनके दोनों बच्चों ने भी सच को अपने जीवन का मूलमंत्र बनाया हुआ है और जानते हैं कि जीवन जीने का अन्य कोई तरीका किसी भी तरह स्वीकार्य नहीं हो सकता है।

वह अपनी कामयाबी का श्रेय जितना अपने पिता को देती हैं उतना ही अपने पति को भी। वह कहती हैं, “मेरे पिता, मेरे स्कूल के टीचर और फिर के.के. कामथ जैसे मार्गदर्शकों के बिना मैं यहाँ नहीं पहुँच पाती। उन लोगों ने सदा नई चुनौतियों को उठाने के लिए मुझे प्रेरित किया—उन लोगों ने, जो मुझ पर विश्वास रखा, उसकी वजह से ही मैं यहाँ पहुँच पाई हूँ।” वह मानती हैं कि बिना पति और परिवार के सहयोग के कोई भी महिला अपने कैरियर में सफलता प्राप्त नहीं कर सकती है। उसे कदम-कदम पर उनका साथ चाहिए होता है। शायद यही वजह है कि कदम-दर-कदम सीढ़ियों चढ़ती वह निरंतर आगे बढ़ती जा रही हैं।



शोभना भरतिया



प्रिंट मीडिया को दी नई दिशा

चेयरपर्सन, हिंदुस्तान टाइम्स समूह

“मैं समय की पाबंद हूँ और दूसरों से भी यही अपेक्षा रखती हूँ; लेकिन आप वह सबकुछ नहीं कर सकते हैं, इसलिए बेहतर यही है कि अपनी प्राथमिकताएँ तय कर ली जाएँ।”

अ.गर एच.टी. (हिंदुस्तान टाइम्स) अखबार का स्वरूप बदला है और वह नए जमाने के साथ कदम मिलाकर चल पा रहा है तो उसका सारा श्रेय शोभना भरतिया को जाता है, जो इससे जुड़ने के तुरंत बाद यह समझ गई थीं कि इस दैनिक अखबार में व्यापका बदलाव की जरूरत है।

4 जनवरी, 1957 को कलकत्ता में जन्मी शोभना भरतिया का बिड़ला परिवार की परंपराओं के अनुसार यदि लालन-पालन हुआ तो ऐसे परिवार में पैदा होने के कारण हर तरह की

सुविधाएँ भी मिलीं। समृद्धि, संपन्नता, समाज में प्रतिष्ठा—हर चीज बिड़ला परिवार के पास थीं; लेकिन इसके बावजूद शोभना व उनकी दोनों बहनों को माता-पिता ने यह सिखाया कि पाँव जमीन पर रखकर चलना भी उतना जरूरी है जितनी कि आसमान पर नजरें टिकाना। अच्छे संस्कार व मूल्य विरासत में शोभना को मिले।

सादगी भरा बचपन

शोभना के पिता प्रतिष्ठित उद्योगपति के.के. बिड़ला, जिनके कई स्कूल चलते थे, अपनी पुत्रियों को बिड़ला समूह के स्कूलों में पढ़ाई करने के लिए सिर्फ इसलिए नहीं भेजा, क्योंकि इससे उन्हें विशेष रियायतें व सुविधाएँ मिलतीं और वह नहीं चाहते थे कि बिना कोशिश किए उनकी पुत्रियों को कुछ भी हासिल हो। वह उनका ऐसा उज्ज्वल भविष्य चाहते थे, जो किन्हीं बैसाखियों के सहारे नहीं, स्वयं उन्होंने खुद सँवारा हो। अगर वे अपने ही स्कूलों में जातीं तो इस तरह न तो वे शिक्षा के सही मायने सीख पातीं, न ही स्वावलंबी बन पातीं। सही भी है कि अगर प्रतियोगिता की भावना न हो तो जीतने की इच्छा भी विकसित नहीं होती है।

शोभना को अपनी स्कूली शिक्षा टोनी लॉरेटो हाउस कॉन्वेंट स्कूल से की और बाद में लॉरेटो कॉलेज से ही ग्रेजुशन की डिग्री प्राप्त की। इसके बाद उन्होंने शौकिया इंटीरियर डेकोरेशन का कोर्स भी किया। वह कहती हैं, “हमारे नाम के आगे बिड़ला जुड़ा है, इस बात से स्कूल में किसी को कोई फर्क नहीं पड़ता था। दिल्ली में जिस तरह परिवार के नाम व स्तर को तरजीह दी जाती है, कोलकाता में नहीं दी जाती थी; वैसे भी वहाँ हमारे जैसे कई परिवार थे, जिनकी समाज में बहुत इज्जत थी। चूँकि हमारा परिवार सादगी-पसंद था, इसलिए दिखावा या तड़क-भड़क से सदा दूर ही रहा। ऐसे में हमारे शानो-शौकत का प्रदर्शन करने का तो सवाल ही नहीं उठता था। इसके विपरीत ‘बिड़ला’ होने के कारण कई बार स्कूल में हमें नुकसान भी उठाना पड़ा। हमसे गलती होना हमारे विरुद्ध ही जाता था और हमें भी हमेशा सतर्क रहना पड़ता था। हमारे हाथों कोई भूल न हो जाए, यह सतर्कता बहुत सी छोटी-छोटी मस्तियों को छीन लेती है। उस पर हमारी माँ हम पर पूरी निगरानी रखती थीं।”

तल्लीन हो गई गृहस्थी में

किसी भी मारवाड़ी परिवार की तरह बिड़ला परिवार में भी महिलाओं के लिए नौकरी करना या अपने ही घर के कारोबार को सँभालने की अनुमति नहीं थी। वे घर में रहकर गृहिणी होने के दायित्व निभाती थीं; पर इसके अतिरिक्त उन्हें और काम करने की छूट थी और वह था समाज-सेवा करना। यह कार्य भी वे बिड़ला घराने के स्कूलों या अस्पतालों में जाकर ही

कर सकती थीं; इसलिए वहाँ जाकर वे लोगों की समस्याएँ सुन उनका निदान किया करतीं। ऐसा नहीं था कि यह बंधन केवल बहुओं के लिए ही था, बेटियों को भी कोई अलग तरह की छूट नहीं दी गई थी।

लड़कियों को गृहस्थी ही सँभालनी है, यही सोच होने के कारण विवाह भी बहुत कम उम्र में कर दिए जाते थे, इसलिए शोभना का विवाह भी 18 वर्ष की उम्र में एक संपन्न उद्योगपति श्याम सुंदर भरतिया से कर दिया गया, जिनका संबंध ‘वार्म ऑर्गेनिक म्रूप’ से था। वह आज ज्यूविलियेंट ग्रुप के सूत्रधार हैं। सन् 1976 में प्रियव्रत और 1979 में शामित दो बेटों के जन्म के बाद शोभना परिवार की जिम्मेदारियों में इतनी संलग्न हो गई कि किसी और चीज के बारे में सोचने या करने के लिए उनके पास वक्त ही नहीं बचता था।

आसान नहीं था रास्ता

सन् 1981 में श्याम सुंदर भरतिया ने उत्तर प्रदेश में एक औद्योगिक इकाई स्थापित की, जो उनके लिए बहुत फायदेमंद सिद्ध हुई। उसके बाद शोभना और श्याम भरतिया दिल्ली आ गए। यहीं वह समय था जब शोभना के जीवन ने एक नई करवट ली और उनके जीवन की एक दिशा तय कर दी, जिसने उन्हें देश-विदेश में सम्मान और नाम दिलवाया।

के.के. बिड़ला चाहते थे कि उनके समूह की कंपनियाँ उनकी पुत्रियाँ सँभालने लगें। शोभना भरतिया की उस दौरान राजनीति में भी दिलचस्पी जाग्रत् होने लगी थी। यह देखकर उनके पिता को यहीं ठीक लगा कि वह उन्हें एच.टी. मीडिया की जिम्मेदारी सौंप दें। सन् 1986 में एच.टी. मीडिया में डायरेक्टर की हैसियत से शोभना ने पहली बार प्रोफेशनल जिंदगी में कदम रखा। बेशक उन्हें यह पद विरासत में मिला था और वह भी बिना किसी मेहनत व संघर्ष के, बावजूद उसके पारिवारिक कारोबार होने का अर्थ यह नहीं था कि उनके लिए हर रास्ता तय करना आसान था।

उस समय ‘हिंदुस्तान टाइम्स’ की परंपरा को सँभालकर आगे ले जाना उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती थी, खासकर वह चुनौती और बड़ी हो जाती है जब बदलाव अपेक्षित हो।

किए बदलाव

अगर नए सिरे से किसी उद्यम या संगठन की शुरुआत की जाए तो नया माहौल निर्मित करने और नई तकनीकों को लगाने में दिक्कत नहीं आती है। लेकिन किसी स्थापित संस्थान में बदलाव करने में बहुत परेशानियाँ आती हैं, खासकर वह संस्थान खबरों से जुड़ा हो और आम जीवन उससे प्रभावित होता है। बदलाव की जरूरत है, यह लीक पर चलनेवाले लोगों

को समझना सबसे दुर्लभ कार्य साबित हुआ। शायद यही वजह है कि शोभना को एच.टी. में कंप्यूटर लाने में 18 साल लग गए।

जब उन्होंने एच.टी. का प्रबंधन सँभाला तो वह दिल्ली का मुख्य समाचार-पत्र था, पर टाइम्स ऑफ इंडिया ने उसकी टक्कर में खड़ा होना शुरू कर दिया था। उसका मुकाबला करना ही उनका लक्ष्य बन गया तो शोभना किसी किस्म का हंगामा या शोर मचाए बिना एच.टी. की आंतरिक व्यवस्था का नवीनीकरण करना आरंभ कर दिया। इस बदलाव के साथ ही अखबार का सर्कुलेशन दुगुना हो गया।

इसके बाद उनका दूसरा बड़ा कदम था एच.टी. के नए संस्करण लॉज्च करना। अगस्त 2005 में मुंबई संस्करण की लॉजिंग की गई और पूँजी बाजार में भी दस्तक दी। एच.टी. मीडिया का पब्लिक इश्यू आया तब तक लखनऊ, पटना, राँची व कोलकाता के संस्करणों का प्रकाशन आरंभ हो चुका था। उसी दौरान शोभना ने एच.टी. समूह की 20 फीसदी इक्विटी हेंडरसन ग्लोबल, जो ऑस्ट्रेलिया की बैंकिंग, बीमा व पैंशन क्षेत्र में सक्रिय कंपनी थी और सिटी ग्रुप को बेची। विदेशी निवेश जुटानेवाला पहला प्रिंट मीडिया समूह बन गया। उसके बाद एच.टी. समूह ने पॉल स्ट्रीट जनरल के साथ कंटेंट्स शेयरिंग अनुबंध किया। इसके अंतर्गत शोभना ने इकोनॉमिक्स टाइम्स, बिजनेस स्टैंडर्ड व बिजनेस लाइन के विरुद्ध मोर्चा खोलते हुए अंग्रेजी बिजनेस समाचार-पत्र 'मिट' लॉज्च किया। एच.टी. मीडिया ग्रुप की पब्लिक इक्विटी द्वारा 400 करोड़ अर्जित करने का एच.टी. को जाता है।

समय की पाबंद

संपादकीय निदेशक होने के नाते उनका काम कंपनी की संपादकीय नीतियों को बनाना व निर्देशित करना है, जो बहुत ही जिम्मेदारी का काम है और बखूबी शोभना इसे निभा रही हैं।

व्यस्त जीवन-शैली के बावजूद वह अपने पढ़ने के शौक को बरकरार रखे हुए हैं। एच.टी. मीडिया की जिम्मेदारी के अतिरिक्त वह अनेक संगठनों के प्रतिष्ठित पदों को भी सँभाल रही हैं। वह प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया की चेयरपर्सन हैं और इंदिरा गांधी मेमोरियल ट्रस्ट एवं भारतीय विद्या भवन की ट्रस्टी भी हैं।

अपने प्रोफेशनल व निजी जीवन के बीच बखूबी समन्वय करना वह जानती हैं और इसका श्रेय वह अपने पिता को देती हैं, जिन्होंने उन्हें प्रबंधन और समयबद्धता का पाठ पढ़ाया। वह कहती हैं, “मैंने देखा है कि जो व्यक्ति समय का पाबंद होता है, जो अपनी सीमा में रहकर काम पूरा करता है, उसका जीवन बहुत सहजता से चलता है। फिर इससे कोई फर्क

नहीं पड़ता कि उसके पास कामों की लंबी सूची है। मैं स्वयं समय की पाबंद हूँ और दूसरों से भी यही अपेक्षा रखती हूँ। लेकिन आप वह सबकुछ नहीं कर सकते हैं, जो आप चाहते हैं, इसलिए अपनी प्राथमिकताओं को तय करना जरूरी है। साथ ही यह भी नहीं भूलना चाहिए कि आपको अपने परिवार को समय देना भी आवश्यक है।”

आध्यात्मिक प्रवृत्ति

बचपन से ही सुबह-शाम दोनों वक्त पूजा करनेवाली शोभना धार्मिक कर्मकांडों से दूर रहते हुए अध्यात्म की ओर प्रवृत्त रहती हैं। वह कहती हैं कि मेरे समस्त प्रश्नों के समाधान मुझे ‘गीता’ पढ़कर मिल जाते हैं।

अखबार, अध्यात्म, राजनीति और परिवार—हर भूमिका में निपुण राज्यसभा सदस्य शोभना को सन् 1989 में इंटरनेशनल कल्चरल ऑर्गेनाइजेशन द्वारा ‘आईसीडीओ-नेशनल अवार्ड फॉर डेवलपमेंट’ दिया गया। सन् 1990 में ‘महिला शिरोमणि’ 1991 में ‘विजयाश्री अवार्ड’ से सम्मानित किया गया। 1992 में प्रेस इंडिया और 1993 में नेशनल यूनिटी अवार्ड प्राप्त किया। सन् 1996 से वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम ने उन्हें ‘ग्लोबल लीडर ऑफ हुभारा’ अवार्ड से सम्मानित किया, फिर 2001 में उन्होंने ‘आउटस्टैंडिंग वूमैन ऑफ द ईयर’ अवार्ड जीता। सन् 2005 में शोभना भरतिया को पत्रकारिता में उनके योगदान के लिए पद्मश्री दिया गया।

निरंतर अपने अखबार की प्रगति में संलग्न शोभना अब ऐसी मीडिया शक्ति बन चुकी हैं, जिन्होंने बिना किसी अनुभव के इतने बड़े प्रकाशन समूह को न सिर्फ सँभाला वरन् उसमें सुधार कर उसे अग्रणी अखबारों की श्रेणी में भी ला खड़ा किया।



सिमोन टाटा



भारत की कॉस्मेटिक सम्राज्ञी

चेयरपर्सन, ट्रेंड लि.

“मैंने जो क्षीरका वह काम करवाएँकरवाएँ और अपनी गलतियों से, जिन्हें मैंने कभी नहीं ढोढ़ाया। मुझे लगता है, गलतियों का न ढोढ़ाया जाना बहुत जब्दूरी है।”

एक लंबी पारी खेलनेवाली सिमोन टाटा एक ऐसी शख्सियत हैं, जिन्होंने एक छोटी व अज्ञात कॉस्मेटिक कंपनी, जो टाटा ऑयल मिल्स की एक सहायक थी, को भारत की अग्रणी कॉस्मेटिक कंपनियों में से एक बना दिया। लक्मे नामक इस कंपनी ने भारतीय फैशन और कॉस्मेटिक का चेहरा हमेशा के लिए बदल दिया। अपनी इसी सफलता की वजह से सिमोन एम. टाटा भारत की कॉस्मेटिक सम्राज्ञी के रूप में जानी जाती हैं।

युद्ध से प्रभावित बचपन

अपने में ही केंद्रित रहनेवाली सिमोन को न तो चर्चा में रहना पसंद है, न ही साक्षात्कार देना। अपने जीवन को वह सार्वजनिक बनाने से परहेज करती हैं। जन्म से फ्रांसीसी सिमोन का बचपन व युवावस्था जेनेवा में बीती। उस समय प्राइवेट स्कूलों की संख्या बहुत कम थी और इसलिए बच्चे गाँवों के स्कूलों में पढ़ने जाया करते थे। सिमोन टाटा का बचपन द्वितीय विश्व युद्ध और युद्ध के तनाव के बीच गुजरा, क्योंकि स्विट्जरलैंड जैसे देश भी उसके प्रभाव से अछूते नहीं थे। सिमोन के परिवार को खाने, कपड़े, पेट्रोल की कमी सहते हुए जीने की आदत हो गई थी। अपने बचपन के दिनों को याद करते हुए वह कहती हैं, “स्विट्जरलैंड में एक जगह से दूसरे जगह जाना बहुत कठिन था और किसी के पास कार नहीं थी। हम साइकिल पर आते-जाते थे। वास्तव में युद्ध की स्थितियों ने हमें बहुत जल्दी ही जिम्मेदारियों का बोध करा दिया था।”

अनुभवों ने सिखाया

भारत में कॉस्मेटिक बिजनेस को व्यावसायिक रूप देनेवाली पहली महिला के रूप में गौरव प्राप्त करनेवाली सिमोन टाटा ने फैशन और कॉस्मेटिक क्षेत्र के मानकों को उसी दृढ़ता से पुनः परिभाषित किया, जैसे वर्षों पहले उन्होंने स्विट्जरलैंड में पहाड़ से गिरने पर स्वयं को सँभाला था। अधिकांश उच्च स्तरीय फैशन उद्यमी, जो विश्व भर में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं, ने जीने के सलीके को परिष्कृत करने व अपने सामाजिक व व्यावसायिक तथा लोगों से संवाद स्थापित करने की निपुणताओं को तराशने के लिए फिनिरिंग स्कूलों का सहारा लिया। और स्विट्जरलैंड के फिनिरिंग स्कूल तो खासतौर पर इन सबके लिए बहुत प्रसिद्ध हैं, जहाँ जाना किसी के लिए भी गौरव की बात हो सकती है। लेकिन वहाँ रहने के बावजूद सिमोन ने किसी फिनिरिंग स्कूल में दाखिला लेना अनिवार्य नहीं समझा, क्योंकि उन्हें लगता था कि ये उन माता-पिता के लिए उपयुक्त थे, जो समझा नहीं पाते थे कि स्कूली पढ़ाई पूरी होने के बाद उनकी बेटियों को आगे क्या करना चाहिए।

सिमोन ने केवल कॉलेज की पढ़ाई की और बिजनेस से जुड़ी कोई डिग्री उनके पास नहीं थी, जिसका उन्हें आज भी अफसोस होता है। वह कहती हैं, “मुझे उन लड़कियों को देखकर ईर्ष्या होती है, जिनके पास एम.बी.ए. की डिग्री है। मैंने तो केवल अपने अनुभव से ही सीखा है।”

एक नाटकीय मोड़

एक पर्यटक की तरह सन् 1955 में भारत आने और उद्योगपति नवल टाटा से शादी करने के बाद सिमोन भारत में ही बस गई। अपने बेटे के जन्म के बाद जब वह दिल्ली में थीं तो

उनकी त्वचा में खुशकी हो जाने की वजह से पपड़ियाँ-सी उतरने लगीं। लेकिन दिल्ली के सर्द मौसम में अपनी सूखी और संवेदनशील त्वचा को ठीक करने के लिए उन्हें कोई क्रीम या लोशन नहीं मिला। तब उन्होंने सोचा कि ‘जब टाटा के पास लक्मे है तो हम क्रीम व लोशन क्यों नहीं बना सकते?’

यह प्रश्न, जो उन्होंने बाद में टाटा से जुड़े लोगों के सामने रखा और उसने उनकी जिंदगी को एक नाटकीय मोड़ दे दिया। जब लक्मे ने उन्हें नौकरी दी तो उन्होंने उसे स्वीकार कर लिया और इस तरह से वह लक्मे के बोर्ड से जुड़ गई। भारत में ब्यूटी सैलून और 100 प्रतिशत प्राइवेट लेबल स्टोर खोलनेवाली वह पहली महिला भी हैं।

नियति का खेल

एक महीने में प्रत्येक दिन दो घंटे यह काम करके के लिए पर्याप्त होगा, सोचकर उन्होंने शुरुआत की। लेकिन सिमोन के इस निर्णय ने उनके सामने विकल्पों संभावनाओं का असीम विस्तार खोल दिया और नए-नए प्रयोग करने एवं सीखने की अदम्य लालसा ने उन्हें अन्वेषण करने को प्रेरित किया। दिन के दो घंटे आधे दिन में परिवर्तित हो गए।

सिमोन ने तब भी नहीं सोचा था कि उन्हें गंभीरता से इस क्षेत्र में अपना कॅरियर बना लेना चाहिए, क्योंकि वह अपने को किसी भी कोण से प्रोफेशनल होने के खाके में फिट होते नहीं देख पाती थीं। सन् 1964 में उन्हें लक्मे का मैनेजिंग डायरेक्टर नियुक्त किया गया। तब भी शौकिया उन्होंने बिना वेतन के काम करने के लिए उस पद को स्वीकार कर लिया। लेकिन नियति उनसे बड़ा-बड़ा काम करवाना चाहती थी, इसलिए यह सब रच रही थी।

समझा भारतीय बाजार को

लक्मे ने पहले स्किन केयर उत्पाद बनाए। कुछ चले, कुछ नहीं चले। सिमोन भारतीय बाजार की नस को समझने के लिए सर्वेक्षण करने में जुट गई, ताकि पता चल सके कि भारतीय महिलाओं की जरूरतें क्या हैं और कंपनी कहाँ चूक रही है। ‘गोरे होने की चाह’, जो उस समय भारत में बुरी तरह से व्याप्त थी, उसे भुनाने के लिए उन्होंने टेल्कम पाउडर बाजार में उतारा। हालाँकि यह वह समय था जब भारतीय महिलाएँ सौंदर्य उत्पादों के प्रति बहुत अधिक सचेत नहीं थीं और उन्हें इस्तेमाल करना आम मध्यम वर्गीय स्त्रियों में अच्छा भी नहीं माना जाता था। लेकिन जब महिलाओं ने बाहर निकलकर काम करना शुरू किया और आर्थिक आजादी पाई तो सौंदर्य उत्पादों की जरूरत महसूस की गई। उनकी कंपनी ने तब विभिन्न कॉलेजों और क्लबों में महिलाओं को सजने-सँवरने व अच्छा दिखने के विभिन्न

पहलुओं की महत्ता समझाने के लिए सौंदर्य विशेषज्ञों को भेजा। उनका यह तरीका कारगर सिद्ध हुआ।

उत्कृष्ट कार्य-शैली

सिमोन की कार्य-शैली ऐसी थी कि बहुत जल्दी ही लक्ष्य भारत का अग्रणी कॉस्मेटिक उद्यम बन गया और अनेक विदेशी बाजारों में उसकी पहुँच हो गई। सन् 1964 में उन्हें लक्ष्य का मैनेजिंग डायरेक्टर नियुक्त किया गया।

सन् 1989 में टाटा इंडस्ट्रीज की डायरेक्टर नियुक्त किए जाने से पहले 1982 में उन्होंने कंपनी की चेयरपर्सन के रूप में कार्यभार संभाला। वह कहती हैं, “टाटा इंडस्ट्रीज के बोर्ड में अनुभवी लोगों के साथ बातचीत करना एक नया अनुभव था। इस दौरान मुझे चीजों को नए सिरे से सीखने व देखने का अवसर भी मिला।”

अलग-अलग तरह के विषयों पर अपने-अपने क्षेत्रों में महारत हासिल किए लोगों के विचार सुनना सीखने की एक ऐसी प्रक्रिया होती है, जो दूसरों के लिए भी कामयाबी का मार्ग प्रशस्त कर देती हैं, सन् 1996 में सिमोन टाटा ने लक्ष्य कॉस्मेटिक को हिंदुस्तान लीवर लि. (एच.एल.एल.) को 200 करोड़ रुपए में बेचकर 93 करोड़ रुपए का मुनाफा कमाया।

मिली चुनौतियाँ

पति नवल टाटा उनकी सफलता से बेहद खुश थे और उन्हें एक-दूसरे से प्रेरणा व ताकत मिलती थी। नवल टाटा की मृत्यु के बाद सिमोन, जो टूट-सी गई थीं, ने पुनः अपनी दृढ़ता को संचित करने में बहुत वक्त नहीं लगाया। बेशक उन्होंने एक समय में अपने कार्य को गंभीरता से नहीं लिया था, पर चुनौतियों का सामना तो उन्हें भी करना ही पड़ा, खासकर पति की मृत्यु के बाद।

अपना कैरियर शुरू करने के 30 साल बाद जब उन्होंने लक्ष्य को बेचा तो सबसे बड़ी चुनौती का सामना उन्हें तब करना पड़ा, जब जिस कंपनी को अपनी मेहनत और ऊर्जा से उन्होंने सींचा था और एक नई दिशा दी थी, उसे बेचने व ट्रेंट को खड़ा करने के बीच उन्हें कई तरह के परिवर्तनों से गुजरना पड़ा।

ट्रेंट (टाटा रिटेल एंटरप्राइज) कंपनी में रेडीमेड कपड़ों को ‘वेस्टसाइड’ के लेबल के साथ उतारा गया, जो आज एक जाना-माना नाम बन चुका है और युवाओं की खास पसंद भी।

रिटेलिंग में उनकी दिलचस्पी बहुत समय से थी और वह बिजनेस की एक धारा से जुड़ने को उत्सुक भी थीं। लक्मे के बाद 'वेस्टसाइड' के माध्यम से रिटेलिंग से जुड़ना उनके लिए एक अद्भुत अनुभव था। संयोग की बात है कि ब्रिटेन स्थित डिपार्टमेंटल स्टोर शूंखला 'लिटिलवुड्स इंटरनेशनल' बंगलौर, भारत से अपना संचालन बंद करने की सोच रही थी। टाटा ने उसे अधिग्रहण 1998 कर 'लिटिलवुड्स' को 'वेस्टसाइड' की तरह लॉज्च किया।

उड़ान को मिले पंख

लेकिन आधुनिक युवा के लिए अपने परिधानों के माध्यम से रंगीन कल्पनाएँ बुनने तक ही सिमोन संतुष्ट रहनेवाली नहीं थीं, क्योंकि अब तक कुछ नया करने की उनकी उड़ान को असंख्य पंख लग चुके थे और वह हर ट्रेंड पर पूरी तरह से व्यावसायिक दृष्टि रखने लगी थीं। अपनी कल्पनाशीलता को विस्तार देने के लिए वह फूड रिटेलिंग बिजनेस में उतरीं और 'स्टार इंडिया बाजार' से बड़े-बड़े बाजार बनाए गए, जहाँ कम मूल्यों व डिस्काउंट पर रोजमर्रा की जरूरत की हर चीज उपलब्ध कराई गई।

उनके बेटे नोएल टाटा ने इस नए काम में अपनी माँ को पूरा सहयोग दिया। इस 52 वर्षीय ट्रेंट लि. के मैनेजिंग डायरेक्टर में माँ की ही तरह हर चीज को समझाने की पारखी नजर है। सिमोन टाटा के मार्गदर्शन में 'वेस्ट साइड' के सारे बड़े शहरों में लगभग 150 से अधिक आउटलेट्स खुल चुके हैं। सन् 1988 में उन्हें 'वूमैन ऑफ डिकेड' से सम्मानित किया गया और 'उद्योग रत्न' अवार्ड भी दिया गया। सन् 2003 में रिटेलिंग में नए विचारों को समाहित करने के लिए मुंबई मैनेजमेंट एसोसिएशन द्वारा उन्हें 'स्पेशल अवार्ड फॉर इनोवेशन', दिया गया। भारत में रिटेल फैशन के बिजनेस में असाधारण प्रदर्शन के लिए उन्हें सन् 2003 में ही 'विजनरी ऑफ द ईयर' अवार्ड से भी सम्मानित किया गया।

संवेदनशील महिला

सिमोन टाटा की प्रखरता न केवल उद्योग जगत् में प्रसिद्ध है, वरन् किसी भी विषय पर एक पैनी पकड़ रखने के लिए भी जानी जाती है। उन्हें पढ़ने का बहुत शौक है और बहुत कम उम्र से ही वह राजकीय व अंतरराष्ट्रीय खबरों एवं विकास कार्यक्रमों पर नज़र रखती आ रही हैं। यही वजह है कि आप उनके सामने कोई भी विषय छेड़ दें, वह बिना रुके उस पर अपनी राय दे सकती हैं। भारतीय कला के प्रति सम्मान होने के कारण उन्होंने 'भारतीय कला में सौंदर्य-शास्त्र' का कोर्स भी किया।

जेनेवा में छुट्टियाँ बिताना पसंद करनेवाली सिमोन टाटा को अकसर सफेद रंग की ड्रेस पहने देखा जा सकता है। हर सफलता और असफलता को वक्त की गति के साथ लेनेवाली सिमोन बहुत ही संवेदनशील प्रवृत्ति की महिला हैं।

विभिन्न एन.जी.ओ. की सहायता करने के लिए वह उनके द्वारा बनाई चीजों को खरीदती रहती हैं। ट्रेट ने बच्चों की कई संस्थाओं के साथ एक रिश्ता कायम कर लिया है। वह सर रतन (TRENT) टाटा इंस्टीट्यूट की चेयरमैन और चिल्ड्रन ऑफ द वर्ल्ड (इंडिया) ट्रस्ट, मुंबई की ट्रस्टी भी हैं। 73 वर्षीय सिमोन आज भी बिना रुके निरंतर आगे बढ़ने को प्रयत्नशील हैं।

सिमोन टाटा को अपने काम के सिलसिले में बहुत यात्राएँ करनी पड़ती हैं। उनकी योजनाएँ असीम हैं और वे चाहती हैं कि कंपनी काफी स्थानों पर रिटेलिंग शुरू करे। एक सच्ची व्यावसायिक की तरह वह भी काम को पूर्णता से करने में यकीन रखती हैं। बहुत ज्यादा महत्वाकांक्षी न होने के बावजूद उनके ऊपर जब एक के बाद एक जिम्मेदारियाँ आती गईं तो उन्हें निभाने में वह तन्मयता से जुट गईं।

आज वह सोचती हैं कि एक समय ऐसा था, जब उन्होंने कैरियर वूमैन बनने की बात सोची तक नहीं थी और आज लगता है कि अगर वह काम नहीं कर रही होतीं, तो क्या करतीं। वह मानती हैं कि हर औरत को जीवन में किसी-न-किसी चीज में दिलचस्पी होनी चाहिए और उन्हें स्वयं का विकास करने का प्रयत्न करना चाहिए।



सुधा नारायण मूर्ति



देश की पहली महिला इंजीनियर

समाज-सेविका

“आप जो भी करें, उसे अपनी पूरी क्षमता से बेहतर ढंग से करें।
हर काम में मेरा लक्ष्य यही रुक्ता है—जब आप अधीनस्थ हों तो
पेशो के प्रति इमानदार रहें और जब आप बाँस हों तो पेशेवर
बनें, परं अपने अधीनस्थों का द्वयाल रखें।”

80 के दशक की बात है। सुधा कुलकर्णी नाम की एक युवती अखबार में एक विज्ञापन पढ़ती है। पूरा विज्ञापन वह सहजता से पढ़ जाती है, लेकिन आखिरी पंक्ति पर नजर पड़ते ही चैंक जाती है। वहाँ लिखा था—‘इस पद के लिए महिलाएँ आवेदन न करें।’ वह टाटा के टेल्को का विज्ञापन था, जो भारी वाहनों का निर्माण करता है। इसमें युवा इंजीनियरों को आमंत्रित किया गया था। जाहिर है, वह विज्ञापन महिलाओं को खुलेआम वर्जनीय बना रहा था। नौकरी को कौशल और क्षमता के आधार पर प्रस्तावित करने के स्थान पर खुले तौर पर

यह घोषणा की गई थी कि यह सिर्फ पुरुषों के योग्य है। सुधा को लगा कि वह सरासर अनुचित है। लेकिन सुधा ने परेशान होने के बजाय टाटा समूह के अध्यक्ष जे.आर.डी. टाटा को कड़े शब्दों में एक पत्र लिखकर उनकी इस पिछड़ी अवधारणा की निंदा की। उन्होंने उस पत्र में यह भी लिखा कि लिंग के आधार पर योग्य महिला इंजीनियरों को नौकरी न देना सरासर अन्याय है। पत्र लिखने के बाद वह इस बात को भूल गई, वैसे भी वह उस वक्त पढ़ाई के लिए विदेश जाने वाली थीं।

एक पत्र ने जिंदगी बदल डाली

लेकिन जे.आर.डी. टाटा ने उनकी साफगोर्ड की तारीफ की और चयन समिति को निर्देश दिया गया कि उन्हें साक्षात्कार के लिए पुणे आने के लिए टेलीग्राम भेजा जाए, जिसमें कंपनी के खर्च पर आने की बात भी लिखी गई थी। उन्हें टेलीग्राम पढ़कर हैरानी हुई और सोचा कि इतनी आलोचना करने के बाद जाने से कुछ फायदा होने वाला नहीं है। वह उन दिनों की घटना को याद करते हुए कहती हैं, “मेरी हॉस्टल की साथियों ने कहा कि पुणे जाने के इस अवसर को मैं न गँवाऊँ, वैसे भी खर्च सारा कंपनी ही कर रही है। उन्होंने कहा कि मैं वहाँ से उनके लिए साड़ियाँ ले आऊँ, जो कि वहाँ सस्ती मिलती थीं। मैंने उनसे 30-30 रुपए एकत्र किए। आज जब उन दिनों की बात सोचती हूँ तो हँसी आती है कि किस इरादे से मैं पुणे गई थी। लेकिन वहाँ जाते ही उस शहर से मुझे प्यार हो गया था। उस शहर ने मेरी जिंदगी बहुत तरह से बदली है।”

टाटा के ऑफिस पहुँचने के बाद जब किसी ने कहा कि इसी महिला ने बॉस को पत्र लिखा तो सुधा को लगा कि अब तो नौकरी मिलना असंभव ही है। वह कहती हैं, “जब आप उम्मीद छोड़ देते हैं तो आपका डर खत्म हो जाता है। इसलिए मैंने साहसपूर्वक चयन समिति से कहा कि यदि वे साक्षात्कार को लेकर गंभीर नहीं हैं तो समय बरबाद न करें। लेकिन छह लोगों की उस चयन समिति ने ढाई घंटे तक मेरा साक्षात्कार लिया और हर तरह के तकनीकी प्रश्न पूछे, जिनका जवाब मैंने बारी-बारी से दिया। फिर एक बुजुर्ग व्यक्ति ने बहुत प्यार से मुझसे कहा कि क्यों हम महिला उम्मीदवारों को आवेदन करने के लिए मना करते हैं। इसकी वजह यह है कि यह कोई सह-शिक्षा कॉलेज नहीं है। जहाँ तक शैक्षिक योग्यता की बात है तो तुमने हमेशा टॉप किया है, हम इसकी कद्र करते हैं; पर तुम जैसे लोगों को अनुसंधान प्रयोगशालाओं में काम करना चाहिए।”

अंततः सुधा को वहाँ नौकरी मिल गई। वह पहली महिला इंजीनियर थीं, जिन्होंने अपने कौशल और ज्ञान के बलबूते पर टाटा के किले में सेंध लगाई थी। उनके ऑफिस की दीवार पर दो फोटोग्राफ लगी हुई हैं। वह कहती हैं कि रोज सुबह ऑफिस में प्रवेश करने के बाद मैं

इन चित्रों को देखने के बाद ही अपने दिन की शुरू आत करती हूँ। ये चित्र दो वृद्ध व्यक्तियों के हैं। कुछ लोग पूछते हैं कि क्या वे चित्र किसी सूफी संत या धार्मिक गुरु के हैं? या मेरे कोई संबंधी हैं? तब मैं हँसकर उन्हें बताती हूँ कि ये लोग मुझसे संबंधित नहीं हैं, पर इन्होंने मेरे जीवन पर गहरा प्रभाव छोड़ा है। मैं इनकी कृतज्ञ हूँ। एक चित्र जे.आर.डी. टाटा का है और एक जमशेदजी टाटा का।

हुई किताबों से दोस्ती

उत्तरी कर्नाटक के हुबली क्षेत्र के एक मध्यम वर्गीय परिवार में 19 अगस्त, 1950 को जन्मी सुधा के पिता एच.आर. कुलकर्णी एक सरकारी डॉक्टर थे। उनकी माँ विमला कुलकर्णी एक गृहिणी थीं। उनके पिता पढ़ाई पर बहुत जोर देते थे। वह बताती हैं, “हमारे माता-पिता ने कभी हम तीन बहनों के लिए आभूषण या मेरे भाई या हमारे लिए महँगे कपड़े नहीं खरीदे; पर हमारे घर में किताबों का भंडार था, जिसे एक बेहतरीन लाइब्रेरी भी कहा जा सकता है। हमारे घर में शिक्षा सबसे प्राथमिक मानी जाती थी। हमारे पिता कभी फ्रिज नहीं खरीदकर लाए (बाद में अवश्य वह इसे ले आए थे), पर वह हमें किताबें खरीदकर देते थे। मेरी बड़ी बहन सुनंदा आज एक जानी-मानी डॉक्टर हैं और मेरी दूसरी बहन जयश्री देशपांडे आई.आई.टी. ग्रेजुएट और मेरा भाई श्रीनिवास कुलकर्णी एक विख्यात खगोल भौतिक-विज्ञानी है।” उनका आरंभिक बचपन का बड़ा हिस्सा अपने दादा-दादी के पास गुजरा उनके दादा एच.आर. कादिम दीवान सच्चे मायने में गांधीवादी थे और इसलिए लॉ स्कूल को छोड़ दिया, क्योंकि उनके अध्यापक ने कहा था कि उन्हें केस जीतने के लिए सच्चाई को तोड़ना-मरोड़ना पड़ सकता है। वह कहती हैं कि वह मुझसे 63 वर्ष बड़े थे, पर हम दोनों में गहरी दोस्ती थी। उन्होंने मेरे अंदर किताबें पढ़ने की आदत डाली और गणित, इतिहास एवं भारत के प्रति लगाव पैदा किया।

सही मुश्किलें

स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद जब सुधा ने हुबली के बी.वी.आर. इंजीनियरिंग कॉलेज में सन् 1968 में प्रवेश लिया तो शहर के लोग उन्हें आश्वर्य से देखा करते थे। इसकी वजह यह भी थी कि तब तक हुबली या आसपास के इलाकों की किसी भी लड़की ने इंजीनियरिंग कॉलेज में प्रवेश नहीं लिया था। उनकी बहन सुनंदा ने पिता का अनुसरण करते हुए चिकित्सा क्षेत्र को चुना था, इसलिए सबको यही उम्मीद थी कि वह भी यही करेंगी। उन दिनों को याद करते हुए वह बताती हैं, “शुरू में सब बहुत तकलीफदेह था। कॉलेज में न तो कोई महिला कक्ष था और न ही महिला शौचालय, क्योंकि कॉलेज में मेरे अलावा कोई

लड़की थी ही नहीं। कक्षा में 250 लड़के थे, जो बुरी तरह से मेरी रैगिंग किया करते थे। डेढ़ साल बाद अधिकारियों ने कॉलेज परिसर में एक महिला शौचालय बनवाया। अपनी डिग्री पाने के पाँच वर्षों में मैंने एक दिन भी छुट्टी नहीं ली, क्योंकि मैं जानती थी कि अगर मैंने एक दिन भी छुट्टी की तो उस दिन के नोट्स मुझे कोई नहीं दिखाएगा।” लेकिन सभी छात्रों के भेदभाव और अन्य परेशानियों के बावजूद वह पाँच सालों के सभी दस सेमेस्टरों में प्रथम आई। इसके बाद वह इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस से कंप्यूटर साइंस में एम.टेक. करने के लिए बंगलौर आई। सन् 1974 में वह कक्षा में प्रथम आई। यह तब की बात है जब उन्होंने टेल्को के विज्ञापन का जवाब दिया था।

जीती लड़ाई

सन् 1970 के दशक के खत्म होने यह वह समय था जब महिलाओं के मातहत काम करना पुरुष अपनी शान के खिलाफ समझते थे। पूरे देश में यह प्रचलन था कि महिलाएँ भले ही कितनी ही प्रशिक्षित क्यों न हों, वे खास तकनीकी काम नहीं कर सकती हैं और न ही ठीक से कर्मचारियों से काम ले सकती हैं। सुधा मूर्ति संभवतः पहली ऐसी महिला हैं, जिन्होंने इन बाधाओं पर विजय पाई और उद्योग-धंधों में भारतीय महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए प्रेरणा का काम किया।

हालाँकि टेल्को में नौकरी करने के बावजूद वह वहाँ काम करने के बजाय आगे पढ़ाई करने विदेश जाना चाहती थीं, पर तब उनके पिता ने समझाया कि तुम्हारा यह फैसला आनेवाले समय में लड़कियों के लिए टेल्को में काम करने की राह में अवरोध पैदा कर सकता है, क्योंकि तब तुम्हारा ही उदाहरण दिया जाएगा। इस नौकरी को करना अब तुम्हारा नैतिक दायित्व बनता है। सन् 1974 में पुणे से अपना कॅरियर आरंभ करके जमशेदपुर और बंबई तक सुधा ने आठ वर्ष टेल्को में कार्य किया। वह टेल्को की शॉप फ्लोर पर काम करनेवाली पहली महिला थीं। हालाँकि वहाँ कार्यरत पुरुषों का व्यवहार उनके प्रति अच्छा नहीं था और एक महिला का आदेश मानना उन्हें अखरता था। उन्हें इस बात से बहुत दुःख पहुँचता था, पर उनका लक्ष्य था केवल बेहतर ढंग से काम करना—“मैं अपनी ऊर्जा बड़ी लड़ाइयों के लिए बचाकर रखना चाहती थी, इसलिए विवादों से दूर रहती थी। पुरुषों से कोई बात किए बिना मैं काम करती रहती। वहाँ मैंने सीखा कि अगर आप विरोधी की भाषा बोलना सीख जाओ तो आधी लड़ाई तो यों ही जीती जा सकती है।”

सुधा मूर्ति किसी भी स्तर पर अपने पुरुष साथियों से कम नहीं रहीं। टाटा ने एक प्रमाण-पत्र में इस बात की घोषणा करते हुए गर्व से कहा कि उन्होंने सभी जगह पुरुषों से बेहतर कार्य किया। वह मानती हैं, “आप जो भी करें, उसे अपनी पूरी क्षमता से बेहतर ढंग से करें। हर

काम में मेरा लक्ष्य यही रहता है—जब आप अधीनस्थ हों तो पेशे के प्रति ईमानदार रहें और जब बॉस हों तो पेशेवर बनें, पर अपने अधीनस्थों का ख्याल रखें। अपने जीवन के सबसे महत्वपूर्ण सबक, जैसे कि अनुशासन व वक्त की पाबंदी, मैंने टेल्को में ही सीखे।”

दिलचस्प प्रेम कहानी

सुधा का नारायण मूर्ति से मिलना और फिर उनमें प्रेम होना भी किसी दिलचस्प कहानी से कम नहीं है। सुधा अपनी एक साथी प्रसन्ना से पढ़ने के लिए किताबें लिया करती थीं। उनके पहले पृष्ठ पर ‘नारायण मूर्ति’ लिखा होता था। तब प्रसन्ना से उन्हें ज्ञात हुआ कि वह उनके मित्र हैं और पेरिस से लौटे हैं, जो एस.आर.आई. में शोध से भी जुड़े रहे थे। जल्दी ही वह उनसे भावनात्मक रूप से जुड़ गई और उन्हें पसंद करने लगीं, जिन्हें उन्होंने अभी तक देखा न था। उनके मन में नारायण मूर्ति की मूर्ति बन गई थी; पर जब वह उनसे मिलीं तो वह बिलकुल विपरीत निकले। वह सादे कपड़ों में थे और आँखों पर मोटा चश्मा लगा था। वह अमीर नहीं थे, पर योजनाएँ बनाने, सपने बुनने और अपने काम में सचमुच माहिर थे। अत्यधिक आत्मविश्वासी होने के साथ-साथ उनका भविष्य के प्रति विचार एकदम स्पष्ट था।

जब नारायण मूर्ति ने सुधा से अपना प्रेम प्रकट किया तो साफ कह दिया कि वह बहुत साधारण परिवार से हैं और उन्हें धन-दौलत शायद ही कभी दे पाएँ—“तुम संपन्न परिवार से हो; तुम्हारी नौकरी भी अच्छी है, तुम सुंदर हो, चतुर हो, जिससे चाहो शादी कर सकती हो, लेकिन क्या तुम मुझसे शादी करोगी?”

उन दिनों मूर्ति की जेब खाली रहती थी और इसलिए जब भी वे बाहर खाना खाने जाते तो पैसे सुधा ही दिया करती थीं। उनकी वह उधारी 4,000 रुपए की हो गई थी, जिसका पूरा विवरण सुधा ने एक नोटबुक में लिखकर रखा था। विवाह के बाद उसे फाड़ दिया था, पर उन्हें वे पैसे वापस नहीं मिले थे। सन् 1977 में नारायण मूर्ति पाटनी कंप्यूटर्स से जुड़े तो सुधा के पिता ने विवाह की अनुमति दे दी और सन् 1978 में वे विवाह सूत्र में बँध गए और बंगलौर में घर लेकर रहने लगे।

जल्दी ही पाटनी की तरफ से मूर्ति को प्रशिक्षण के लिए अमेरिका जाने का अवसर मिला और सुधा भी उनके साथ चली गई। पाटनी में ही उनकी मुलाकात और युवाओं से हुई, जिसमें नंदन नीलकेनी भी थी। बाद में अपने छह दोस्तों के साथ मिलकर उन्होंने इन्फोसिस स्थापित किया। प्रत्येक को उसमें 10 हजार रुपए निवेश करने थे और सुधा से वे रुपए उधार लेकर ही मूर्ति ने अपने इस सपने को साकार किया। सन् 1981 में इन्फोसिस की नींव

पड़ी। सुधा ने घर चलाने की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली और मूर्ति से कहा कि वह उन्हें तीन साल का विश्राम अवकाश देती हैं।

किया त्याग

सन् 1982 में सुधा ने टेल्को छोड़कर मूर्ति के साथ पुणे चली गई और ऋण पर एक घर लिया, जो इन्फोसिस के ऑफिस का काम भी करता था। वहाँ सुधा ने घर चलाने के लिए वालचंद ग्रुप में सीनियर सिस्टम एनेलिसिस्ट की नौकरी ले ली। इन्फोसिस के लिए वह बावर्ची, क्लर्क, सेक्रेटरी, असिस्टेंट से लेकर प्रोग्रामर सारा काम देखती थीं। इस दौरान सुधा एक बेटी अक्षथा की माँ बन चुकी थीं और काम की वजह से उसे हुबली अपनी माँ के पास छोड़ आई थीं। सन् 1983 में इन्फोसिस को बंगलौर में अपना पहला क्लाइंट मिला। मूर्ति बंगलौर चले गए और सुधा अपने बेटे रोहन को जन्म देने हुबली चली गई।

इन्फोसिस का काम बढ़ने के कारण सुधा खुद उससे जुड़ने की इच्छुक थीं। कंपनी के निदेशकों ने उनका स्वागत किया, पर मूर्ति ने साफ कहा कि तुम या मैं दोनों में से एक ही इसमें काम कर सकता है। फैसला तुम्हें करना है। अगर तुम काम करना चाहती हो तो मुझे यहाँ से जाना होगा। वह समझ गई कि जब उनमें से एक परिवार की देखरेख करेगा और दूसरा पूरे समर्पण से इन्फोसिस का कार्य करेगा तभी काम के साथ न्याय हो पाएगा। सुधा ने फिर एक बार मूर्ति की खातिर त्याग किया। अपनी पुस्तक ‘द स्टोरी ऑफ इंडीम’ में सुधा लिखती हैं—“उनके सपने मेरे सपनों से उत्कृष्ट हैं। इसलिए मुझे नहीं लगता कि मैंने कंपनी छोड़कर कुछ गलत किया। यह एक कष्टप्रद त्याग था, पर इसे टाला नहीं जा सकता था।” लेकिन वह घर में कैद रहकर कुछ न करनेवाली महिला न थीं, इसलिए उन्होंने शिक्षा, लेखन और सामाजिक कार्य के क्षेत्र में अपनी पहचान बनाई।

लेखन की ओर हुई अग्रसर

बहुत ही कम उम्र से सुधा किताबें लिख रही हैं और अब तक वह कई उपन्यास, तकनीकी व शिक्षा संबंधी किताबें लिख चुकी हैं। वह कहती हैं कि मुझे लिखना पसंद है। मेरे लिए लिखना साँस लेने जैसा है। उन्होंने अभी तक कन्नड़ में 10 से अधिक पुस्तकें लिखी हैं—उपन्यास, आलेख, यात्रा-विवरण और कंप्यूटर पर परिचायक पुस्तकें उनमें से बहुत सी तमिल, अंग्रेजी, मलयालम, तेलुगु और हिंदी में अनूदित हुई हैं।

सुधा ने स्वयं को समाज में केवल एक महिला इंजीनियर की तरह ही स्थापित नहीं किया है, बल्कि समाज के विकास के लिए भी बहुत से कार्य किए हैं। उन्हीं की पहल पर सन् 1996

में समाज में पिछड़ों, खासकर महिलाओं एवं बच्चों की सहायता और सेवा के लिए इन्फोसिस फाउंडेशन की स्थापना की गई।

बचपन से ही उनका झुकाव दान-धर्म व सेवा की ओर था। जब उन्होंने टेल्को की नौकरी छोड़ी थी तब जे.आर.डी. टाटा ने उनसे कहा था कि हमें वह लाभ समाज को लौटा देना चाहिए, जिसे हम उसी से अर्जित करते हैं। सुधा देश भर में घूम-घूमकर लोगों की समस्याएँ सुन उस आधार पर उनकी सहायता करती हैं। वर्षों से सुधा के नेतृत्व में कार्यरत इस फाउंडेशन ने कई पुरस्कार जीते हैं। उन्हें समाज-सेवा के लिए भारत और विदेशों में 20 से अधिक पुरस्कार प्राप्त हुए। लेकिन सुधा एवं नारायण मूर्ति इतनी सफलता व धन अर्जित करने के बावजूद एक सादा जीवन जीते हैं और सतत सेवा कार्यों में लगे रहते हैं।

बनाई अपनी पहचान

क्या नारायण मूर्ति के सपनों को सच करने और उनकी छाया मात्र बनकर रहने की वजह से सुधा अपनी पहचान नहीं बना पाई, जिसकी उनमें योग्यता थी? इस सवाल के जवाब में वह कहती हैं, “ऐसा कर्तव्य नहीं है। मैं बेशक नारायण मूर्ति की पत्नी हूँ, अक्षथा और रोहन की माँ हूँ। मैं बेशक इन्फोसिस फाउंडेशन की ट्रस्टी हूँ, पर फिर भी मैं सुधा हूँ। मैं अन्य महिलाओं की तरह विभिन्न भूमिकाएँ निभाती हूँ। इसका मतलब यह नहीं है कि मेरी अपनी कोई पहचान नहीं है। औरत में किसी भी चीज को अपनाने तथा उसके अनुसार खुद को ढालने की असाधारण क्षमता होती है। पर फिर भी हम अपने वजूद को बरकरार रख पाती हैं। और हमें जीवन में सही फैसले लेकर अपनी आजादी पानी चाहिए तथा दुनिया के द्वारा नहीं, अपने हिसाब से चलना चाहिए।” सच भी तो है, सुधा मूर्ति ने अपनी मेहनत और हौसलों के जरिए समाज में वह मुकाम हासिल किया है, जो उनके समय में लड़कियों के लिए असंभव माना जाता था।



सुलज्जा फिरोदिया मोटवाणी



दुपहिया वाहनों की दुनिया में लाई नई क्रांति

मैनेजिंग डायरेक्टर, कायनेटिक इंजीनियरिंग

“जब आप दूसरों के लिए काम करते हैं तो उन पर दोष डाल सकते हैं, पर जब आप एक संगठन स्वयं चला रहे होते हैं तो सारी समस्याओं के हल ढूँढ़ने की जिम्मेदारी आप पर होती है—और यह दिमाग की नसों को हिला डालता है।”

बे शक सुलज्जा फिरोदिया मोटवाणी ने विरासत में कायनेटिक इंजीनियरिंग लि. की मैनेजिंग डायरेक्टर का पद हासिल किया है, पर भारतीय व्यापार की दुनिया में उन्होंने अपनी कामयाबी व मेहनत से एक अलग पहचान बनाई है। देखा जाए तो ‘ब्रेन एंड ब्यूटी डू नॉट गो टुगेदर’ कहावत को झुठलाया है भारत के मशहूर मोटरसाइकिल कंपनी कायनेटिक की मैनेजिंग डायरेक्टर और कायनेटिक मार्केटिंग सर्विसेज लि. की डायरेक्टर सुलज्जा ने। कंपनी की नीतियों, विपणन, बिक्री और वित्तीय मामलों का संपूर्ण भार उन पर ही है।

क्रांतिकारी परिवर्तन

एक हार्डकोर बिजनेस वूमैन की तरह जानी जानेवाली सुलज्जा देखने और अपनी कार्यशैली से बेशक पूर्णतया प्रोफेशनल लगें, पर वह मन से आम महिलाओं की तरह हैं, जिनमें संवेदनशीलता का ज्वार बहता है और सुकोमल भावनाएँ दूसरों के दर्द को शिद्धत से महसूस कर पाती हैं। काम के मामलों में बिलकुल भी लापरवाही न पसंद करनेवाली सुलज्जा में बॉस बनने के सारे गुण विद्यमान हैं। शायद इसकी सबसे बड़ी वजह यही है कि वह बचपन से ही अपने दादा एच.के. फिरोदिया और पिता अरुण फिरोदिया के बीच होनेवाली बिजनेस की बातें सुनते हुए बड़ी हुई और हमेशा ही चाहा कि वह कायनेटिक ग्रुप का हिस्सा बने। और न केवल वह इस ग्रुप का हिस्सा ही बनीं, बल्कि ऑटोमोबाइल इंडस्ट्री में एक क्रांतिकारी परिवर्तन कर कायनेटिक गुरुप को एक एकीकृत टू-व्हीलर निर्माता भी बना दिया और लगातार कई मॉडल लॉज्च किए।

जन्मजात तकनीकी विद्वता

20 अगस्त, 1970 को जन्मी सुलज्जा की स्कूली शिक्षा पुणे के गरवाए स्कूल में हुई। दसवीं कक्षा में वह मेरिट लिस्ट में आई और बारहवीं में टॉप करनेवाली सुलज्जा ने सन् 1990 में पुणे यूनिवर्सिटी से कॉमर्स स्नातक की डिग्री भी सेकंड टॉपर के रूप में प्राप्त की। वह कई बार अपने स्कूल की हेड गर्ल और टीम कप्तान रहीं। खेलों में शुरू से ही उनकी खास दिलचस्पी थी और बैडमिंटन के चार स्टेट लेवल टूर्नामेंट खेलते हुए वह 1989 में नेशनल चैंपियनशिप तक पहुँच गई थीं। सुलज्जा के अंदर इंजीनियरिंग की निपुणताएँ व तकनीकी विद्वत्ता जन्मजात थीं जो अपने दादा जिन्होंने कायनेटिक ग्रुप की नींव डाली थी और पिता, जिन्होंने इसकी स्थापना की थी, से मिली थीं। शिक्षा की दृष्टि से भी फिरोदिया परिवार का नाम हमेशा अग्रणी रहा। उनके दादा ने भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भी योगदान दिया था। जवाहरलाल नेहरू और महात्मा गांधी का फिरोदियों के घर आना-जाना था।

सुलज्जा की दादी, जो एक प्रतिष्ठित महिला एक्टिविस्ट व अन्य सभाओं की वक्ता थीं, ने कई महिला रैलियों का नेतृत्व किया। अरुण फिरोदिया ने अगर अमेरिका के एम.आई.टी स्लोन से एम.बी.ए. किया और एम.एस. डिग्री प्राप्त की थी, वहीं सुलज्जा की माँ ने हार्वर्ड मेडिकल स्कूल से स्नातक किया था और वह एक उच्च श्रेणी की डॉक्टर हैं। सुलज्जा और उनके भाई-बहन भी उच्च शिक्षा प्राप्त करने विदेश गए। उनके परिवार में शिक्षा को अत्यधिक महत्ता दी जाती थी, जिसने सुदृढ़ ‘वेल्यू सिस्टम’ गढ़ने में उनकी मदद की।

रात के खाने के समय सुलज्जा, पिता-माता और और दादा के बीच नियमित रूप से पारिवारिक या व्यापार से जुड़े मामलों पर चर्चा होती। सुलज्जा और उनके भाई-बहन इन चर्चाओं का हिस्सा बनते और सवाल भी पूछते। “पापा चाहते थे कि हम भाई-बहन नियमित रूप से अखबार या पत्रिकाएं पढ़ें तथा वर्तमान में क्या घट रहा है, इसकी हमें खबर रहे। लेकिन जब हमने ऐसा नहीं किया तो उन्होंने एक तरीका ढूँढ़ निकाला, वह हर इतवार को पिछले हफ्ते की मुख्य खबरों से संबंधित सवाल हमसे पूछने लगे। जो भी सही उत्तर देता, उसे 100 रुपए पॉकेट मनी के रूप में मिलते, जो उस समय बहुत बड़ी रकम हुआ करती थी। यह आदत आज भी हमारे बहुत काम आ रही है।” सुलज्जा कहती हैं।

जोखिम उठाने की प्रकृति

पुणे यूनिवर्सिटी से बी.कॉम. करने के बाद वह एम.बी.ए. की डिग्री हासिल करने अमेरिका गई। 21 वर्ष की उम्र में कारनेगी मेलान यूनिवर्सिटी, पेंसिल्वेनिया में एम.बी.ए. करनेवाली वह पहली स्नातक थीं। बिजनेस स्कूल में पढ़ाई करते हुए उन्होंने स्कीइंग, स्कूबा डाइविंग, रोलर ब्लेडिंग, माउंटेन बाइकिंग जैसे एडवेंचर्स खेलों में न सिर्फ हिस्सा लिया, बल्कि दक्षता भी हासिल की। एडवेंचर की दीवानी सुलज्जा ने सन् 1992 में कैरीबियन आइलैंड्स के एक ट्रिप के दौरान पाँच दिनों तक महासागर में जमकर गोताखोरी की। तीन बार कलाई में फ्रैकचर, एक बार सिर पर चोट और आठ सप्ताह तक बैसाखी के सहारे चलने के बावजूद सुलज्जा जोखिम उठाने से बाज नहीं आतीं।

एम.बी.ए. करने के बाद उन्होंने चार वर्षों तक बर्कले स्थित एक इन्वेस्टमेंट एनलिटिक्स कंपरा ‘बारा इंटरनेशनल’ में काम किया। यहाँ काम करके न सिर्फ उनमें आत्मविश्वास पैदा हुआ वरन् बिक्री संबंधी काम का भी अनुभव प्राप्त हुआ। वह कहती हैं, “मैं 22 वर्षीया ऐसी भारतीय लड़की थी, जो अत्याधुनिक कीमती सॉफ्टवेयर और रिस्क मैनेजमेंट मॉडल बेच रही थी। भारत आने की इच्छा जाहिर करने पर ‘बारा’ ने मुझे भारत में रहकर बिक्री शुरू करने का कार्य सौंपा। यह उनका मेरी योग्यता पर विश्वास और मेरा आई.टी; नवीनतन मैनेजमेंट तकनी की ज्ञान प्राप्त करने का प्रमाण था।”

बारा इंटरनेशनल में नौकरी करने के दौरान उन्हें बहुत यात्राएँ भी करनी पड़ती थीं। तब वह खुद ही हवाई टिकट बुक करवातीं, होटल रिजर्वेशन और रेंटर कारों के लिए भाग-दौड़ करतीं। एक अनजाने देश में एक खूबसूरत युवा एशियन लड़की के लिए यह कठिन ही नहीं, जोखिम भरा भी था।

विदेश में अध्ययन और कार्यानुभव ने सुलज्जा को पूरी तरह प्रोफेशनल व व्यावहारिक बना दिया। अपने स्टाफ को उन्होंने निर्देश दे रखे हैं कि जब वह दफ्तर में आएँ या चक्कर लगाएँ तो कोई भी खड़ा न हो, न ही कोई व्यक्ति उन्हें एयरपोर्ट पर रिसीव करने आए।

चुनौतियों से नहीं घबराई

आजादी के बाद ऑटोमोबाइल बिजनेस में पदार्पण कर फिरोदिया परिवार ने राजनीतिक रूप से प्रतिष्ठित अपने परिवार को एक उद्योगपति के परिवार में परिवर्तिन कर लिया। सुलज्जा के दादा विज्ञान में अत्यधिक विश्वास रखते थे। वह मानते थे कि भारत तभी मजबूत राष्ट्र बन सकता है जब वह विज्ञान को अपनाते हुए कुछ नया करने की सोच रखें।

ऑटोमोबाइल इंडस्ट्री से भारत आर्थिक रूप से स्वतंत्र हो सकता है, यह मानते हुए एच.के. फिरोदिया ने बजाज के साथ हाथ मिलाए। बजाज वित्तीय पार्टनर था तो उनकी कंपनी मैनेजिंग पार्टनर। सन् 1980 में वह बजाज से अलग हो गए और कायनेटिक गुरुप के बनने से पहले बजाज टैंपो पर अधिग्रहण कर लिया।

उन्हें जब से बिजनेस की समझ आई, तब से ही वह उसकी जटिल चुनौतियों को उठाने में दिलचस्पी रखने लगी थीं।

सन् 1996 में सुलज्जा बरारा इंटरनेशनल का सीनियर कंसल्टेंसी जॉब छोड़कर स्वदेश लौटीं तो उन्हें तत्काल दुःखद स्थिति व चुनौती का सामना करना पड़ा। उनके आने के तीन दिन बाद ही उनके दादाजी का कैंसर से निधन हो गया, जो उनके आदर्श थे। वह कहती हैं, “मेरे दादा मेरे सबसे बड़े प्रेरणास्रोत और आत्मविश्वास बढ़ानेवाले प्रेरक थे। उन्होंने मुझे इस बात का विश्वास दिलाया कि मुझ में वे सारी खूबियाँ हैं, जो बिजनेस की दुनिया में कुछ बड़ा कर दिखाने के लिए होनी चाहिए।”

देश भर में फैली पारिवारिक कायनेटिक कंपनी के बावजूद वह चाहती थीं कि वह दूसरी जगह काम कर व्यापार की तकनीकें सीखें। इसीलिए कायनेटिक ग्रुप की एक वेल्डिंग मशीन निर्माता कंपनी जय हिंद इंडस्ट्रीज से उन्होंने शुरुआत की। वह चाहती थीं कि वह पहले कायनेटिक ग्रुप की कार्य संस्कृति जाने, मानव संसाधन को समझें, फिर समूह के साथ प्रमुख कारोबार से जुड़ें, इसके लिए उन्होंने विभिन्न प्रोग्रामों में हिस्सा लिया और प्रशिक्षण भी प्राप्त किया; पर उन्हें बहुत जल्दी ही पिता का सहयोगी बनना पड़ा।

सामने थे संकट

'90 का दशक दोपहिया वाहन उद्योग का टर्निंग पॉइंट था। मोटरसाइकिलों की तेजी से बढ़ती लोकप्रियता ने बजाज ऑटो को पीछे धकेलकर हीरो होंडा को मार्केट लीडर बना दिया था। मोपेड व गेयरलेस स्कूटर मार्केट में सक्रिय होने से कायनेटिक की मार्केट हिस्सेदारी पर वैसे प्रभाव तो नहीं पड़ा, पर अरुण फिरोदिया के सामने संकट था—होंडा जापान की भारतीय मार्केट में सीधे एंट्री की तैयारी। होंडा ने दबाव बढ़ा रखा था कि फिरोदिया संयुक्त पेंचर-कायनेटिक होंडा मोटर्स लि. की अपनी इक्विटी या तो होंडा को बेच दें या उसकी इक्विटी खरीद लें। सुलज्जा ने एक बार कहा था, “अपनी इक्विटी होंडा को बेचने का मतलब था हम कायनेटिक ब्रांड नेम, प्लांट व मार्केटिंग नेटवर्क होंडा को सौंपकर फिर स्क्रेच से शुरू करें।”

अरुण फिरोदिया, खासकर सुलज्जा फिरोदिया, भी होंडा की गिरफ्त से मुक्त होना चाहते थे। उन्हें शिकायत थी कि होंडा, जापान ने नई तकनीक देने में हमेशा आनाकानी की है। उन्हें नए मॉडल्स लॉज्च नहीं करने दिए हैं। बाइक बनाने व निर्यात करने की अनुमति नहीं दी है। इन प्रतिबंधों के कारण कायनेटिक सालों-साल वन प्रोडक्ट कंपनी ही बनी रही।

सन् 1998 में कायनेटिक में फुलटाइम एक्जीक्यूटिव बनते ही सुलज्जा यात्रा पर निकल पड़ीं। महीने में 20 से 25 दिन दौरे करके उन्होंने कायनेटिक के देशव्यापी डीलरों से मुलाकात की और जाना कि लूना व गेयरलेस स्कूटर यथास्थिति में कायनेटिक का ज्यादा दिन तक साथ नहीं निभा पाएँगे। मोपेड स्कूटर निर्माता अन्य कंपनियों की तरह कायनेटिक को भी बाइक मार्केट में एंट्री लेनी पड़ेगी, पर यहाँ तीन मजबूत प्रतिद्वंद्वियों (हीरा होंडा, बजाज ऑटो व टी.वी.एस. मोटर्स) से मुकाबला करना पड़ेगा।

नया करने में यकीन

आज कायनेटिक कंपनी मोपेड और स्कूटर के साथ-साथ मोटरसाइकिल व स्कूटी का भी निर्माण कर रही है। सुलज्जा का मुख्य लक्ष्य कायनेटिक को ग्राहकों पर केंद्रित कंपनी बनाना है। वह हमेशा कुछ नया करने में यकीन रखती हैं। यह इसी का परिणाम था कि सन् 1995 में जहाँ कंपनी का टर्नओवर 200 करोड़ रुपए था, वहीं 2002 में 1,000 करोड़ रुपए से भी ज्यादा हो गया। पुणे में दफ्तर और फैक्टरी होने के बावजूद वह महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश तथा अन्य जगह फैले प्लांट्स और कारोबार को सफलतापूर्वक सँभालने की क्षमता रखती हैं। कंपनी के लिए हमेशा नई बिजनेस स्ट्रेटजी पर काम करना, टीमवर्क बनाए रखना, नए एवेन्यू ढूँढ़ना, मंथली इन्वेस्टमेंट, स्टॉफ के लिए पिकनिक आयोजित करना, डीलर्स के साथ मीटिंग करना और ट्रेनिंग देने जैसे कई काम करना सुलज्जा के लिए बाएँ हाथ का खेल है।

वह जब भी किसी काम को हाथ में लेती हैं तो उसे एक चुनौती के रूप में लेती हैं और जी-जान से उसे पूरा करने में जुट जाती हैं।

वह जिस भी प्रोडक्ट को बाजार में लॉज्च करती हैं, उस पर स्वयं सवारी करके देखती हैं, ताकि उसकी कमियों का पता कर उन्हें दूर किया जा सके। माना जाता है कि बाइक्स और सुलज्जा का अटूट रिश्ता है।

उनके कार्यकाल में कंपनी का आश्वर्यजनक विस्तार हुआ। मात्र मोपेड निर्माता से बढ़कर कंपनी अब मोपेड, स्कूटर व मोटर साइकिल जैसे टू-व्हीलर बना रही है। कायनेटिक ने इटली की कंपनी इटालीजेट मोटो के साथ गठबंधन किया, जिससे कायनेटिक कंपनी को स्कूटरों के सात नए मॉडल्स को देश में लॉज्च करने का अधिकार मिल गया।

परिवार का सहयोग

वह निडरता और बेबाक सोच का एक जीता-जागता उदाहरण हैं। अपनी दृढ़ता और साहस के बल पर ही वह बिजनेस की दुनिया में अपना एक खास मुकाम बना पाई हैं। वह मानती हैं कि स्त्री के लिए अब कोई काम करना नामुमकिन नहीं है। स्त्री होने के कारण वह न तो स्वयं को कम समझती हैं, न ही अपनी कंपनी में स्त्री-पुरुष कर्मचारियों में कोई भेदभाव करती हैं। यही वजह है कि सुलज्जा के अपने कर्मचारियों के साथ बहुत ही सहज संबंध हैं। वह कहती हैं, “मैं हर किसी को एक टीम के रूप में देखती हूँ और कोई भी निर्णय लेने से पहले सबकी राय जरूर लेती हूँ। मैं ‘ओपेन डोर पॉलिसी’ में यकीन रखती हूँ। मुझे कभी महसूस नहीं हुआ कि वूमैन बॉस को अलग तरह का व्यवहार करना चाहिए।”

सन् 1992 में एक एडवेंचर ट्रिप में दुर्घटनाग्रस्त सुलज्जा की कैलिफोर्निया हाईवे पर मनीष मोहवाणी से मुलाकात हुई। सन् 1993 में दोनों विवाह बंधन में बँध गए। 2000 में उनके बेटे सिद्धांत का जन्म हुआ। तब उन्होंने कहा था, “वर्किंग वाइफ बनने से ज्यादा कठिन है वर्किंग मदर बनना, क्योंकि बच्चे से जो वादा करो, उसे पूरा करना ही होता है।”

वह मानती हैं कि यदि सफलता पाने के लिए कड़ा परिश्रम, टीमवर्क और दूसरों के विचारों को सुनकर उन्हें अपनाने के लिए तैयार रहना मायने रखता है तो इसके लिए परिवार का सहयोग भी महत्त्वपूर्ण है। वह कहती हैं, “मुझे पति, सास-ससुर और माँ का बहुत सहयोग मिलता है। मेरी माँ ने मेरे बेटे को सँभालने में मेरी मदद की, जिसकी वजह से ही मैं निश्चित होकर काम कर पाती हूँ। मैं अपने व्यक्तिगत और प्रोफेशनल जीवन को कभी अलग-अलग वर्गों में बाँटने की कोशिश नहीं करती।”

विस्तार है आवश्यक

मोपेड कंपनी के रूप में उभरी कायनेटिक के कई नई सवारियों को लॉज्च करने की पहल की। लूना मोपेड की पर्याय बनी। कायनेटिक होंडा ने भी एक अभूतपूर्व सफलता प्राप्त थी। फिर उन्होंने अपनी बाइकों के लिए ‘फोर स्ट्रोक’ तकनीकों पर ध्यान केंद्रित किया। चैलेंजर और बाइक्स के लॉज्च के माध्यम से मोटरसाइकिल के वर्ग में भी उनका पदार्पण हुआ। अपने बिजनेस को और बढ़ाने के लिए सुलज्जा ने ऑटो-इलेक्ट्रिकल पार्ट्स बनाने के लिए दो अन्य कंपनियों का गठन भी किया है।

अब सुलज्जा को ऐसी कंपनी का गठन करने की इच्छा हुई, जो निर्माता कंपनी से अलग हो और जो स्वतंत्र रूप से चल सके तो कायनेटिक मार्केटिंग सर्विसेज का जन्म हुआ। उन्होंने परिष्कृत आर. एंड डी. तकनीकों को अपनाने के लिए भारी मात्रा में निवेश किया। जब उन्होंने ‘नोवा’ लॉज्च किया तो सन् 2003 में ‘बेस्ट डिजाइन ऑटोमोबाइल’ का खिताब जीता।

वह मानती हैं कि अगर आपको एक व्यक्ति की तरह ग्रो करना है तो अपने दृष्टिकोण को विस्तृत करना अत्यंत आवश्यक है। अगर आप एक छोटी सी दुनिया में ही सिमटकर रहेंगे तो बहुत जल्दी ऊब जाएँगे और लगेगा कि सीखने को कुछ है ही नहीं।

एक पहलू यह भी

सुलज्जा केवल तकनीकी विद्वत्ता ही नहीं रखती हैं, वह केवल मशीनी दुनिया तक ही केंद्रित नहीं हैं, बल्कि उनके व्यक्तित्व का एक अन्य पहलू भी है, जो उन्हें विशिष्ट बनाता है। वह अत्यंत संवेदनशील व दयालु भी हैं। इसीलिए विकलांग व असहाय लोगों की मदद करने में सदा आगे रहती हैं। वह नियमित रूप से अपांग सैनिकों को स्कूटर बाँटती हैं। अहमदाबाद में एक स्कूल चलाने के अतिरिक्त कायनेटिक का हाईअप लेपरोसी सेंटर भी है। यह ‘स्वप्र भूमि’ नामक एक कार्यक्रम भी चलाती हैं, जिसके अंतर्गत देश भर में ग्रामीण लोगों को रोजगार दिलाने का प्रयास किया जाता है।

सुलज्जा को अपनी उपलब्धियों के कारण कई अवार्ड भी मिले हैं। इंडिया टूडे ने सन् 2003 में उन्हें ‘फेस ऑफ द मिलेनियम’ बिजनेस वूमैन के रूप में कवर पर छापा था। ‘फॉर्च्यून इंडिया’ ने उद्यमियों के चयन के लिए आयोजित सर्वेक्षण में 25 शीर्ष बिजनेस लीडरों में उनका भी नाम था। सन् 2002 के लिए इकोनॉमिक फोरम ने ‘ग्लोबल लीडर ऑफ टुमारो’ के रूप में चुना था।

हमेशा कुछ नया करने की चाह रखनेवाली सुलज्जा कहती हैं, “मैं चैन से बैठनेवाली इनसान नहीं हूँ और हमेशा कुछ नया काम करने की धुन मेरे दिमाग में चलती रहती है।”

वाहनों की तकनीकी जानकारी रख एक प्रबंधक के रूप में कार्यभार संभाल कर पुरुषों के क्षेत्र में अपना वर्चस्व कायम करना उनके लिए बेशक बड़ी बात न हो, पर काम को अंजाम देकर और चुनौतियों को स्वीकार कर जो उपलब्धियाँ उन्होंने हासिल की हैं, वे यकीनन काबिले-तारीफ हैं।



स्वाति पिरामल



एक असाधारण यात्रा

डायरेक्टर, स्ट्रेटेजिक एलाइंसेस एंड कम्युनिकेशंस, निकोलस पिरामल इंडिया लि.

“जीवन हरक नदी की तबूह है, जो अपने किनारों को छोलिए
नहीं छूता कि उसके नजदीक जा सके, बल्कि छू पल कुछ नया
जानने के लिए और यह भी कि समुद्र की ओर जाने के लिए
उसके पास असीमित अवसर हैं। हसी तबूह मैंने प्रगति की है—
नदी की तबूह।”

कई महिलाओं में नेतृत्व करने की क्षमता जन्मजात होती है और यह बात स्वाति पिरामिल पर पूर्णतया सटीक बैठती है। स्ट्रेटेजिक एलाइंसेस एड कम्युनिकेशंस, निकोलस पिरामल इंडिया लि. की डायरेक्टर और भारत की सर्वश्रेष्ठ महिला उद्यमियों में से एक स्वाति पिरामल का सौम्य व शालीन व्यक्तित्व, शांत व्यवहार, अभिभूत करनेवाली मुसकान और कुशल प्रबंधकीय निपुणताओं ने उन्हें देश की प्रभावी महिलाओं की गिनती में ला खड़ा

किया है। प्रयोग करते रहने और आसानी से किसी चीज से ऊब जानेवाली स्वाति के अंदर बच्चों जैसी ऊर्जा व उत्साह निहित है, जो उन्हें एक काम के बाद दूसरा काम करने को प्रेरित करता है, पर पहला काम पूरा करने के बाद।

उत्सुकता बनी जीने का ढंग

28 मार्च, 1956 को मुंबई के शाह परिवार में जनमीस्वाति का बचपन संयुक्त परिवार में गुजरा। अपने दादा-दादी, चाचा-चाची आदि के बीच लाड़-प्यार और देखभाल में पली-बढ़ीं स्वाति इतने लोगों के बीच भी अकसर कहीं-अकेली किसी कोने में बैठी किताब पढ़ती नजर आतीं। घर में चहल-पहल सदा रहती, पर वह हमेशा चुप ही रहतीं। अपने पिता की पढ़ने की आदत और माँ की खाना बनाने में महारत के ईर्द-गिर्द उनकी धुरी धूमती रहती। उनके पिता उन्हें अपने साथ किताबें खरीदने बाजार ले जाते। वह उन्हें साथ लाइब्रेरी ले जाते, ताकि वह सबसे अच्छी दोस्त किताबों को छूकर महसूस कर सकें। अपने खाली समय में उनके पिता उन्हें ‘रामायण’ और ‘महाभारत’ की कहानियाँ सुनाते। भगवत्कथा ने उनके बाल मन के अंदर ऐसे मूल्य रोप दिए, जिन्होंने उनके बड़े होने पर एक अच्छा और न्यायप्रिय इनसान बनने में मदद की।

उनके पिता हमेशा उन्हें यही सिखाते कि अपने आसपास की दुनिया के प्रति एक कौतूहल रखो और इस तरह से ज्ञान प्राप्त करो मानो ‘कल’ का अस्तित्व विद्यमान ही नहीं है। यही वजह थी कि हर चीज को जानने की उत्सुकता स्वाति की आदत व जीने का ढंग बन गया। आज भी उनके अंदर वह बच्चा विद्यमान है, जो हर खिलौने को खोलकर देखना चाहता है, ताकि जान सके कि वह चलता कैसे है। एक तरफ उनके पिता ने अगर उनकी बौद्धिकता को तराशा तो दूसरी ओर उनकी माँ ने उन्हें घर के कामकाज में निपुण कर उनके अंदर एक अच्छी गृहिणी के गुण विकासित किए।

बहुमुखी प्रतिभा

बहुमुखी प्रतिभा की धनी स्वाति के लिए पूरा ब्रह्मांड एक प्रयोगशाला है और जीवन एक गिलास, जिसे निरंतर भरते और खाली करते रहने पर भी वह कभी रिक्त नहीं होता। उनकी शिक्षा मुंबई के बालसिंघम स्कूल से आरंभ हुई। ज्ञान को प्राप्त करने की उनकी अदम्य चाह और पुस्तकों के प्रेम ने न सिर्फ उन्हें पढ़ाई को गंभीरता से लेने के लिए प्रेरित किया वरन् वाद-विवाद प्रतियोगिता, कविता, संगीत व नाटकों में भी वह बढ़-चढ़कर हिस्सा लेती थीं।

बचपन से ही उनके अंदर डॉक्टर बनने की इच्छा पलने लगी थी। मुंबई के सेंट जेवियर कॉलेज में उन्होंने अपने प्री मेडिकल के वर्ष बिताए। फिर यूनिवर्सिटी ऑफ मुंबई के किंग एडवर्ड मेमोरियल हॉस्पिटल से मेडिसिन की पढ़ाई की। उस दौरान उनकी मुलाकात अजय पिरामिल से हुई, जिनसे उनकी मुलाकात स्वाति के स्कूल में पढ़नेवाले अजय के चर्चेरे भाई ने करवाई थी। कॉलेज में आने तक उनकी दोस्ती काफी गहरी हो गई थी। वह उस समय मात्र 16 वर्ष की थीं; लेकिन वक्त बीतने के साथ उन्हें एहसास हुआ कि अजय के साथ वह पूरा जीवन बिताना चाहती हैं। अजय उस समय बिजनेस का अध्ययन कर रहे थे, जब दोनों की शादी हो गई।

नियति ने ही शायद उन दोनों का मेल कराया था, तभी तो जब उन्होंने फार्मा बिजनेस की शुरु आत की तो स्वाति का मेडिसिन और अजय का वित्तीय ज्ञान काम आया। स्वाति मानती हैं कि अजय और वह हर स्तर पर एक-दूसरे के पूरक हैं। वह कहती हैं कि अजय स्त्रियों की आजादी के पक्षधर हैं। वह मानते हैं कि स्त्रियाँ भारत के लिए एक शक्तिशाली ताकत का निर्माण कर सकती हैं। वह कहती हैं, “अजय के सहयोग के बिना मेरा उपलब्धियों के शिखर को छूना मुमकिन नहीं था।”

जीवन की गुणवत्ता में सुधार की चाह

सन् 1984 में अपनी मेडिकल निपुणताओं को और प्रखर बनाने के लिए स्वाति ने मुंबई के कॉलेज ऑफ फिजिशियंस ऐंड सर्जन्स, इंडस्ट्रियल मेडिसिन में प्रवेश ले लिया। विवाह से पहले स्वाति अपनी मेडिकल की पढ़ाई पूरी करना चाहती थीं, पर अजय के पिता चाहते थे कि वे दोनों जल्दी से विवाह-सूत्र में बँध जाएँ। अजय के पिता स्वर्गीय गोपालकृष्ण पिरामिल टेक्सटाइल उद्योग के समाट थे और चाहते थे कि उनका बेटा जल्दी-से-जल्दी उनका काम सँभाल ले। स्वाति से भी उन्होंने वादा किया कि वह उन्हें एक अस्पताल बनाकर देंगे, ताकि वह अपने कैरियर को ऊँचाइयों तक ले जा सकें।

पर नियति का चक्र विपरीत दिशा में घूम गया और असमय ही उनके पिता की मृत्यु हो गई और तब उनके भाई अशोक पिरामिल ने स्वाति के लिए अस्पताल बनवाने का उनका वह वादा पूरा किया। सन् 1988 में अस्पताल बनने के बाद मेडिसिन में प्राप्त थोड़े से ज्ञान और बिना किसी अनुभव के वह मुंबई के गोपालकृष्ण पिरामिल मेमोरियल अस्पताल को सँभालने में जुट गई। मुंबई से पोलियो को जड़ से उखाड़ना उनका लक्ष्य था और उसके लिए उन्होंने नई-नई चिकित्सा-पद्धतियाँ विकसित कीं। वह चाहती हैं कि दुनिया भर के लोगों की जिंदगी में सुधार हो सके। वह मानती हैं कि अगर आप दवाइयों के माध्यम से यह कोशिश करते हैं तो जीवन की गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।

एक युवा छात्रा के रूप में उन्होंने मुंबई के परेल के पोलियोग्रस्त बच्चों की स्थिति को देख स्वयं से वादा किया था कि वह जड़ से पोलियो का उन्मूलन करके रहेंगी। और 22 वर्ष की उम्र में जब उन्होंने अपना खुद का अस्पताल खोला तो इस अभियान में पूरी तरह से उनका जुड़ जाना स्वाभाविक ही था। निकोलस से पूरी तरह से जुड़ जाने के बाद उन्होंने बायोटेकनोलॉजी डिवीजन की शुरुआत की और ड्रग डिस्कवरी रिसर्च में निवेश किया।

जारी रहे प्रयास

गोपालकृष्ण पिरामिल मेमोरियल अस्पताल में, जहाँ शारीरिक रूप से विकलांग बच्चों का इलाज किया जाता था, एक खास शैली अपनाई गई। इसके अंतर्गत उन्होंने यह ताकीद दी कि वहाँ काम करनेवाला हर व्यक्ति मरीज को बाँहों में भरेगा या उसकी पीठ थपथपाएगा या फिर उसे गोदी में उठाकर इस बात का एहसास दिलाए कि उसकी दूसरों को भी जरूरत है। स्नेह और प्यार का यह तरीका बहुत ही कारगर साबित हुआ। पर स्वाति केवल इतने भर से ही संतुष्ट होने वालों में से नहीं थीं, क्योंकि वह चाहती थीं कि कमजोर वर्ग के लोगों को भी वैसा ही इलाज मिलना चाहिए, जो बड़े-बड़े अस्पतालों में किसी करोड़पति को मिलता है। इसलिए वह जापानियों के क्वालिटी स्टैंडर्ड को सीखने व कायजेन को अस्पताल की कार्यशैली में लागू करने में जुट गई। भारत का पहला चैरिटेबल अस्पताल बन जाने और एशिया में कुछ गिने-चुनों में से आई.एस.ओ. 9002 सर्टिफिकेशन प्राप्त करने के बाद भी स्वाति के प्रयासों में कमी नहीं आई।

रखती गई नई दिशाओं में कदम

सन् 1992 में 37 वर्ष की उम्र में हार्वर्ड में पब्लिक हैल्थ में मास्टर्स करने के लिए उन्होंने दाखिला ले लिया। उस समय तक वह दो बच्चों आनंद और नंदिनी की माँ बन चुकी थीं। वह अकाउंटिंग, मार्केटिंग, कम्युनिकेशन और ऑटोमेशन की सही तरह से जानकारी प्राप्त करना चाहती थीं, ताकि मैनेजमेंट की बारीकियों को भी बेहतर ढंग से समझ सकें। वहाँ उन्हें महिला व स्वास्थ्य विषय पर बोलने का अवसर भी मिला।

भारत लौटने पर स्वाति निकोलस पिरामिल से जुड़ गई, जिसे अजय ने ऑस्ट्रेलिया की फार्मा कंपनी निकोलस लेबोरेटरीज पर अधिग्रहण करने के बाद गठित किया था। स्वाति ने अब अपनी योग्यता व क्षमताओं को कंपनी का विकास करने में लगाना आरंभ कर दिया। निर्माण में अमेरिका के एफ.डी.ए. मानकों पर खरा उत्तरने के लिए, एंटरप्राइज रिसोर्स प्लानिंग सॉल्यूशंस को लागू करने के लिए उन्होंने एक टास्क फोर्स तैयार की। फिर कंपनी में बहुत अधिक कार्य-कुशलता निर्मित करने के लिए उन्होंने डेटा वेयर हाउसिंग सॉल्यूशंस

तैयार किए, कंपनी ने ई-बिजनेस की शुरुआत की। कंपनी की आईटी संरचना में उन्होंने आमूलचूल परिवर्तन कर दिया, परिणामतः उन्हें बेहतर बिजनेस मिलने लगा।

सन् 1998 में गठित निकोलस लेबोरेटरीज, जो अब लाइफ साइंसेज और हैल्थकेयर बहुराष्ट्रीय पिरामल ग्रुप बन चुका है—भारत, अमेरिका व यूरोप में फैले इसके ऑपरेशंस के तहत अगर एक तरफ 10,000 से भी अधिक लोग काम करते हैं तो वहींयह 100 से भी अधिक देशों में अपने उत्पाद बेचता है। डॉ. स्वाति पिरामल का लक्ष्य भारत में हैल्थकेयर को सबके लिए उपलब्ध करनेवाले क्षेत्र बनाने पर केंद्रित करने के कारण ही आज पिरामिल डायग्नोस्टिक पैथोलॉजी व इमेजिंग सेंटर देश भर में 100 से अधिक शहरों में खुले हुए हैं। निकोलस ग्रुप ने मुंबई के एच.एम.आर. रिसर्च सेंटर को भी अधिकार-क्षेत्र में ले लिया। उसके बाद वेलस्प्रिंग क्लीनिक सुविधाएँ आरंभ कीं। इस तरह से स्वाति लगातार नए विभाग व नए प्रोडक्ट्स तथा नई दिशाओं में कदम रखती गई।

कला-प्रेम

स्वाति का कला के प्रति प्रेम कभी डांस ओपेरा के रूप में तो कभी मुंबई के निकोलस पिरामिल रिसर्च सेंटर में होनेवाले सांस्कृतिक कार्यक्रमों के माध्यम से अभिव्यक्त होता है। रिसर्च सेंटर में लगे म्यूरल, मूर्तियाँ, वहाँ का वास्तुशिल्प व इंटीरियर सब उनकी कलात्मक अभिरुचि को अभिव्यक्त करते हैं। यही नहीं, वहाँ की प्रत्येक प्रयोगशाला में किसी-न-किसी तरह की कलाकृति लगी है। लेकिन उनकी रचनात्मकता और हर पल कुछ नया करने की चाह केवल यहीं तक सीमित नहीं है, उनकी कला के प्रति यह जिजीविषा किचन में भी परिलक्षित होती है। अपनी पाक कला का प्रदर्शन वह केवल परिवार के सदस्यों व विदेशों से आनेवाले खरीदारों को नई और अलग-अलग तरह की डिशेज बनाकर करने से ही जब उन्हें संतुष्टि नहीं मिली तो उन्होंने मुंबई में ‘बिस्कोटी’ नामक इटालियन रेस्तराँ खोला। यही नहीं, उन्होंने पाक कला विशेषज्ञ तरला दलाल के साथ ‘ईट योअर वे टू गुड हैल्थ’ नामक एक पुस्तक भी लिखी। अपनी व्यस्त जीवन-शैली के बावजूद उन्होंने दो किताबें और भी लिखी हैं—‘डांस ऑफ लाइफ’ और ‘द लाइट हैज कम टू मी’।

संगीत और विज्ञान दोनों भिन्न विधाओं में बराबर दिलचस्पी ने उन्हें रवींद्रनाथ टैगोर के साइंस गान की पुनः संरचना करने के लिए प्रोत्साहित किया, जो मूलतः कोलकाता के बोस इंस्टिट्यूट के उद्घाटन के लिए लिखा गया था, पर कहींकागजों में दबकर रह गया था। उसे डिस्क रिकॉर्ड की तरह संगृहीत किया गया। मशहूर गीतकार जावेद अख्तर को उसका हिंदी अनुवाद करने के लिए कहा गया और निकोलस पिरामिल ने पंडित जसराज द्वारा गाए इस गान को राष्ट्र को समर्पित किया।

आध्यात्मिकता का समावेश

विज्ञान की बारीकियों से जूझती स्वाति के जीवन में आध्यात्मिकता का समावेश तब हुआ जब वह पहली बार मदर टेरेसा से मिलीं। वह कहती हैं, “वह हमारे अस्पताल में पेड़ लगाने आई थीं। जिस ढंग से उन्होंने लकवाग्रस्त बच्चों को छुआ और उस समय जो ममता व दया उनके चेहरे से परिलक्षित हो रही थी, उससे मैं अभिभूत हो गई और उन्होंने मुझे सिखाया कि जब किसी की मदद करने और इस दुनिया को रहने की एक बेहतर जगह बनाने की इच्छा मन में जाग्रत् होती है तो ईश्वर हमारे साथ होता है।”

मुंबई के हरे कृष्ण मंदिर के पुजारी राधानाथ महाराज ने उन्हें जीवन व दया का वास्तविक अर्थ समझाया। एक वर्ष तक स्वाति ने अजय के साथ ‘गीता’ का अध्ययन किया।

परिणामतः गीता में सिखाए गए ज्ञानयोग, कर्मयोग और भक्तियोग के बारे में वह ज्यादा बेहतर ढंग से समझ पाए। ‘गीता’ में छिपे भावार्थों ने उनके दृष्टिकोण को तो निखारा ही, साथ ही मैनेजमेंट के सिद्धांतों में गहन अर्थों का समावेश करने में मदद की।

बौद्ध, सूफी, वेद पढ़ने में अपना खाली समय व्यतीत करनेवाली स्वाति खुद लेखन से भी जुड़ गई हैं। वह फिल्म बनाना चाहती हैं। नित नई तरह की दवाइयों की खोज में लगी रहनेवाली स्वाति का सपना ऐसी दवाई बनाने का है, जो लोगों की जिंदगी बचा सके।

संतुलन व धैर्य को अपनाया

एक भारतीय एम.एन.सी. का हिस्सा होने के कारण, जो 100 से ज्यादा देशों में बिकता है और जिसके चार देशों में संयंत्र हैं, स्वाति को देश-विदेश की बहुत यात्राएँ करनी पड़ती हैं। वह कहती हैं, “एक कामकाजी महिला के जीवन की सबसे बड़ी सच्चाई यही है कि उसे काम, घर, रिश्ते और बच्चों को सँभालने के लिए धैर्य की आवश्यकता होती है। अगर आप यह सीख जाएँ कि हर पल का आनंद कैसे उठाना है; हर भूमिका जो आपको निभानी है, उसका आनंद उठाना आप सीख जाएँ तो कोई वजह नहीं कि हार का सामना करना पड़े।” निजी व प्रोफेशनल जीवन में संतुलन कायम रखने की उनकी सफलता ने उन्हें इस बात का यकीन दिला दिया कि जो औरतें अपनी खुद करती हैं, वे असाधारण ऊँचाइयों को छू सकती हैं। लेकिन इसके लिए उन्हें अपनी क्षमताओं व योग्यताओं पर यकीन करना होगा।

भाग्यवश भारतीय महिलाओं में ऐसा करने की अंतर्निहित क्षमता है।

सन् 2009 में एसोचैम (ASSOCHAM) की पहली महिला प्रेसीडेंट बननेवाली स्वाति के लिए जीवन एक बेहतरीन संतुलन से अधिक और कुछ नहीं है। उन्हें कई बार खुद पर आश्वर्य होता है कि आखिर वह कैसे कुशलता से यह संतुलन कायम कर पाती हैं। इंडियन

चैंबर्स ऑफ कामर्स, एसोचैम के 90 वर्ष के इतिहास में पहली महिला प्रेसीडेंट के रूप में मनोनीत होकर स्वाति सुखियों में आई। इसके तुरंत बाद उन्होंने चैंबर्स की राष्ट्रीय उप-समितियों की अध्यक्षता करने के लिए 100 महिलाओं का चयन किया।

एक पहलू यह भी

एसोचैम के द्वारा 10 हैंडलूम साड़ी बुनकरों के काम की प्रदर्शनी लगाकर उन्होंने उनके काम को दुनिया के सामने लाने में मदद की। बुनकरों के काम को देखने के लिए वह लगातार वह दो-तीन महीनों तक देश के 10 विभिन्न राज्यों की यात्रा पर रहीं। साड़ियों के प्रति आकर्षण ने ही उन्हें इस तरह की प्रदर्शनी लगाने को प्रेरित किया। वह कहती हैं, “देश भर में घूमना और बुनकरों को काम करते देखना एक अनोखा अनुभव था। मैंने बहुत तरह की साड़ियाँ खरीदीं।” साड़ियाँ एकत्रित करने के अतिरिक्त वह पुरानी किताबों को भी संगृहीत करने का शौक रखती हैं। मुंबई के चोर बाजार व पुरानी दिल्ली के जामा मसजिद में अक्सर जानेवाली स्वाति के घर में किताबों का भंडार है। कविताएँ लिखने व पढ़ने की शौकीन स्वाति हमेशा अपने साथ एक नोटबुक रखती हैं, ताकि जब भी चाहें, कविता लिख सकें। पिछले एक-दो साल से उनके अंदर बागबानी का शौक विकसित हुआ है और वह मानती हैं कि उससे बहुत सुकून मिलता है।

दूसरों की मदद से मिलती है ताकत

भारत के प्रधानमंत्री ने उन्हें सी.एस.आई.आर. (काउंसिल ऑफ साइंटिफिक एंड इंडस्ट्रीयल रिसर्च बोर्ड) साइंटिफिक एडवाइजरी कमेटी के एक सदस्य के रूप में मनोनीत किया है। प्रधानमंत्री की साइंटिफिक एडवाइजरी काउंसिल में वही एकमात्र महिला सदस्य हैं। सन् 2009 में उन्हें ‘राजीव गांधी अवार्ड’ से सम्मानित किया गया। सन् 2010 में उन्हें राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल ने भारत में कॉरपोरेट गवर्नेंस को बढ़ावा देने के लिए अवार्ड प्रदान किया। यह अवार्ड उन्हें सारी एसोचैम सदस्य कंपनियों में अच्छी गवर्नेंस को बढ़ावा देने में योगदान के लिए दिया गया। मई 2010 में लंदन में ग्यारहवें एशियन वूमैन ऑफ एचीवमेंट अवार्ड्स में विशेष अवार्ड से सम्मानित किया गया।

उन्हें फ्रांस की सरकार ने दवाई व व्यापार के क्षेत्र में भारत-फ्रांस के संबंधों को विकसित करने में योगदान के लिए सबसे उच्च नागरिक सम्मान ‘शेवेलियर द ल ऑर्डर नेशनल ड्यू मेरिट’ से भी सम्मानित किया गया। स्वाति कॉन्फेडरेशन ऑफ इंडिया (सी.आई.आई.) की नॉलेज इंडस्ट्रीज काउंसिल की भी सदस्य हैं।

वह मानती हैं कि औरतें नेटवर्क बनाने में बहुत बेहतर होती हैं और हमेशा टीम की तरह काम करने की बात पर जोर देती हैं। दूसरे, ज्ञान बहुत अनिवार्य है और आज की महिला अपने क्षेत्र से जुड़े विषय के बारे में स्वयं को हमेशा अपडेट रखती हैं। साथ ही महिलाएँ ही दूसरों के लिए एक अच्छी रोल मॉडल बनने की क्षमता रखती हैं। हम भारतीय महिलाएँ केवल भारत में ही नहीं, दुनिया भर में अपनी पहचान बनाने की ताकत रखती हैं।

स्वाति के लिए ताकत का अर्थ है—लोगों की जिंदगी में खुशहाली और बदलाव लाना। वह बीमारियों के बोझ को कम करने में मदद करनेको ही वास्तविक ताकत मानती हैं। वह कहती हैं कि पेररणा आपको अंदर से मिलती है और इसके लिए सपने देखें। क्योंकि जो सपने आप देखते हैं, वे आपकी इच्छा पर आधारित होते हैं। और जो इच्छा आप करते हैं, वह आपके कार्य पर आधारित होती है और जो आपके कार्य होते हैं, वही आपकी नियति बन जाती है।

भविष्य की 20 Business वूमैन



अंजलि बंसल

मैनेजिंग पार्टनर, स्पेंसर स्ट्राट : अंजलि स्पेंसर स्ट्राट के मुंबई ऑफिस को सँभालती हैं, जो बहुराष्ट्रीय व भारतीय कंपनियों को गंभीर नेतृत्व और बोर्ड के मुददों पर सेवाएँ प्रदान करता है। पूर्व मैकिंजे कंसल्टेंट अंजलि, फर्म की फायनेंशियल सर्विसेस और टेक्नालोजी, कम्प्यूनिकेशंस व मीडिया प्रैक्टिसिस की कोर मेंबर हैं।

अंजलि ने गुजरात यूनिवर्सिटी से कंप्यूटर इंजीनियरिंग में ग्रेजुएशन करने के बाद कोलंबिया यूनिवर्सिटी से इंटरनेशनल फाइनेंस व बिजनेस में पोस्ट ग्रेजुएशन किया। विकास के मामलों में उनकी गहरी दिलचस्पी है, खासकर जब बात गरीबी और जीविकार्जन की हो। वह अप्रणीत अंतरराष्ट्रीय माइक्रोफाइनेंस नेटवर्क, वूमेंस वर्ल्ड बैंकिंग के भारतीय बोर्ड पर भी हैं और ग्रामीण फाउंडेशन, अमेरिका व भारत में सेवा बैंक से भी जुड़ी हुई हैं। इसके अतिरिक्त वह दि इंडस एंटरप्रेनर्स की चार्टर मेंबर भी हैं।





अनीता अर्जुनदास

सी.ई.ओ., महिंद्रा लाइफस्पेसेस : बी.आई.एम., त्रिची से बिजनेस-मैनेजमेंट पोस्ट-ग्रेजुएट अनीता के पास 19 साल का प्रोफेशनल अनुभव है। वह महिंद्रा वर्ल्ड सिटी डेवलपर्स लिमिटेड के लिए सन् 2002 में बतौर वाइस प्रेसीडेंट महिंद्रा ग्रुप से जुड़ी थीं। सन् 2006 में वह महिंद्रा वर्ल्ड सिटी, चेन्नई की सी.ओ.ओ. बना दी गई, जहाँ उन्होंने इन्फोसिस, बी.एम.डब्ल्यू., शेल, बी. ब्राउन और टी.वी.एस. ग्रुप जैसे कई अग्रणी भारतीय व अंतरराष्ट्रीय नामों को भारत के पहले विशेष आर्थिक क्षेत्र एवं भारत की पहली संघटित बिजनेस शहर को सार्वजनिक-निजी भागीदारी के मॉडल के रूप में लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 1,550 एकड़ में फैली महिंद्रा वर्ल्ड सिटी देश का आज पहला विशेष आर्थिक क्षेत्र बन चुकी है।



अनीशा मोटवाणी

सी.एम.ओ., मैक्स न्यूयॉर्क लॉइफ़ : सन् 2007 में मैक्स न्यूयॉर्क लाइफ जॉइन करने से पहले अनीशा जनरल मोटर्स में डायरेक्टर, मार्केटिंग थीं, जहाँ उन्हें एशिया पैसेफिक के लिए बेस्ट मार्केटिंग एंप्लोई अवार्ड से सम्मानित किया गया था। मैक्स न्यूयॉर्क लाइफ को जॉइन करने के कुछ महीनों बाद ही उन्होंने उसे नया स्लोगन—‘करो ज्यादा का इरादा’ दिया, जो आज बहुत प्रचलित हो गया है।

वह एशिया ब्रॉड कांग्रेस और ग्लोबल यूथ फोरम के एडवाइजरी बोर्ड पर भी हैं। वह दिल्ली स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स, मुद्रा इंस्टिट्यूट ऑफ कम्प्यूनिकेशंस, अहमदाबाद, आई.एस.बी. हैदराबाद और अन्य अनेक मैनेजमेंट स्कूलों की विजिटिंग फैकल्टी भी हैं। एक बिजनेस पत्रिका ने उन्हें राइजिंग स्टार के रूप में सम्मानित किया है।



अपूर्वा पुरोहित

सी.ई.ओ., रेडियो सिटी : उन्होंने रेडियो सिटी को नई ऊँचाइयों पर पहुँचाया है। जब सन् 2005 में वह रेडियो सिटी से जुड़ी थीं तो उसके केवल 4 स्टेशन थे और आज संख्या 20 तक पहुँच चुकी है। वह मानती हैं कि अगर आप अपने कॅरियर को लेकर गंभीर हैं तो उसे हमेशा अपने परिवार के साथ सबसे पहली प्राथमिकता पर रखें। उन लोगों की बातों पर ध्यान न करें, जो कहते हैं कि एक के लिए दूसरे का त्याग करना ही पड़ता है। कड़ी मेहनत और सही समय प्रबंधन से दोनों को आसानी से सँभाला जा सकता है। अपनी क्षमताओं का विस्तार करने तथा खुद का विकास करने के लिए हमेशा अवसरों पर नजर रखें।





अश्विनी याडी

प्रोग्रामिंग हेड्स, कलर्स : चाहे जी टी.वी में हों, जहाँ वह पहले थीं या आज कलर्स में, अश्विनी जानती हैं कि अपने हिंदी बोलनेवाले दर्शकों की नब्ज कैसे पकड़नी है। सन् 2008 में कलर्स के लॉज्च होने के कुछ हफ्तों बाद ही नतीजे और पसंद सबके सामने आ गई थी। इस चैनल के सीरियलों को दर्शकों ने खूब सराहा। आज कलर्स हिंदी मनोरंजन चैनल वर्ग में सबसे ऊपर पहुँच चुका है। सास-बहू सीरियलों से ऊबे दर्शकों को बिग बॉस जैसे चुनौतीपूर्ण कार्यक्रमों से मनोरंजन करने और बालिका वधु उत्तरन, न आना इस देश लाडो जैसे सीरियलों से लोगों के दिलों में उतरने के कारण कलर्स आम लोगों में अपनी एक पहचान बना चुका है।



आशनी बियानी

डिजाइन मैनेजर, फ्यूचर ग्रुप : फ्यूचर ग्रुप के सी.ई.ओ. किशोर बियानी की बेटी आशनी ग्रुप का इनोवेशन और इंक्यूबेशन डिवीजन सँभालती हैं। इस डिवीजन का गठन ग्रुप के लिए

नए प्रोजेक्ट को सँभालने व उसमें नए विचार समन्वित करने के लिए किया गया था। बिजनेस को कैसे बढ़ाया जा सकता है, इसके लिए आशनी डिजाइन पर ध्यान देती हैं।

मुंबई में क्वीन मैरी स्कूल से पढ़ने के बाद वहीं के एच.आर. कॉलेज से दो साल की पढ़ाई की और उसके बाद बंगलौर के सृष्टि स्कूल ऑफ आर्ट एंड डिजाइन से टेक्सटाइल डिजाइन में कोर्स किया, फिर न्यूयॉर्क में पारसंस स्कूल ऑफ डिजाइन से डिजाइन मैनेजमेंट और स्टैनफोर्ड से जनरल बिजनेस प्रोग्राम, बिजनेस डेवलपमेंट एंड डाइवर्सिफिकेशन मैनेजर, मेडीसन वर्ल्ड : बेशक लारा को बचपन में यह नहीं पता था कि वह बड़े होकर क्या बनना चाहती हैं, पर उन्हें यह पता था कि वह इंजीनियर या डॉक्टर बनने के बजाय कुछ अलग हटकर करना चाहती हैं।



चारु सहगल

सीनियर डायरेक्टर, डीलोएट, इंडिया : हैल्थकेयर की नामी पत्रिका 'मॉडर्न हैल्थकेयर' ने चारु सहगल को भारतीय हैल्थकेयर इंडस्ट्री में 20 महिला एचीवर्स में से एक के रूप में सूचीबद्ध किया है। हैल्थकेयर क्षेत्र में 20 साल से ज्यादा अनुभव रखनेवाली चारु उन कुछ महिलाओं में से हैं, जिन्होंने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इस क्षेत्र में अनेक भारतीय व अंतरराष्ट्रीय क्लाइंट्स के साथ काम करने के अतिरिक्त उन्होंने केंद्रीय व अनेक राज्य सरकारों के साथ भी काम किया है।

वह कहती हैं कि इस समय भारत में हैल्थकेयर क्षेत्र उस जगह पर है जहाँ एक तरफ तो इस क्षेत्र में भारत को दुनिया भर में पहचान मिल रही है और दूसरी ओर ग्रामीण भारत की एक विशाल आबादी सही व पर्याप्त स्वास्थ्य सेवाओं के अभाव में जूझ रही है। हमें ऐसे

समाधान ढूँढ़ने होंगे, जिसका बेहतरीन स्वास्थ्य-लाभ केवल शहर में रहनेवाले अमीर लोगों तक ही न पहुँचे, वरन् हर भारतीय को मिलें।



दीपाली गोयनका

डायरेक्टर, वेलस्पन रिटेल : भारत की विशालतम होम टेक्सटाइल चेन वेलस्पन (डब्ल्यू.आर.एल.)को खोलने के पीछे दीपाली का ही हाथ और सूझबूझ है, जिसके 110 शहरों में 150 स्टोर हैं। ब्रिटेन के अग्रणी तौलिए के ब्रांड का अधिग्रहण कर उन्होंने अपने घाटे में जाते हुए बिजनेस को बचाया।

साइकोलोजी ग्रेजुएट दीपाली, ने 'स्पेसेस होम एंड बियांड और 'वेलहोम' जैसे ब्रॉड लॉज्च किए। उनके मार्गदर्शन में आज डब्ल्यू.आर.एल. के डिजाइन स्टूडियो विश्व भर में सबसे बेहतर होने की श्रेणी में आते हैं। वह मानती हैं कि कंपनी का भविष्य उसके कर्मचारियों के हाथों में होता है। वह यह मानती हैं कि समाज से हमें जो मिला है, उसे किसी-न-किसी रूप में अवश्य लौटाना चाहिए और उनकी यह बात उनका हर कर्मचारी भी मानता व पालन करता है।

कन्या शिशु के स्तर को उठाना भी दीपाली के जीवन की एक अन्य प्राथमिकता है और वेलस्पन में शिक्षा पर मुख्य ध्यान दिया जाता है। उन्होंने अंजर, गुजरात में वेलस्पन विद्या मंदिर हाई स्कूल और वेलस्पन आँगनवाड़ी की स्थापना की है।





देविता सरफ

सी.ई.ओ., वीयू टेलीविजन्स और एग्जीक्यूटिव डायरेक्टर, जेनिथ कंप्यूटर्स : देविता 'इंडिया टुडे' की भारत में 25 सबसे ताकतवर महिलाओं में सबसे युवा बिजनेस वूमैन हैं। वह वीयू टेलीविजन की युवा सी.ई.ओ. हैं, जिसका गठन उन्होंने सन् 2005 में 24 वर्ष की उम्र में किया था। 16 वर्ष से ट्रेनिंग लेना आरंभ करने के बाद वह 21 वर्ष की उम्र में जेनिथ ग्रुप, जो उनका पारिवारिक बिजनेस था, की डायरेक्टर बन गई। 26 वर्ष की उम्र में उन्होंने जी.टी.वी. का 'यंगेस्ट एचीवर ऑफ द ईयर' का अवार्ड जीता।

तकनीक में विशिष्टता और सुविधा जैसी शब्दावली की खोज करके उन्होंने उसमें विस्तृत विचारों व अवधारणाओं का समावेश किया। अगर उनके बारे में बताने के लिए किसी एक शब्द का उपयोग किया जा सकता है तो वह है प्रगतिशील।

आज वीयू टेलीविजन बड़े-बड़े नामों के बीच एक जगह बना चुका है और उन्हें एक कड़ी चुनौती भी दे रहा है। अपने अनोखे उत्पादों जैसे इंटेलीजेंट टी.वी., वाटरप्रूफ एल.सी.डी., कार टी.वी., टच स्क्रीन उत्पादों के कारण आज हर घर में वीयू का स्वागत किया जाता है। देविता मानती हैं कि तकनीक ने हमारी दुनिया को बदल दिया है और वह भी बेहतरी की ओर। इसलिए वह बाजार में एक से एक लक्जरी प्रोडक्ट्स लाने को तत्पर रहती हैं।





निशा गोदरेज

प्रेसीडेंट, ह्यूमन कैपिटल ऐंड इनोवेशन, गोदरेज इंडस्ट्रीज़ : उन दो महिलाओं में से एक, जिनका नाम ‘फोब्स’ की सन् 2010 की दस अरबपति उत्तराधिकारिणी की वार्षिक सूची में दर्ज किया गया। गोदरेज ग्रुप के चेयरमैन अदि गोदरेज की बेटी निशा ने व्हाटर्न से ग्रेजुएशन की डिग्री प्राप्त की और हार्वर्ड बिजनेस स्कूल से एम.बी.ए. किया है। बतौर मैनेजमेंट ट्रेनी कंपनी से जुड़ने के दस वर्षों बाद उन्हें ह्यूमन कैपिटल ऐंड इनोवेशन, गोदरेज ग्रुप का प्रेसीडेंट नियुक्त किया गया। इस भूमिका में उनके पास लगभग 20,000 कर्मचारियों की जिम्मेदारी है। कंपनी के वर्तमान पोर्टफोलियो को नया रूप देने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका है। वह भारतीय फिलेंथ्रोपी फोरम की सदस्य भी हैं।



पुनीथा अरुमुगम

सी.ई.ओ., मेडीसन मीडिया ग्रुप : मीडिया की प्रभावी महिलाओं में से एक पुनीथा ने फारेंसिक साइंस में पोस्ट-ग्रेजुशन किया हुआ है। उनके पास मीडिया के सारे पहलुओं में काम करने का पंद्रह साल का अनुभव है और उन्होंने ओएंडएम और इंशिएटिव मीडिया

जैसी कई एजसियों और चेन्नई, बंगलौर और मुंबई जैसे कई बाजारों में काम किया हुआ है। ब्रांड इक्विटी एड एजेंसी रेकोनर ने उन्हें भारतीय मीडिया इंडस्ट्री में 10 प्रभावी लोगों में से एक माना। सन् 2006 में उन्हें ‘जी.आर. 8 वूमैन एचीवर्स’ अवार्ड भी दिया गया।

सन् 2000 में मेडिसन ग्रुप से जुड़ने के बाद से यह ग्रुप 2 क्लाइंट की एजेंसी से 30 ब्लू चिप क्लाइंट वाला बन गया है और इसका श्रेय जाता है पुनीथा को। श्रुति वाजपेयी, कंट्री हेड-एच.बी.ओ. : श्रुति ने तब एच.बी.ओ. जॉइन किया था, जब वर्ष 2000 में भारत में यह चैनल लॉज्च हुआ था और पिछले 10 वर्षों में वह चैनल के साथ बढ़ीं और सन् 2004 में उसकी कंट्री हेड बन गई। श्रुति ने सेंट जेवियर कॉलेज, मुंबई से इकोनॉमिक्स व स्टेटिक्स में ग्रेजुएट किया और उसके बाद जमनालाल बजाज इंस्टिट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज से एम.बी.ए.।



पूजा जैन

अपने पिता लक्जर ग्रुप के चेयरमैन डी.के. जैन को लक्जर राइटिंग इंस्ट्रमेंट्स प्राइवेट लिमिटेड चलाते देख बड़ी हुई पूजा के बारे में सहज ही मन में यह ख्याल आ सकता है कि अपने पिता के बिजनेस को सँभालना ही उनका बचपन से सपना रहा होगा। लेकिन ऐसा नहीं था। उस संगठन में काम करने की उनकी न कोई इच्छा थी, न ही बड़े होने के दौरान ऐसी कोई योजना; पर अपने पिता के साथ कुछ अंतरराष्ट्रीय मेलों में भाग लेने के पश्चात् उन्हें एहसास हुआ कि लक्जर के साथ काम करना निस्संदेह एक दिलचस्प व रोमांचक अनुभव होगा और इस तरह उनके कैरियर की यात्रा का आरंभ हुआ।

जीसस एंड मेरी स्कूल से स्कूली शिक्षा और लेडी श्रीराम कॉलेज से ग्रेजुएशन करने के बाद पूजा ने इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ फॉरेन ट्रेड से एक साल का डिप्लोमा कोर्स किया। सन् 1997 में लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स से इंटरनेशनल बिजनेस में डिग्री लेने के बाद पूजा

ट्रेनिंग लेने के लिए जिलेट और वारेन बुफे जैसी कंपनियों से जुड़ गई। भारत लौटने के बाद उन्होंने अपने पिता के साथ काम करना शुरू कर दिया। समय के साथ वह सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ती गई—सन् 1998 में प्रोडक्ट मैनेजर के पद से शुरू कर वह विभिन्न पदों पर काम करते-करते एजीक्यूटिव डायरेक्टर के पद पर पहुँची। लगभग इन 10 वर्षों के लंबे समय में उनको इस दौरान बहुत से अनुभवी लोगों के साथ काम करने का अवसर मिला।

पूजा जैन कंपनी के विकास में एक नई राह खोलते हुए आगे बढ़ रही हैं। ग्रुप का टर्नओवर 235 करोड़ अमेरिकी डॉलर से ज्यादा होने के साथ आज लक्जर एक सुपर ब्रांड की तरह जाना जाता है। पार्कर और वाटरमैन दोनों ब्रांड्स को आगे बढ़ाने एवं लोकप्रिय बनाने में उनका बड़ा हाथ है। कंपनी के रिटेल क्षेत्र में पदार्पण उनका महत्वपूर्ण कदम है। इसके लिए कंपनी ने देश भर में खास लक्जर सिग्नेचर स्टोर खोले हैं। इन स्टोरों में हर तरह के गिफ्ट उपलब्ध हैं, जिससे ग्राहकों को कहीं और जाने की आवश्यकता नहीं पड़ती है और इस तरह उन्होंने लिखने के उपकरणों को एक बेहतरीन गिफ्ट होने का दर्जा दिलवाया।



रंगीता प्रीतीश नंदी

क्रिएटिव डायरेक्टर, पी.एन.सी. : प्रीतीश नंदी की बेटी रंगीता अपने पिता की कंपनी में काम करती हैं तो इसकी वजह है कि जब एक दिन वह परसेप्ट प्रोफाइल ऐंड एजेंसी, जहाँ वह काम करती थीं, सुबह के 4 बजे घर लौटीं तो उनके पिता ने सवाल किया कि आखिर क्यों वह पी.एन.सी. में काम नहीं कर सकती हैं? तब एक महीने बाद बतौर मैनेजरेंट ट्रेनी वह प्रीतीश नंदी कम्यूनिकेशंस से जुड़ गई। यह कंपनी फिल्म निर्माण का कार्य करती है।

रंगीता की शुरू से ही मीडिया व एडवरटाइजिंग में दिलचस्पी थी। यही कारण है कि उन्होंने एच.आर. कॉलेज ऑफ कॉमर्स से एडवरटाइजिंग, सेल्स, प्रमोशनल सेल्स में वोकेशनल

कोर्स किया। ओगीलिवी एंड मैथर से इंटर्नशिप करने के बाद परसेप्ट में काम किया।

पी.एन.सी. में वह सबकी तरह सीनियर के अंतर्गत काम करती हैं और उन्हें इसलिए कोई विशेष सुविधा भी प्राप्त नहीं है, क्योंकि वह प्रीतीश की बेटी हैं।

आज काम सीखते-सीखते वह ट्रेनी से क्रिएटिव हेड बन गई हैं। उन्होंने सुर, चमेली, झंकार बीट्स, शब्द और प्यार के साइड इफेक्ट्स जैसी फिल्मों का निर्माण किया।



लारा बल्सारा

भारतीय विज्ञापन उद्योग के बादशाह और 1,300 करोड़ के मेडीसन कम्यूनिकेशंस के चेयरमैन सैम बल्सारा की बेटी लारा अपने पिता की कंपनी के लिए नित नए अवसरों की तलाश करती हैं। उनके नेतृत्व में मेडीसिन ने 50-50 का एक संयुक्त प्रोजेक्ट ब्रिटेन की एड एजेंसी बेटी मैकगुनीज बुंगे के साथ किया, ताकि वह उसे भारत में लॉज्च करे।

मुंबई के सेंट जेवियर कॉलेज से इकोनॉमिक्स में ग्रेजुएशन करने के बाद, लारा ब्रिस्टल युनिवर्सिटी से मार्केटिंग में पोस्टग्रेज्यूशन करने ब्रिटेन गई। सन् 2003 में भारत लौटने के बाद वह मेडीसिन के साथ बतौर मैनेजमेंट ट्रेनी जुड़ गई। हालाँकि मेडीसिन विज्ञापन, मीडिया योजना, जन-संपर्क और बाहरी विज्ञापन जैसे कई कामों से जुड़ा था, पर कई ऐसे क्षेत्र थे, जिन्हें अब तक एक्सप्लोर नहीं किया गया था और उन्हें ही लॉज्च करना लारा ने अपना मकसद बना लिया। वह कहती हैं कि उस क्षेत्र में बिजनेस करना जहाँ हमारी उपस्थिति नहीं है, वहाँ बिजनेस फैलाना और अपने क्लाइंट्स को अपने ब्रांड्स को बढ़ाने में मदद करने के लिए उन्हें नए अवसरों का लाभ देना ही मेरा लक्ष्य है। मैं मेडीसिन को ऊँचाइयों पर देखना चाहती हूँ।



सोनल अग्रवाल

सी.ई.ओ., एकोर्ड ग्रुप—कोलकाता के मारवाड़ी परिवार से संबंधित सोनल के पिता बिश अग्रवाल ने भारत में सन् 1969 में पहली प्रोफेशनल रिकूटमेंट फर्म-एसोसिएटेड बिजनेस कंसल्टेंट खोली थी। ए.बी.सी. नाम से प्रचलित यह फर्म बहुत लोकप्रिय हुई। बिश अग्रवाल बहुत खुले विचारों के थे, इसलिए अपनी बेटी को पढ़ने के लिए उन्होंने विदेश भेजा। सन् 1993 में ब्रिटेन के लंदन बिजनेस स्कूल से एम.बी.ए. की डिग्री लेकर लौटींसोनल का पहला काम था जंबो ग्रुप के लिए एक सेक्रेटरी और उसके एक विभाग के लिए सी.ई.ओ. ढूँढ़ने का। शॉ वैलेस के अकाउंट को सँभालने के दौरान उन्हें बहुत बार मुख्य शहरों की यात्राएँ करनी पड़ीं, जिससे उनकी सोच में काफी विस्तार हुआ। जब यू.टी.आई. ने अपना ऑपरेशन आरंभ किया तो उन्होंने दो हफ्तों में लगभग 25,000 आवेदनों को देखा और डेढ़ महीने में 500 लोगों का साक्षात्कार किया। इसके बाद ही वित्तीय सेवा प्रदान करने के लिए एकोर्ड ग्रुप से जुड़ गई।

सन् 1967 में जनमीसोनल रिकूटमेंट के पहले परिवार से संबंधित सोनल एकोर्ड और ए.बी.सी. ग्रुप के भारत के काम को देखती हैं, जिसके ऑफिस दिल्ली, मुंबई व बंगलौर में हैं। आज एकोर्ड ग्रुप भारत की अग्रणी एजीक्यूटिव सर्च फर्म, सर्विसेस मीडिया, कंज्यूमर और रिटेल, टेक्नोलॉजी, इंजीनियरिंग और फाइनेंशियल सर्विसेस उपलब्ध कराने के साथ-साथ एक अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क का भाग भी है। सन् 1995 में वह एक बैंकर तरुण बाली से मिलीं और आज वह उनके पति हैं। वह ‘मैनपावर’ नाम की फर्म चलाते हैं।



पूजा शेट्टी देओरा

ज्वॉइंट मैनेजिंग डायरेक्टर, वॉकरॉवर मीडिया—पूजा शेट्टी देओरा मीडिया जगत् की एक जानी-मानी शख्सियत हैं। उन्होंने पुर्डे यूनिवर्सिटी, संयुक्त राज्य अमेरिका से मैनेजमेंट में ग्रेज्युएशन किया। इसके बाद अपने पिता मनमोहन शेट्टी के साथ उनके कार्यों में हाथ बँटाने लगीं। उनके पिताश्री शेट्टी भी फिल्म जगत् की एक नामचीन हस्ती हैं। आरंभ से ही महत्वाकांक्षी रही पूजा ने अपने पिता द्वारा स्थापित ‘एडलैन्स फिल्म्स’ को मल्टीप्लैक्स कल्चर की शक्ति दी। बाद में उसे रिलायंस के अनिल धीरूभाई अंबानी गुरुप ने खरीद लिया। इसके पश्चात् भी वे कंपनी के विस्तार में लगी रहीं। उन्होंने टी.वी. प्रोडक्शन हाउस ‘सिनर्जी’ को खरीदकर कीर्तिमान बनाया। यह वही प्रोडक्शन हाउस है, जिसने ‘कौन बनेगा करोड़पति’ जैसा सुपरहिट कार्यक्रम बनाया था।

वर्ष 2008 में पूजा शेट्टी देओरा को ‘वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम’ द्वारा ‘यंग ग्लोबल लीडर’ के रूप में नामित किया गया।

‘वॉकवाटर’ मीडिया ने पूजा को उद्यमशीलता के ठेठ गुरु सिखाकर इस क्षेत्र का गुरु बना दिया। वर्तमान में वह वॉकवाटर मीडिया के टेलीविजन प्रॉडक्शन डिविजन की प्रभारी व ज्वॉइंट मैनेजिंग डायरेक्टर हैं।





सेउना चौहान सलूजा

चीफ एक्जिक्युटिव, पारले एग्रो—सेउना चौहान पारले एग्रो की मुख्य कार्यकारी हैं। उनके पिता प्रकाश चौहान 800 करोड़ की पूँजीवाले पारले एग्रो गुरप के चेयरमैन और मैनेजिंग डायरेक्टर हैं।

सेउना को आरंभ से अपने पिता के साथ उनके उद्यम में हाथ बैठाने का मौका मिला। जब वह हाई स्कूल में अध्ययनरत थीं, तब इंडस्ट्री की प्रॉडक्शन व तकनीकी इकाइयों में घूम-घूमकर मौका मुआयना करती रहती थीं और उनकी गतिविधियों को उन्होंने अच्छी तरह अपने दिमाग में बिठा लिया था।

सेउना ने स्विट्जरलैंड से इंटरनेशनल मैनेजमेंट में बैचलर डिग्री प्राप्त की है। वर्ष 2002 में जब वह 26 वर्ष की थीं, उनके पिता प्रकाश चौहान ने उन्हें पारले एग्रो का मुख्य कार्यकारी (चीफ एक्जिक्यूटिव) बना दिया। वह मुसकराकर कहती हैं, “मैं परिवार में सबसे बड़े बेटे जैसी हूँ।”

मुख्य कार्यकारी के रूप में सेउना ने पारले एग्रो के प्रॉडक्शन, फाइनेंस, विज्ञापन और सेल्स से जुड़े विभागों में उनके ईंधन के रूप में कार्य किया। कई नव-प्रवर्तन भी उनके नाम हैं। पारले एग्रो के डायरेक्टर के रूप में उन्होंने फ्रूटी, एपी और एनजॉय जैसे उत्पाद अंतरराष्ट्रीय बाजार तक पहुँचाए। फ्रूटी को पेट बोतलों में भरकर बेचने का सबसे पहला विचार उन्हीं के मस्तिष्क की उपज है, जो मार्केट में सुपरहिट रहा।

अपने समय से आगे रहनेवाली सेउना ने अभिनेता विक्रम सलूजा से विवाह किया है और आज भी वह नवप्रवर्तन की राह पर अग्रसर हैं।





नंदिनी पीरामल

कार्यकारी निदेशक, पीरामल हैल्थकेयर लिमिटेड—नंदिनी पीरामल पीरामल हैल्थकेयर लिमिटेड, मुंबई की कार्यकारी निदेशक हैं। इसके साथ ही वह स्वास्तिक सेफ डिपोजिट एंड इनवेस्टमेंट लि. की भी निदेशक हैं। इसके पहले इसी कंपनी में अनेक पदों पर कार्य करते हुए उन्होंने इसके विस्तार को एक सकारात्मक दिशा प्रदान की।

नंदिनी ने बी.ए. (ऑनर्स) हर्टफोर्ड कॉलेज, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी से किया और एम.बी.ए. स्टेनफोर्ड ग्रेजुएट स्कूल ऑफ बिजनेस से। पीरामल हैल्थकेयर को यू.के. और कनाडा में विस्तार देने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही।

अपने कैरियर की शुरुआत नंदिनी पीरामल ने मेकिसने एंड कंपनी से की। वहाँ उन्होंने बिजनेस एनालिस्ट के रूप में पर्चेज एवं आपूर्ति मैनेजमेंट, ग्रोथ स्ट्रेटेजी और सूचना प्रौद्योगिकी रणनीतिक कार्यों में महती भूमिका निभाई, जो उनके आगे के लिए अच्छी आधारशिला बने। पीरामल फाउंडेशन को भी वह अपना पूरा योगदान देती हैं, जो गरीबों के लिए स्वास्थ्य व शिक्षा की दिशा में काम करता है। यह फाउंडेशन ग्रामीण रोजगार और युवा शक्ति को गति देने में सन्निहित है।

उद्यमी के रूप में वह पूरा उद्यम करती हैं और समाजसेवी के रूप में पूर्ण समर्पित समाज-सेवा।





मेघा घई पुरी

प्रैसीडेंट, विस्मिलग वुड्स इंटरनेशनल—बॉलीवुड के ख्यातनाम निदेशक सुभाष घई किसी परिचय के मोहताज नहीं हैं। मेघा घई पुरी उन्हीं की सुपुत्री हैं और अपनी प्रतिभा के बल पर उन्होंने भी लोगों के बीच एक प्रतिष्ठित मुकाम हासिल किया है।

‘परदेस’ फिल्म में अपने पिता के सह-निर्देशिका के रूप में कार्य करते समय मेघा का रुझान फिल्म के पोस्ट प्रोडक्शन की ओर आकृष्ट हुआ। इसके बाद उन्होंने लंदन के किंग्स कॉलेज से बिजनेस मैनेजमेंट में डिग्री ली। डिग्री लेने के बाद वह लंदन की मीडिया से संबद्ध एक वेबसाइट ‘ई-रेलिंग’ से जुड़ गई। इसी बीच सुभाष घई के मन में आया कि वे एक फिल्म स्कूल खोलें। उनके स्वप्न को हकीकत में बदलने के लिए मेघा वापस भारत आ गई और फिल्म स्कूल खोलने की दिशा में कार्य आरंभ कर दिया। कुछ समय बाद सुभाष घई का सपना ‘विस्मिलिंग वुड्स इंटरनेशनल’ के रूप में साकार हुआ, जो फिल्म, टेलीविजन और मीडिया आर्ट से संबद्ध बबई स्थित एक प्रतिष्ठित संस्थान बन गया है। मेघा घई पुरी को संस्थान का अध्यक्ष होने का गौरव प्राप्त है।



गायत्री रुझया

बिजनेस डवलपमेंट डायरेक्टर, पलाडियम शॉपिंग मॉल, मुंबई—बहुमुखी प्रतिभा की धनी गायत्री रुड्या मुंबई आधारित एक उद्यमी हैं, जो रेस्टोरेंट और होटल चलाती हैं, मूर्तिकार हैं और साथ ही इंटीरियर एवं फैशन से जुड़ी हैं। आज वह मुंबई के 200 करोड़ के एक शानदार शॉपिंग सेंटर पलाडियम (मॉल) की बिजनेस डवलपमेंट डायरेक्टर हैं। यह मॉल मुंबई के शंगरी-ला होटल में स्थित एक भव्यतम केंद्र है।

बचपन से ही गायत्री बहुमुखी रही हैं। विला टेरेसा कॉन्वेंट में पढ़ाई के दौरान वे खेल से लेकर अभिनय और गायन में बराबर सक्रिय रहीं। कॉलेज में पढ़ाई के दौरान उन्हें क्लिक हुआ कि वह आर्किटेक्ट बनें। जैसा कि वह स्वयं कहती हैं, ‘आर्किटेक्ट और इंटीरियर डिजाइन दोनों ही बड़े क्रिएटिव काम हैं, लेकिन इंटीरियर में काम करने की ज्यादा आजादी है।’

21 साल की आयु में फिनिक्स मिल्स के प्रबंध निदेशक अतुल रुड्या से उनका विवाह हुआ। उसके बाद वह उनके साथ अमेरिका चली गई और वहीं से एम.बी.ए. किया। एक साल बाद भारत लौटकर वह स्वयं कुछ करने की सोचने लगीं और थोड़े समय बाद उन्होंने अपने ही नाम से कपड़े डिजाइन करने आरंभ कर दिए। इसके बाद उनके एक के बाद एक स्टोर एनसेंबल, मिलेंज, स्काइजोन, मोगरा आदि खुलते चले गए।

अपनी दो बेटियों—शरन्या और तरिनि की दृष्टि में वह एक अति व्यस्त माँ हैं। उनके पास सामाजिक जीवन के लिए वक्त का अभाव है। लेकिन फिर भी वह अपनी बेटियों, अपने शौक रीडिंग और कुकिंग के लिए वक्त निकाल ही लेती हैं।

यही नहीं, अपने माता-पिता की इकलौती संतान गायत्री घर, व्यवसाय और अपने उत्तरदायित्वों के साथ-साथ एक बेटे की तरह अपने बुजुर्ग माँ-पिता का भी बखूबी ख्याल रखती हैं।

Published by

Vidya Vihar

1660 Kucha Dakhni Rai,

Darya Ganj, New Delhi-2

ISBN 978-93-5186-005-1

Indian Business Women

by Suman Vajpayee

Edition

First, 2012